

शङ्करदिग्विजय भाषा ॥

जिसमें

श्रीशङ्कराचार्य्यजी महाराजका जीवनचरित्र वर्णितहै.

जिसको

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्रीस्वामी रामकृष्णभारती शिष्य माधवानन्द भारती ने महात्मा और हरभक्तों व सब छोटे बड़ों के अवलोकनार्थ दोहा चौपाई आदि अनेक छन्द रीति से भाषा में उल्था किया

जो

महामहोपाध्याय श्रीपण्डित देवीप्रसाद साहब बरेश डिपुटीकलेक्टर जबकि उक्त पण्डित साहब गाज़ीपुर के डिपुटीकलेक्टर थे उनकी आज्ञानुसार प्रथमबार छापागया था

पांचवींबार

लखनऊ

सुपरिंटेंडेंट बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., के प्रबन्ध से
मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपा
सन् १६१६ ई०

१७ जुज़ २ वर्क़

शङ्करदिग्विजय भाषा का

विज्ञापनपत्र ॥

विदित हो कि माधवी शंकरदिग्विजय शान्तिरसमयी परम अद्भुत मनोहर काव्य है और ज्ञानप्रधान शंकरचरित्र है-विद्वानों को यह प्रबन्ध बहुत प्रिय है नाम लेते सब महात्मा इसकी स्तुति करते हैं-इस ग्रन्थ के माधुर्य्य और स्वाद का भाषा जाननेवालों को भी आनन्द होय एतदर्थ इस ग्रन्थ को चौपाई दोहा छन्द में श्रीस्वामी माधवानन्द भारती ने श्रीकाशीजी में बड़े परिश्रम से बनाया-इस में १६ अध्याय हैं और अनुमान ५००० श्लोक बराबर ग्रन्थसंख्या होगी-इस में कथा अति विचित्र और मनोहर है और इतिहास अपूर्व अति उत्तमता यह है कि जो श्रीशंकराचार्य्य महाराज का जिन जिन मतवादियों से शास्त्रार्थ हुआ उन सब के मत का संक्षेप और वैदिक सिद्धान्त जानाजाता है-प्रथम यह ग्रन्थ श्रीपण्डित देवीप्रसाद साहब डिप्टी कलक्टर बहादुर जो ज़िले ग़ाज़ीपुर के डिप्टी कलक्टर थे उन की आज्ञानुसार इस यन्त्रालय में छपा था सो हाथों हाथ बटगया-जो कि आजतक इस अनूपम ग्रन्थ का उल्था किसी भाषा में नहीं हुआ और इस ग्रन्थ पर सब छोटे बड़ेमहात्मा हरभक्तों की अभिरुचि देखकर द्वितीय वार अत्युत्तमतापूर्व्वक छापागया है और मूल्य भी बहुत थोड़ा नियत कियागया है जिस किसी की इच्छा हो यन्त्रालय के नाम मूल्य अथवा पत्र भेजकर मंगवा लेवें-यह पुस्तक मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने में स्थान लखनऊ और कानपुर व कोठी अजंटी देहली बड़े दरीबे और हिन्दुस्तान के बहुधा बड़े २ नामी शहरों के किताब बेचनेवाले सौदागरों से मिलसक्नी है—



शङ्करदिग्विजय भाषा ॥

श्लोक ॥

श्रीगुरुं परमानन्दं दक्षिणामूर्तिरूपिणम्। ज्ञानानन्दप्रदं शान्तं कृपा सिन्धुमहं भजे १ श्रीरघुपतिपर्य्यायमुदारं कृष्णनामसहितं गुणसारम्। भारतीतिप्रथितं सुखदारं नौमि गुरुं संसृतिभयहारम् २ सत्यं ज्ञानमनन्त मादिविधुरं नित्यं विभुं निष्कलं शान्तानन्दपयोधिमक्रियमजं शुद्धं तुरीयं समम्। यस्यानन्दलवेन सर्वमनिशं प्राणन्ति धात्रादिकं यो वेत्ता सचरा चरेषु नितरां ध्यायेम तं सर्वगम् ३ गणेशं श्रीहरिं दुर्गां रविं शम्भुं सरस्व तीम्। विधातारमहं वन्दे सुरेशप्रमुखान् सुरान् ४ भद्रगृहं भवदं रमणीयं भक्तियुतैरमरैः श्रवणीयम्। आशुतोषश्रीहरकमनीयं नौमि सदाशङ्करभज नीयम् ५ ब्रजवनितारातिदं सुखधामं निजमाधुर्य्यतृणीकृतकामम्। कृष्ण मनोहरमतिमभिरामं हृदयस्थं प्रणमाम्यविरामम् ६ श्रीमिथिलेशसुता पतिभूपं चेतनघनमानन्दस्वरूपम्। वन्देऽहं रघुवरकुलकेतुं रामविधुं भवसागरसेतुम् ७ श्रीकामदं लोकहितावतारं प्रकाशिताम्नायशिरस्सु सारम्। निवारितं द्वैतविमोहभारं नतोऽस्म्यहं शङ्करभाष्यकारम् ८ नारायणं विधातारं वशिष्ठं शक्तिमेव च। पराशरं मुनिं व्यासं शुकं गौ डाङ्घ्रिनामकम् ९ गोविन्दं शङ्करं पद्मपादं च श्रीसुरेश्वरम्। हस्तामल कसंज्ञं च तोटकं नौमि सर्वदा १० यो माधवो माधवपादसेवी स माधवो भारतिसंज्ञको यः। करोति वै माधवकाव्यभाषां तनोतु सानन्दमिथं जनानाम् ११ ॥

मंगलमूरति सिद्धि विधायक। विनवहुँप्रथमहिंश्रीगणनायक॥
श्रीगिरिजा जगजननि भवानी। चरणवन्दि विनवौं सुखखानी॥

वन्दौं दिनकर जासु प्रकाशा । सब जगकर तम करै विनाशा ॥
श्रीहरि विनवों तन मन वानी । महिमाजासु न जाय बखानी ॥
ब्रह्मादिक सब देव मनाई ।ऋषिमुनिकविलोगनाशिरनाई ॥
भाष्यकार वपुधर श्रीशंकर । मत्तबादि गज सिंह भयंकर ॥
बहु प्रकार वन्दौं कर जोरी । पद्मपाद पद वन्दि बहोरी ॥

दो० पुनि सुरेश हस्तामलक तोटक मुनिहिं प्रणाम ।
औरनहूं को करहुँ जे प्रभु सेवक गुणधाम ॥

श्रीशिव गुरु पितु मातु समाना । सबप्रकार ममहित भगवाना ॥
सब विद्या के ईश गोसाईं । चरण वन्दि विनवों सुरसाईं ॥
यद्यपि मैं अघ अवगुण राशी । तदपि नाथ बहुकृपा प्रकाशी ॥
जेहिविधि उर प्रेरण अनुसरहू । तथा मनोरथ पूरण करहू ॥
करहु कृपा जस मम मन भावै । मोहिंसनतवकीरति बनिआवै ॥
श्रीगुरुवर मम परम कृपाला । विश्वनाथ वपु दीनदयाला ॥
मम अघ अवगुणसब बिसराई । दीनजानि लीन्हो अपनाई ॥
करौं प्रणाम चरण शिरनाई । सबप्रकार जिन दीन बड़ाई ॥

दो० पुनिपुनि तासु चरणरज पावन करि निज माथ ।
मुदित हृदय वर्णन करौं श्रीशंकर गुण गाथ ॥

प्रभु यश अति पावन संसारा । महिमाजासु अगाध अपारा ॥
सो सब भांति सुमंगलकारी । सेवत जाहि मिलैं फलचारी ॥
पढ़े सुने नाशहिं अविवेका । निर्मलमन पुनिहोय विवेका ॥
मंगल मूल भक्ति उर आवै । संशयभ्रम कोउ रहन न पावै ॥
होय सगुण निर्गुण कर ज्ञाना । जानि परै उरगत भगवाना ॥
श्रुति शारद महिमा बहु गाई । सो नहिं मोपै वरणि सिराई ॥
सब प्रकार सुखधाम सुहावा । धन्यसोनर जेहिके मनभावा ॥
शम्भुविजययश परम सुहावन । मुनिवर्णित सुरनर मनभावन ॥
बहु प्रकार गायो जग माहीं । परमरुचिरजेहिकीमितिनाहीं ॥
गावहिंगे बहु सुजन बहोरी । जिनहिंशम्भुपदप्रीतिनथोरी ॥

माधव बुधवर परम उदारा। तिनगायो प्रभुगुणगहिसारा॥
कविता करि बहु गुण दर्शावा। कहिनजायसबभांति सुहावा॥
अति गम्भीर सरस सुखदाई। करहुँ एकमुख कवनि बड़ाई॥
सो प्रबन्ध बुध अति आदरहीं। नामलेत अस्तुति सबकरहीं॥
शंकरविजयसार तेहि नामा। चन्द्रकलाधरगुण सुखधामा॥
सो जेहि दिनते मैं सुनि पावा। दिनप्रति प्रीतिलाभसरसावा॥
समभ्कनयोग मोरि मतिनाहीं। तदपिभई अतिरुचिमनमाहीं॥
कीन्ह यथामति तासु विचारा। नाथकृपा सब काज सवांरा॥
कछु २ बुधि प्रवेश करि पावा। उतनेहिंसों उर आनँद छावा॥
दो० काशी वास आश बहु मनमहँ कीन्ह निवास।
पूजी नहिं सो कर्मवश जहँ तहँ रह्यो प्रवास॥
विश्वनाथ अब पूरण कीन्हा। अभिमतवरकरुणाकरिदीन्हा॥
इहां आप पुनि कीन्ह विचारा। विजयसारकरमतिअनुसारा॥
बार बार अति आनँद पाई। यह तरंग मेरे मन आई॥
भाषा महँ यह जो बनि जाई। तौ लोगन आनँद अधिकाई॥
देव गिरा जिनकी मति नाहीं। शिवचरित्रकी रुचिमनमाहीं॥
तिनहूं को सुख होय घनेरो। भयो मुदित जैसो मन मेरो॥
सुनियतकोउबुधजनअसकहहीं। निजउरविमलयुक्तियहगहहीं॥
देव गिरा भाषा नहिं कीजै। ऊंचे को पद नीच न दीजै॥
मैं अपने मन कीन्ह विचारा। सोइऊँचो जहँप्रभुयशप्यारा॥
देव गिरा महिमा अधिकाई। प्रभु सम्बन्ध न आन उपाई॥
देव गिरा रस ग्रन्थ घनेरे। ते न होहिं भवसागर बेरे॥
दो० वेद बहिर्मत ग्रन्थ बहु देव गिरा दर्शाहिं।
हृदय मलिनता हेतु जे बुध आदर तहँ नाहिं॥
संस्कृत प्राकृत अरु ब्रजभाशा। जहँजहँहरिहरचरितप्रकाशा॥
दुखनाशक आनँदप्रद सोई। वह निश्चय बुधवर मनहोई॥
जिमि सविता सबठौर प्रकाशा। करहिंलोकसुखअरुतमनाशा॥

तिमि हरिहर यश परमउदारा । ज्ञानप्रकाशक उर तम टारा ॥
तेहि सम्बन्ध सकल शुभ होई । गिरा दोष गुण गनै न कोई ॥
देवगिरा यद्यपि अतिपावनि । पायनाथयशअधिकसुहावनि ॥
पुण्य पाठ नहिं कछु सन्देहा । सब बुधजनकर सम्मतएहा ॥
जिन लोगनकर श्रमतहँ नाहीं । प्रभुचरित्रकी रुचिमनमाहीं ॥
तिनके हितबुधजन श्रमकरहीं । सबछरुभार शीशनिजधरहीं ॥
महूंहोहुँतिनकरअनुगामी । नहिंप्रियजिनहिंतिनहिंप्रणमामी ॥
कौन वस्तु असि है जग माहीं । सुधा हलाहल सम जो नाहीं ॥
भोगिहिघृतअतिशयहितहोई । ज्वरपीड़ितकहँ विषसमसोई ॥
शशिरविदेखि सबहि सुखहोई । कमलउलूकहि विषसमसोई ॥
दारा युक्त गृही जब होई । होय कर्म अधिकारी सोई ॥
नारि विलास यती मन भावा । सुगतिधर्मसबतबहिं नशावा ॥
ऐसेहि बहुतन को सुखकारी । यहु यश बहुलोगन मुदहारी ॥

सो० को प्रकट्यो जगमाहिं जो सबको सुखप्रद भयो ।
तथावस्तु कोउ नाहिं हितसबकहँ जग होयजो ॥
तिमि हरयश मुदहार बहुतनको सुखप्रद न यह ।
यद्यपिकह्यो श्रुतिसार कुपथपरायण विषसरिस ॥

राग द्वेष जे मन नहिं धरहीं । हरिहरभक्ति सदा अनुसरहीं ॥
तिनकहँ सुखदायक यश एहा । जिनहिं शम्भुपद परमसनेहा ॥
अथवा जे निजजन हितकारी । उमानाथ शङ्कर मदनारी ॥
विष भोजन अहिभूषण कीन्हा । चिता भस्मकहँ आदर दीन्हा ॥
सब गुण हीन मोरि यह वानी । जन परिहास परमरससानी ॥
निजयशलखिनिर्मलयहिमाहीं । गहिहैं पितुसमअचरजनाहीं ॥
यहिप्रकार निज मनहिं दृढ़ाई । सबकहँबहुविधिविनयसुनाई ॥
बहुरि वंदि गुरुपद सुखदाई । शिवकीरति वरणौं मनभाई ॥

सो० माधवरचित प्रबन्ध तेहि कहँ माधव भारती ।
भाषा करै निबन्ध क्षमैं चपलता बुध सकल ॥

अथ ग्रन्थारम्भः ॥

दो० करि प्रणाम परमेश्वरहि भारति तीरथ रूप।
बृहद्विजय के सार को संग्रह करौं अनूप ॥
घटसमूह गजगण अरु पर्वत। देखि परैं छोटेहु दर्पणगत ॥
तैसेहि मम लघु संग्रह माहीं। देखहु शम्भुविजयपरिछाहीं ॥
जिमिअतिमधुरस्वादुयुतभोजन।तेहिमहँरुचिबाढ़तहितसज्जन॥
जेहिविधि चाखतवस्तुसलोनी। तेहिसम रुचिउपजै तहँदूनी ॥
तिमिप्राचीनविजयअतिसुन्दर। हृद्य पद्य गम्भीर मनोहर ॥
तेहि महँ रुचिवर्द्धन हित एहा। देखहिंगे बुध सहित सनेहा ॥
गायो वेद पुराणन जोई। मम कविता मुद पावहु सोई ॥
जैसे कमलनयन घनश्यामा। रमानाथ पय सागर धामा ॥
गोपिनको दधिदूध लियो हरि। प्रीतिप्रतीतिदेखिकरुणाकरि ॥
ममवाणिहु शिवकहँसुखकारी। ह्वैहै यही रीति अनुसारी ॥
*क्षीरसिंधु विवरीसों निकरो। अमृतप्रवाहमधुररस अगरो ॥
तेहिसोंअधिकमधुरयशहरको। मंडन सहसानन सुख वरको ॥
सुखदायक जग गुरु शंकरको। अतिपावनयशगिरिजावरको ॥
दो० निजउरपावनहोनहित सोइहरयश मुदखानि।
वरणौंनिजमतिअनुहरित शिवशंकरउरआनि॥
पुनि संदेह होत मन मेरे। कहां विशद गुण शंकरकेरे ॥
दशदिशि कूल खननपरवीना। दिगलंघनकी कला धुरीना ॥
फूली जो बसंत ऋतु पाई। ऐसी वर मालती सुहाई ॥
परिमल तासु रुचिरअपहरहीं। हरगुण निजभक्तनमुदकरहीं ॥
कहँ मैं तदपि कृपा युत हेरनि। अमृतभरीचितवनिसुखप्रेरनि॥
कृपा कटाक्ष केर बल पाई। भई योग्यता की रुचिराई ॥
धन्य गनत अपने को जे जन। रहे विवेक शून्य वे तन मन ॥
जे मानैं अपने को सज्जन। चिह्नसकलजिनकेज्योंदुर्जन ॥

---

* सूक्ष्म प्रवाह ॥

लक्ष्मी नाच देखि मतवारे। ते नर रहे मोहिं बहु प्यारे ॥
अधम कथा तिनअधमनकेरी। मैं वर्णन कीन्हीं बहुतेरी ॥
शिव यश सागर धोवहुँ वानी। सो मल छुटै मिटैमनग्लानी ॥
बंध्यासुत खरि शृङ्ग समाना। क्षमा शूरतादिक गुण गाना ॥
पांवर नृप कीरति विस्तारी। दुर्वासित मैं गिरा हमारी ॥

दो० त्रैलोकी रँग अस्थली कीरति नटी समानि।
नाचत चंदन कन गिरे सो राखे उर आनि ॥
तेहि सुगंध निज गिराकी करि दुर्गंध सुदूरि।
भाष्यकार महिमा कहौं जो उरहै भरिपूरि ॥

माधव कविता वर संताना। सोई भयो सुर विटप समाना ॥
कुसुम रूप व्याहार प्रयोगा। विधु शेखर पदपूजन योगा ॥
देव सुखद सुरतरु आमोदा। सुमनन कहँ यह देइ प्रमोदा ॥
मृगमदअनुमोदन जेहिकीन्हा। चंदनहूं अति आदर दीन्हा ॥
अभिनन्दन मंदार करत नित। जाहिसराहत केसर अतिहित ॥
नूतन कालिदास बुध वानी। दोषरहित सबशुभगुण सानी ॥
ऐसेहु वाणी कर अपमाना। कुकविकरहिंगे मम अनुमाना ॥
उत्तम धेनु यवन जिमि पाई। करहिं तासु अपकार अघाई ॥
अथवा हैं जग साधु सयाने। दीनदयालु सुहृद गुणसाने ॥
सज्जनता सरि क्रीड़ा करहीं। परगुण देखि मोद मनभरहीं ॥
सुकविभणित मुक्तामणिजानी। निजउरधरहिं सदासन्मानी ॥
अथवा दयासिंधु श्रीशंकर। होहु प्रसन्न कृपा रत्नाकर ॥
कछु चिंताकर अवसर नाहीं। वृथा विकल्प करौं मनमाहीं ॥

दो० शिवगुण रचना करत कोउ एकचरणमें भग्न।
कोउ बनाय कै दुइ चरण ह्वैगे चिंता मग्न ॥
तेहिकीरति को मैं कह्यो चाहतहौं मतिमन्द।
जिमि हाथन पकरो चहै लघुबालक नभचन्द ॥

तैसोइ है मम निश्चय एहा। साहस देखि होत संदेहा ॥

यद्यपि मैं यहिलायक नाहीं। तदपिप्रतीति होतिमनमाहीं॥
यती राजकी कृपा निहारनि। जो प्रसिद्धहै अधम उधारनि॥
क्षीरसिंधु कल्लोल विलासा। चितवनिरुचिरतासुपरिहासा॥
करति सदा मूकन वाचाला। सो मम ऊपर कीन्ह कृपाला॥
तेहितें दुर्घटहू यह आसा। पूरी ह्वैहै विनहिं प्रयासा॥
शिवयश वर्णन जनित उदारा। सुकृतबढ़ोबहु अम्ब तुम्हारा॥
शारद देवि विनय सुनि लेहू। अभिमत वर करुणाकरि देहू॥
मृत्युञ्जय जब नृत्य कराहीं। जटामुकुटते तब चलिजाहीं॥
सुरसरि धारा के बहु यूथा। कोलाहल कल्लोल वरूथा॥
तासु लहरि मदखण्डनकारी। तव प्रागल्भ्य मनोहर मारी॥
निज व्याहार उदार प्रवाहा। परमरुचिरकविजनजेहिचाहा॥
मम जिह्वा सिंहासन ऊपर। देवि शारदा लाय करो थिर॥
यहविनतीसुनि शारद कहही। ऐसीहठ केहि कारण गहही॥
कहँ शङ्करके चरित उदारा। कहँ मति मोरि न पैहौं पारा॥
बहुतकालकर मम यश जोरा। तुम चाहत समुद्र महँ बोरा॥
असकहि ब्रह्मलोक समुहानी। कविहठकरि पुनि प्रेरितवानी॥
ऐसो अचरज रूप बड़ेरो। धन्य गुरुत्व जगतगुरु केरो॥

दो० पुनि चिन्ता यह होय मन कलिके जे कविकूर।
तिनके वश मो परैगी मम कविता सुख पूर॥

रूखे आखर जिनहिं सोहाहीं। अन्वय बड़ीदूरि चलिजाहीं॥
एकाक्षरी कोश जब जानैं। तब उनको कछु अर्थ बखानैं॥
औणादिक प्रत्यय पुनिलावहिं। पद यङंतके कठिनदिखावहिं॥
दुरवबोध पद विषम बनावें। कष्ट कल्पना विन नहिं भावें॥
तिनके वश मम कविता ऐसी। मृगी किरातन के वश जैसी॥
पुनि मनकहँ यहु धीरज आवा। संशय भ्रम सब दूरि बहावा॥
शंकर जेहि कविता के नायक। पूजनीयपद जनसुखदायक॥
परम शान्तिरस जेहिकर भूषन। हैं शृङ्गार प्रमुख उपसर्जन॥

महा अविद्या क्षय फल जासू। व्याससमान अचलकवितासू॥
सो कवि धन्य धन्य हैं वे जन। पढ़ैं सुनैं समुझैं हर्षित मन॥
प्रथम सर्ग भूमिका सोहाई। शिवअवतार कथा पुनिगाई॥
जेहिविधि और देव अवतारा। तिसरे महँ सो चरित उदारा॥
दो० सातवर्ष लौं जे किये शङ्कर चरित अपार।
चौथे महँ तिनको भयो भली भांति विस्तार॥
जेहिविधिआपु लीन्हसंन्यासा। सो पंचममहँ कीन्ह प्रकासा॥
शुद्धातम विद्या श्रुति गाई। भवसागर की सेतु सुहाई॥
लोपी काल पाय बहुतेरा। छठे भयो थापन तेहि केरा॥
व्यास समागम सप्तम गायो। अष्टम मण्डन वाद सुहायो॥
नवयें भारति साथ विवादा। सो सब वरण्यों शुभसंवादा॥
राजदेह महँ कीन्ह प्रवेशा। दशम सर्ग तेहिकर निर्देशा॥
भैरव नाम कपालिक जीता। एकादश सो चरित पुनीता॥
हस्तामल तोटक जिमि पाई। शरण कथा द्वादश दर्शाई॥
अध्यातम विद्या विस्तारा। वार्त्ताकलऊ परम उदारा॥
पहुँचो जेहि प्रकार सरसाई। कह्यो त्रयोदशमहँ समुझाई॥
पद्मपाद कर तीरथ गमनू। कह्यो चतुर्दशमहँ भवशमनू॥
दिशाविजयकीन्हीं जिमिशंकर। पंद्रह में सो चरित मनोहर॥
जेहिविधि शारद पीठ निवासा। षोड़शमहँ सो करौं प्रकासा॥
दो० यहिविधि षोड़श सर्गमें कहिहौं शिव गुणग्राम।
कलिमलनाशनसुखकरन दायकसबमनकाम॥
नाना प्रश्नोत्तर युत भूरी। कहौं सो शङ्कर कीरति रूरी॥
बुधजन आनँद हेतु सुहावनि। शम्भुकथावरणौंअतिपावनि॥
गिरिकैलास पुराणन गायो। महादेव को धाम सुहायो॥
एकसमय शिव दयानिधाना। बैठे ज्ञान धाम भगवाना॥
देव समाज तहां चलिआई। करिप्रणाम बहुविनय सुनाई॥
शिवहि प्रसन्नदेखि हर्षित मन। अभिमतसिधिमानीसबदेवन॥

दो० अन्तर्यामी नाथ तुम सब जानहु भगवान।
तदपि हमारी यह विनय सुनिये कृपानिधान॥

देवन हित जो परमानन्दा। बौद्धरूप प्रभु धस्यो मुकुन्दा॥
दनुज वंचना हेतु बनाये। ये आगम श्रीनाथ चलाये॥
तिनको पढ़िपढ़ि जैनअपारा। व्यापि गये ते अब संसारा॥
धरणि जैन मय अब दर्शाई। जिमिरजनीमहँ तमसरसाई॥
वेदन को ते खण्डन करहीं। वर्णाश्रम के धर्म न गनहीं॥
विप्र जीविका वेद बखानैं। वेदविहित कछुकर्म न मानैं॥
तिनके संग दोष नर नारी। सब पाखण्डी भे मदनारी॥
सन्ध्यादिक कोउ कर्म न करहीं। नहिंसंन्याससमाहिं मनधरहीं॥
करहु यज्ञ असकहै जो कोई। मूंदहिं कान पीर जनु होई॥
जब यह दशा भई सुरसांई। क्रियाकौनिविधिहोहिं सहाई॥
यज्ञ होत महिमण्डल नाहीं। कत भुज हमरो नाथ वृथाहीं॥
विष्णु शिवागम पन्थाधारी। चक्रलिङ्ग चिह्नित भे भारी॥
यहिविधि वैदिककर्मनभजहीं। दुर्जनजेहिविधिकरुणातजहीं॥
अन्य भाव वर्जित श्रुतिरानी। पुरुषोत्तम पहँ जाय भवानी॥
सती नारिजिमिपतिपहँजाही। दुर्जन मग महँ दूषत ताही॥

दो० तिमिं श्रुतिदूषक बौद्ध शठ जगमहँ भये अनंत।
पुरुषोत्तम अब करि कृपा करिये तिनको अंत॥
कापालिक द्विज शिर कमल भैरव चरण चढ़ाय।
कौन लोक मर्याद वह जो दूषत न अघाय॥

और बहुत मत कण्टक रूपा। कलिमें प्रकट भयो सुरभूपा॥
जिन में पगु धरतहि सुरराया। पावत नरबहु दुख समुदाया॥
लोकनाथ जग रक्षण हेतू। दुष्टनमथि पालहु श्रुतिसेतू॥
जेहि महँ उभयलोक सुखपावैं। जन तुम्हार पावन यश गावैं॥
अस कहि रहिगे मौन सँभारे। गिरिजापति तबवचनउचारे॥
मानुष तनु धरि काज तुम्हारा। करिहौंबहुविधिचरितअपारा॥

दुष्टाचार सकल अपहरिहौं। धर्मस्थापन सबविधिकरिहौं॥
ब्रह्मसूत्र की भाष्य सोहाई। रचिहौं सब आशय दर्शाई॥
यतीराज शंकर अस नामा। होइहौं तीनलोक अभिरामा॥
द्वैत अविद्या मूल सघन तम। तासुविनाशकतरुणभानुसम॥
ऐसे चारि शिष्य मम नीके। चारिभुजा जिमिकमलापीके॥
तुमहूं सकल देव महि जाई। मम अनुशरणकह्योमनलाई॥
दो० तुम्हरे सब अभिलाष तब पूरण नहिं सन्देह।
असकहिसम्मुखओर तब चितयेसहितसनेह॥
पय सागर कल्लोल समाना। वेकटाक्ष दुर्लभ जग जाना॥
जिमि सविताकर पंकज पावा। लहिगुह उरआनँद सरसावा॥
तिनहिंपायसम्मुखप्रमुदितअस। विधुकरपायपयोधि हर्षजस॥
विधुशेखर सुत सन तब बोले। प्रकटे निर्मल दशन अमोले॥
उडुपतिकर सम तासु प्रकासा। सुर चकोर हर्षित चहुँपासा॥
सुनहु तात मम वचन उदारा। जग उद्धार हेतु सुख सारा॥
कर्म उपासन तीसर ज्ञाना। कांडतीन सब वेद बखाना॥
वेदन को अस्थापन होई। द्विज उद्धार गनो तुम सोई॥
जबहिं विप्र रक्षा बनि आई। सब जग रक्षा होय सोहाई॥
विप्र धर्म के मूल धुरीना। वर्णाश्रम तिनके आधीना॥
जानि हमारी यह अभिलासा। विष्णु शेष आये मम पासा॥
उनको यह मैं दीन्ह सिखावन। थापहुमध्यमकाण्ड सुहावन॥
दो० मम आज्ञा अनुकूल द्वौ जन्म लियो जगजाय।
मध्यकांड सेवत सदा मुनि व्रत धरि मनलाय॥
पातंजलि संकर्षण नामा। योगागम कर्त्ता गुण धामा॥
ज्ञान कांड कर मैं उद्धारा। करिहौं लै मानुष अवतारा॥
तुमहुँतात जानत ममध्वनिको। सूत्रजाल सागर जैमिनिको॥
तेहि कहँ चंद्र होहु तुम जाई। विप्र वेद की करहु सहाई॥
कर्मकांड को करि उद्धारा। वैदिक पथको करहु प्रचारा॥

धरि अवतार सुजनजन बोधी। जितहु जैन जे वेद विरोधी॥
यहि में अति कीरति तव होई। सुब्रह्मण्य कहिहैं सबकोई॥
तव सहाय हित श्रीचतुरानन। मण्डननाम धरहिंगे नरतन॥
इन्द्रहु लेहैं जन्म धरणि पर। नाम सुधन्वा प्रबल राजवर॥
विधि सन्मानयोग शिव बानी। राखी शीश सुधासम जानी॥
हर आशय अनुसार सुरेशा। राजा भयो जाय प्रभु देशा॥
प्रजा धर्मयुत पालन कीन्हा। महितलस्वर्गसरिसकरिदीन्हा॥
देखि राजधानी की शोभा। अमरावती केर मन लोभा॥
दो० यद्यपि है सर्वज्ञ नृप जैन धर्म्म मन दीन्ह।
कृत्रिम श्रद्धायुक्त ह्वै तिनको मन हरि लीन्ह॥
गुह की बाट लखत सचुपाये। पुनि षण्मुख भूतल महँ जाये॥
भट्टपाद भयो नाम मनोहर। दिग्वनिता को भूषण सुंदर॥
वेदाशय जैमिनि मुनि सूचित। भट्टपाद प्रकट्यो करिभूषित॥
जिमिकछुअरुणकरहिउजियारा। पुनि सविताकोतेजअपारा॥
करत दिशा जय विप्र महीपा। गये सुधन्वा नगर समीपा॥
आगे जाय नृपतिवरलीन्हा। विधिवतपूजिसुआसनदीन्हा॥
दै अशीश बैठे कनकासन। जुरे सभा बहु जैन महाजन॥
गुह सों सभा विराजति ऐसी। स्वर्ग बनी सुरभीसों जैसी॥
सभा निकट तरुवर पर सुंदर। बोली कोकिल शब्दमनोहर॥
सो सुनि भट्टपाद मुनि ज्ञानी। बोले नृपहि सुनाय सुबानी॥
मलिननीच बायस कुलपापी। श्रुतिदूषकअतिकठिनप्रलापी॥
अस कुसंग पिक तू तजि पैहै। तबहिं प्रशंसा योग कहैहै॥
तात्पर्य गर्वित यह बानी। बौद्धमण्डलीसमुझिरिसानी॥
जिमिविषधर धोखे दबिजाई। तुरतहि सो अँग लेत चबाई॥
बौद्ध कुमत जो वृक्ष समाना। युक्तिकुठारकाटि विधिनाना॥
बौद्ध ग्रन्थ इंधन इवलाई। तिनकी क्रोधानल सरसाई॥
तेहिक्षण सभा मनोहर ऐसी। सोहत पुष्करणी छवि जैसी॥

दो० बौद्ध अरुण मुख क्रोधसों रक्तकमल छविदेत।
सभा सरोवरसी मनहुँ देखत मन हरिलेत॥

यहिविधि लागोहोन विवादा। प्रश्नोत्तर महँ बढ़ो विषादा॥
कोउ निज पक्षारोपण करहीं। कोउतेहिकाखंडनअनुसरहीं॥
थापन खण्डन होत परस्पर। तहँनिर्घोषभयोअतिशयतर॥
कर्कशतर्क वज्र जनु जाना। बौद्ध पर्व्वताकार समाना॥
कटेपक्षगिरि ज्यों गिरिगयऊ। चित्रसमान मौनयुत भयऊ॥
दर्प भग्न जैनन कर देखी। वेद महातम वरणि विशेखी॥
राजहि बोध कीन्ह द्विज हंसा। बहुप्रकारकरि तासु प्रशंसा॥
तब राजा बोल्यो शिर नाई। विजय आप कीन्हीं मनभाई॥
जीति हारि विद्या आधीना। मत निश्चय तबहोयप्रवीना॥
गिरै शिखर पर्वत सों जोई। अंग हानि पुनितासु न होई॥
तेहिको मतनिश्चय मैं जानौं। पुनितेहिकोनिजगुरुसममानौं॥
राज गिरा सुनि बौद्ध परस्पर। देखत मुख कोउ देइ न उत्तर॥
द्विजवरकरि वेदनको ध्याना। गिरिशिरचढ़ियहवचनबखाना॥

दो० वेद प्रमाण होहिं जो तौ न होय मम हानि।
कूदे गिरिवर शिखरते मुनिवरविगत गलानि॥

गिरिशिरते द्विज आवतदेखी। मनविस्मितसबप्रजाविशेखी॥
यह अपने मन करहिं विचारा। नृप ययाति सुरपुर पगुधारा॥
सुकृत हानि महिमंडल आये। दुहितासुतानिज पुण्यपठाये॥
सोऊ सुकृत रह्यो अब नाहीं। पुनिययातिआवतिमहिमाहीं॥
यहिविधिलोग विकल्पकराहीं। आयगिरे मुनिमहितलमाहीं॥
तूल पिण्ड सम तासु शरीरा। गिरोधरणि नहिंभयकछुपीरा॥
शरण वेदके भयबुधि जिनकी। रक्षा क्यों न करै श्रुति उनकी॥
भट्टपाद कर यह यश भारी। करतभयोदशादिशिउजियारी॥
सुनिसुनिझुण्डझुण्डद्विजआये। मेघघोष जिमि मोर सुहाये॥
राजा द्विज कहँ अक्षत देखी। श्रुतिमहँ श्रद्धाकीन्हविशेखी॥

दुष्ट संग दूषित मन जानी। धिगधिगमोहिंबोल्योबहुबानी॥
नृपति गिरा सुनि जैनन कहेऊ। मतनिर्णयअबहीं नहिंभयऊ॥
मन्त्र मणी औषध सो राजा। तनको कछुनहिंहोयअकाजा॥
जब प्रत्यक्ष प्रमाण न मानी। तब सकोप बोल्यो नृप बानी॥

दो० जो पूंछौं मैं दुहुन सों उतरु न आयो जाहि।
उपल यन्त्रमों घालिकै वधकरिहौं मैं ताहि॥

ऐसी कठिन प्रतिज्ञा कीन्हा। एकसर्प घटमों धरि दीन्हा॥
पुनिमुखबांधिसभामहँ लायो। सबहिनकोवहकलशदिखायो॥
हे द्विजगण हे जैन घनेरे। जे तुम जुरे सभा महँ मेरे॥
वरणौ कौनिवस्तु घट भीतर। बोले कालिह देहिंगे उत्तर॥
यहिविधिनृपकहँ विनयसुनाई। गये जैन अरु द्विज समुदाई॥
करन लगे द्विजवर तप गाढ़े। कंठ प्रमाण वारि महँ ठाढ़े॥
कमलसमानतरणिअनुरागी। भजनकीन्हनिशिभरिसुखत्यागी॥
भक्ति विवश सविता तबआई। विप्रन उत्तर दीन्ह बताई॥
घट निश्चयकरि तथा जैनसब। नृप समीप गवने दूनहु तब॥
जैनन प्रथम कह्यो यह उत्तर। है भुजंग यहि घट के भीतर॥
जैनभणित वाणी सुनि द्विजवर। राजाकहँ दीन्हो यह उत्तर॥
शेष शयन शायी भगवंता। कलश विराजैं प्रभु श्रीकंता॥
भूसुर वचन सुनो जब राजा। श्रीहतमुखयहिभाँतिविराजा॥

दो० सूख सरोवर निकट जिमि सारस वदन मलीन।
तैसेहिं नृपकर मुखभयो तेहिअवसर छविहीन॥

राजहि दुखित देखि नभबानी। होत भई अतिआनँद सानी॥
महाराज कछु संशय नाहीं। जो कछु विप्र कहैं तुमपाहीं॥
द्विजवर वचन सत्यकरि लेखो। घटमुखखोलि सभामहँदेखो॥
उरगत सब संशय परिहरहू। अपनि प्रतिज्ञा पूरण करहू॥
सुनि नभगिरा दीख घटराजा। श्रीमधुसूदन रूप विराजा॥
इमि हरि मूरति तहँ नृप पाई। जिमिसुरपतिलहिसुधासुहाई॥

और वस्तु धरि औरहि पाई। तब नरपति सन्देह बिहाई॥
श्रुतिरिपुगुणवधकीमतिकीन्हीं। तुरतमहीपति आज्ञादीन्हीं॥
सेतुबन्ध सागर अति पावन। उत्तरदिशि हिमशैलसुहावन॥
उभय मध्य मम सेवक जोई। जैनन को मारै सब कोई॥
ममआज्ञासुनि जेहि नहिंमारे। तिनको वध है हाथ हमारे॥
गुरुसमान जिनकोनृपजाना। तिनकरवधकेहिविधिअनुमाना॥
यह संदेह न कोउ उर आनौ। तहँ परिहार रुचिर यहजानौ॥
यद्यपिअति अपनो प्रियहोई। बड़े दोष देखे पुनि सोई॥
दो० निश्चय वध के योग सो होय न कछु संदेह।
परशुराम जननी हनी तजि उर को अति नेह॥
भट्टपाद अनुसारी नृपवर। मारै जैन धर्म दूषक तर॥
योगविनाशक विघ्न अपारा। हनै योगि जिमि तत्त्वअधारा॥
यहि विधि दुष्ट भये संहारा। वेद धर्म कर कीन्ह प्रचारा॥
यथा निशातम जब सबनाशै। सबदिशिसविता तेजप्रकाशै॥
भट्टपाद हरि जग उजियारे। जैन मतंगज सब संहारे॥
वेद विटप शाखा चहुँ पासा। बड़ी विघ्नबिनकरहिंप्रकासा॥
यहिविधिषण्मुखधरिअवतारा। वेद कर्म जहँ तहँ विस्तारा॥
छं० विस्तार जब चहुँदिशिकियो गुहवेदधर्म सुहावनो।
अज्ञान सिंधु अपार बूड़त देखि हर जग भावनो॥
अद्वैत ज्ञान सुपोत द्वारा पार को अवसर भयो।
यहशोचिनिजअवतार निश्चय चंद्रशेखरउरठयो॥
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री ७स्वामिरामकृष्ण-
भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेशङ्करदिग्वि-
जयेउपोद्घातवर्णनपरःप्रथमस्सर्गः १॥

श्लोक ॥

श्रीशङ्करं ज्ञानघनं गुहाशयं बोधैकगम्यं प्रणतानुरञ्जनम्। महेश्वरं मानसरोगनाशनं सदा बुधानन्दकरं भजाम्यहम् १ प्रणमामि सदा बोध रूपिणं गुरुमीश्वरम्। सुखदं क्लेशहर्तारमहं हरिहरात्मकम् २ ॥

सो० वन्दौं शम्भु दयाल भक्त कल्पतरु भव शमन।
तजै राम महिपाल जासु बोध आनन्द हित ॥
दो० बिनवौंनाथ कृपालचित सेवकहित सुखधाम।
प्रकटभये जग बोध लागि पूजे जन मन काम ॥

वेद धर्म फैलो यहि भाँती। तब जो कीन्ह मदनआराती ॥
सो वरणौं निजबुधि अनुसारा। जैसे हर लीन्हो अवतारा ॥
केरल देश पुनीत सुहावा। वृषपर्वत जहँ अति मनभावा ॥
पूर्णा नाम नदी तट श्रीहर। लिंग रूप प्रकटे गिरिवरपर ॥
तहाँ राजशेखर अस नामा। रह्यो एक राजा गुण धामा ॥
निजप्रकाश प्रभुताहिजनायो। सपनेपुनिपुनि दरशदिखायो ॥
नृप बनवायो तब अतिसुन्दर। चन्द्रमौलिकर अद्भुत मन्दर ॥
पूजन को प्रबन्ध सब कीन्हो। सबविधिहरचरणनचितदीन्हो ॥
शिव मन्दिर के निकट मनोहर। कालटि नामरह्यो पुर सुन्दर ॥
द्विज प्रधान बहु नगरसुहावन। ईतिभीतिवर्जित अतिपावन ॥
तहां बसहि इक पण्डितराजा। तासुनाम विद्या अधिराजा ॥
जिनकी रीतिप्रीति शुभ देखी। हरमनमें रुचि भई विशेखी ॥
इन के घर लेहौं अवतारा। वृषवासी हरहृदय विचारा ॥
उन के पुत्र भयो सुखधामा। तेजधाम शिवगुरु असनामा ॥

सो० शिवसमान जेहिज्ञान वचन बृहस्पति के सदृश।
सद्गुण परमनिधान यथा नाम गुण वैसई ॥

जबहिं भयो उनकर उपनयना। गुरुसमीपगवने गुणअयना ॥
गुरुसेवा महँ अति मन धरहीं। विहितअन्ननितभोजनकरहीं ॥

साँझ प्रभात हुताशन पूजा । करहिं वेद अभ्यास न दूजा ॥
पढ़े नेम युत तिन सब वेदा । पुनि२ करहिं विचार न खेदा ॥
वेदन महँ जे कर्म बखाने । समुझिनजाहिंअर्थबिनजाने ॥
अर्थ सहित बहु कीन्हविचारा । गुरु दयालु बोले इक बारा ॥
पढ़े वेद सब अंग सहीता । चिंतत तुमहिं काल बहुबीता ॥
हो मम भक्ति कर्म मन वचना । मम सेवा भूले घर अपना ॥
जाहु तात अब तुम निज गेहा । सबकरतुमपर अधिकसनेहा ॥
दरश लालसा बहु करि पूरी । हरहु वियोगजनित दुखभूरी ॥
अब विलम्बकर अवसरनाहीं । कारण तात कहौं तुमपाहीं ॥
दुसरे पहर विचारो जोई । करिये प्रथमहिं कारज सोई ॥
करिबे होय काल्हि जो काजा । आजु करै सो है बुधराजा ॥
सस्यादिक अवसर अनुसारा । जिमिकीन्हे फलहोय उदारा ॥
नहिं विपरीत काल फलवैसो । गुनौ विवाहादिक फल तैसो ॥
अवसर कृत सब है फलदाता । नतरु वृथायहनिश्चयताता ॥
जन्मदिवसते तब पितु माता । घरमों करहिं परस्पर बाता ॥

दो० वहुदिन धौं कब आइ है ह्वैहै सुवन विवाह ।
निजनयनन हम देखिहैं हे विधि यह उत्साह ॥

एक एक दिन गनती करहीं । सुतके मोद मगनमन रहहीं ॥
मातु पिताकी प्रकृति सनातन । सुतउत्सवदेखनकी रुचिमन ॥
कर्णवेध मुण्डन उपवीता । पुनि विवाहकरध्यानपुनीता ॥
निज २ कुलके पितरमनावहिं । निजसंतानवृद्धिनितध्यावहिं ॥
ब्याह मूल सन्तति कहँ जानै । तेहिबिन पिंडहानि मनमानै ॥
वेद पढ़े कर फल सुविचारा । तेहिकरफलबहुमखविस्तारा ॥
सपत्नीककर तहँ अधिकारा ।करि विवाहश्रुतिविधिव्यवहारा॥
सब वेदज्ञ कहहिं अस नीती । नहिं कपोलकल्पित यहरीती ॥
गुरुवाणीसुनि शिवगुरु कहेऊ । सत्य नाथ अनुशासनभयऊ ॥
है परन्तु यह नेम न कोई । श्रुतिपढ़िअवशिगृहीद्विजहोई॥

जेहि के उर वैराग प्रकासा। तौ वहु तुरत लेइ संन्यासा॥
जेहि विवेक वैराग न होई। चहिये गृही होय प्रभु सोई॥
राज पंथ है वेद बताई। सुनहु जो है मेरे मन भाई॥
नैष्ठिक ब्रह्मचर्य ब्रत धारे। जबलग जियों समीप तुम्हारे॥
रहौं दण्ड मृग चर्म सहीता। सबकुछजानौं तदपिविनीता॥

दो० होमकरत नित अग्नि महँ पढ़त पढ़ावत वेद।
जिमि नाहिं भूलौं निज पढ़ो सेवत पद गतखेद॥

दार भवन तबलौं सख सूझै। जबलौं अनुभवकरिनाहिंबूझै॥
अनुभवगोचर जब ह्वै जाई। पुनि सो विरसरूप दर्शाई॥
अनुभवगम्य दार गृह सांई। तेहिकी जानि प्रभुकरहुबड़ाइ॥
मखते होय स्वर्ग महँ वासा। जो विधिवत बनिपड़ैप्रयासा॥
पूरी विधि दुर्लभ महि ऊपर। तैसोइ फल संदिग्धगुणाकर॥
वर्षा हेतु यथा मख कोई। करहिंन्यूनविधिवृष्टि न होई॥
ऐसेहि परलोकहु विज्ञानी। विधिवैषम्यहोहिं फलहानी॥
गृही होय धन सों जो हीना। निश्चयनिरयी है अतिदीना॥
अलपहु दानशक्ति जेहि नाहीं। विनाभोग निशिवासरजाहीं॥
पूरण होय तहूं सुख लेशा। नहिंजानौतेहिअधिककलेशा॥
दिनप्राति चहत वस्तु सरसाई। नितप्रतिलाभलोभअधिकाई॥
गृहमहँ नित यहु होय विचारा। उठनी वस्तु जितो परिवारा॥
जबलौं एक वस्तु गृह आई। पहिले की तबलौं चुकिजाई॥
लावत बरतत दिवस सेराहीं। गृहवासी स्वप्नेहु सुखनाहीं॥
होत रह्यो संवाद सुहावा। तबहीं पिता लेवावन आवा॥
श्रीगुरुकहँ बहुधन तिनदीन्हा। सुतसमुझायगमनगृहकीन्हा॥

दो० जाय भवन निज मातु के चरण गहे शिरनाय।
चरण गहत सुत देखिकै लीन्हों हृदयलगाय॥

जननी को संताप मिटो सब। प्राण समान तनय भेंटो जब॥
चन्दन रसते अति हितकारी। तनयगातको परश सुखारी॥

बहुत काल पीछे गृह आयो । सुनिसुनिसकलबन्धुसुखपायो ॥
देखन हित आये सब धाई । शिवगुरु सबहि मिले हर्षाई ॥
सबहि यथोचित आदर दीन्हों । सेवा मान यथाविधि कीन्हों ॥
यक दिन सावधान सुत देखी । पिताकिये तब प्रश्न विशेखी ॥
वेद वेद के अंग अनूपा । पूछौं पद क्रम जटा स्वरूपा ॥
भट्ट पाद सिद्धान्त बहोरी । प्रश्न प्रभाकर मत के भूरी ॥
पुनि कणाद गौतम मतमाहीं । औरहु बहु पूछा तिन पाहीं ॥
सुतमति जाननहित द्विजराया । यहिविधिकीन्हेप्रश्ननिकाया ॥
जासु नाम विद्या अधिराजा । जिन्हैं जान सब विज्ञसमाजा ॥
यथा नाम तैसेहि गुण ताके । सुने तनय सब प्रश्न पिताके ॥
विनय प्रणाम सहित हर्षाई । प्रश्न *समाधि सकलदर्शाई ॥
शास्त्र वेद युत बुद्धि विशेखी । उत्तर प्रश्न निपुणता देखी ॥

दो० पितहितोष अतिशयभयो सुनिसुतको वरबैन ।
स्वाभाविक प्यारेलगैं किमि कहिये श्रुतिऐन ॥
सब गुण भूषित देखि वर आये सहितउछाह ।
द्विज समाज ऐसी भई मानहु अबहिं विवाह ॥

ब्याह हेतु आये बहु द्विजवर । बहुधनदायकसुकुलगुणाकर ॥
सब विप्रन महँ बहुत कुलीना । मघ पण्डित अतिधनीप्रवीना ॥
कीरति धर्म सकल गुणखानी । ब्याह बतकही तिनसों ठानी ॥
मघ बोले एतो धन लीजे । सब बरात गृह पावन कीजे ॥
वर के पिता कीन्ह हठ एहू । मम गृह लाय सुता तुमदेहू ॥
मघ बोले जो मम गृह ऐहो । ठहरे सों दूनो धन पैहो ॥
वरपितु तब यह वचन उचारा । तुम मानहु जो बैन हमारा ॥
धनके बिनहिं ब्याहकरिलैहों । दूजी बात न मैं मन देहौं ॥
देखि विवाद परस्पर भारी । बिचवानी तब कह्योविचारी ॥
तुम जो झगरि लौटि गृह जाहू । तबलौं ह्वै जैहै यहु ब्याहू ॥
पुनि पाछे मन में पछितैहो । ऐसो वर ढूंढ़े नहिं पैहो ॥

* सभा ॥

बिचवानी जब बहुसमझायो। मघ पण्डित हठ दूरि बहायो॥
वर स्वरूपगुण मोहितभयऊ। मानिलीन्ह जो वरपितु कहेऊ॥
दो० देखौ है गुण जासु को वरण योग है सोय।
बहुत कालकी भावना मन्त्र वरद जिमि होय॥
मघ पण्डित विद्या अधिराजा। बैठे द्विजवर रुचिर समाजा॥
उभय विप्र वर निज कुलदेवा। पूजे करि भूसुर गुरु सेवा॥
गिरा दान दुहुँ समधी दीन्हा। ब्याहलग्नशोधनपुनिकीन्हा॥
ब्याहलग्नशुभ जेहिदिनआई। लौकिक वैदिक रीति सुहाई॥
होन लगे सब मंगलचारा। वेद विहित जेते व्यवहारा॥
सती नाम मघ पण्डित कन्या। निजगुणरूपअलौकिकधन्या॥
शिवगुरुपाणिग्रहणजबकीन्हा। सबविप्रनवरआशिषदीन्हा॥
दम्पति भूषण वसन मनोहर। विकसितविधुमुखदन्तरुचिरतर॥
व्रीड़ायुत चितवनि शुभभांती। प्रीति परस्परकहिनहिंजाती॥
भयो मुदितमन अधिकउछाहू। नर अरु नारि हर्ष सब काहू॥
निजपर सबन ब्याह जिनदेखा। लह्यो हृदय परितोष विशेखा॥
दो० गिरिजा शिव वर पायकै जिमि पायो आनन्द।
तिमिदम्पतिकोभयो सुख जिमि कमला गोविन्द॥
अग्न्याधान करत जो कोई। होत यज्ञ अधिकारी सोई॥
यह विचारि जे विप्र प्रवीणा। योगक्रियाविधिकुशलधुरीणा॥
तिनहिंबोलिअग्न्यधानकरायो। पंचहुताशन को श्रुतिगायो॥
शिवगुरु याग किये बहुतेरे। जिनमहँ लागहिं द्रव्य घनेरे॥
उत्तम लोक जीतिबे काजा। नित पूजत जेते सुरराजा॥
दिनप्रति यज्ञ भाग सुर पावा। अमृतस्वाद देवन बिसरावा॥
देव पितर मानुष नित पोषैं। जेहि जो रुचै सोई दै तोषैं॥
शुभधनसुमनप्रफुल्लितद्विजवर। जंगमकल्पविटप मानहिं नर॥
परउपकार बसत मनमाहीं। व्रतयुत वेद पढ़त दिनजाहीं॥
अस्मृति श्रुति गाये शुभकर्मा। करत सदा पालत निजधर्मा॥

यहिविधिकछुककालचलिगयऊ। दिनप्रतिहोत तिनहिंसुखनयऊ॥
कामदेव सम सुन्दरताई। सर्वोत्तम विद्या जिन पाई॥
रहे धनी जेते अति नामी। ते सब शिवगुरुके अनुगामी॥
गर्भ न जान विनय युत दानी। सब प्रकार उत्तम गुणखानी॥
यहिविधि निकटबुढ़ापो आयो। सुतमुखदर्शनतिननहिं पायो॥
गोहिरण्य बहु शस्य मनोहर। वसुधाअतिरमणीयसुमन्दर॥
दो० बन्धु समागम यश घनो बहु सम्पदा विभाग।
पुत्रहीन शिवगुरु हृदय कछु न मनोहरलाग॥
आसौं भयो सुवन जो नाहीं। ह्वैहै अगिले संवत माहीं॥
तबहूं भयो न जन्म उछाहा। अबकी वर्ष अवशिसुतलाहा॥
ऐसे करत मनोरथ अवसर। कछु बीतो तब शोचे द्विजवर॥
पुत्र छांड़ि सब काज हमारा। सिद्ध भयो नहिं होय कुमारा॥
शिवगुरु परमखेद उर पाई। जाया को यह गिरा सुनाई॥
बीती वयस हमारि तुम्हारी। तनयानन देख्यो नहिं प्यारी॥
उभयलोकहित सुत जगमाहीं। हमकहँ दीन्ह विधाता नाहीं॥
पुत्र जन्म बिन जाय जो देहा। क्षीणपुण्य नहिं कछु सन्देहा॥
निशिदिन तासु उपाय सुहावा। गुनतसदामनकुछनहिंआवा॥
सन्तति रुचिर जासु जग नाहीं। नाम तासु नाहीं महि माहीं॥
रहित पुष्प फल पादप नामा। कौनलेतजगप्रियसुखधामा॥
निष्फल होत जन्म यहु मेरो। कहौ विचार होय जो तेरो॥
सुनिपतिवचन सतीअसकहई। प्रभु मेरे मन निश्चय अहई॥
दो० शंकर रूप कल्पतरु छाया परिये तासु।
तत्सम्बन्धी मिलहिंगे शुभफल कृपया जासु॥
भक्तनको अभिमत फलदायक। ऐसो नहिं कोऊ सुरनायक॥
पूजिहि सब अभिलाष तुम्हारी। प्रीतिसहित सेवहु त्रिपुरारी॥
शिव महिमा इतिहाससुनावों। तुम्हरो सब सन्देह मिटावों॥
मुनिनन्दन उपमन्यु सुनामा। खेलैं ऋषिपुत्रन के धामा॥

दूध पियत तिनको जब देखा। जननी सन हठकीन्हविशेखा॥
पयपीवहिं मुनिबालक भारी। हमको क्यों न देन मातारी॥
रह्यो दरिद्र क्षीर कहँ पावै। बालककोकेहिविधिसमुझावै॥
पुनिपुनिजबसुत बहुहठकीन्हीं। कनिकघोरिजननी तबदीन्हीं॥
ताहि पान करि अति हर्षाई। नाचै बाल सभा महँ जाई॥
बालक जानि मातु चतुराई। हँसेसकल मुनिसुत समुदाई॥
निजगृह आय हँसीकर कारण। पूछा मातहि करि पटधारण॥
है दरिद्र नहिं क्षीर हमारे। पिष्ट घोरि मैं दीन दुलारे॥
दो० मातु वचन सुनि शम्भुकी शरण गही मुनिबाल।
क्षीरसिन्धु अधिपति कियो ऐसे नाथ कृपाल॥
यहु चरित्र भारत में गायो। तुमको मैं संक्षेप सुनायो॥
देव प्रकट तिहुँकाल गोसांई। जो मनुष्य छोड़ै जड़ताई॥
यहिविधिसुनि वनिताकी बानी। शम्भुभक्ति महिमा रससानी॥
प्रणतवश्य सुनि नाथ सुभाऊ। चित उपजो विधुशेखर भाऊ॥
हरप्रसाद हित तप अनुमाना। दम्पति घरसों कीन पयाना॥
वृषगिरि ज्योतिर्लिंग सुहावन। नदीपूरणा सलिल सुपावन॥
सरि अस्नान करत शिवपूजा। भोजन कन्द काज नहिं दूजा॥
पुनितिनकन्दअशनतजिदयऊ। शिव पद पद्म भृंग ह्वैगयऊ॥
विमल हृदय जाया तन केरी। जेहिकी प्रभुपद प्रीति घनेरी॥
बहू करै व्रत संयम नेमा। पूजहि दम्पति शिवहि सप्रेमा॥
देह कसैं करि करि उपवासा। वृषपर्वत पर करहिं निवासा॥
यहिविधि बीत्यो कालअनेका। हरप्रसन्नलखि निश्चलटेका॥
देव कृपा परवश द्विज वेशा। स्वप्ने दर्शन दीन्ह महेशा॥
दो० कह्यो मांगु वरदान अब केहि हित सह्यो कलेश।
इच्छा कौनि तुम्हारि मैं पूरी करौं द्विजेश॥
नाथ पुत्र कारण तप भारी। सुनि बोले शंकर भयहारी॥
एक पुत्र सब गुण की खानी। अरु सर्वज्ञ परम विज्ञानी॥

ऐसो पुत्र चहहु द्विजराया । अथवामांगहु तनय निकाया ॥
जिनकी बहुत अवस्था होई । लघु विद्या अरु गुण वैसोई ॥
जानि यथारथ गिरा हमारी । वरणौं जो अभिलाषतुम्हारी ॥
शिवगुरु कह्यो एक सुत मेरे । होय जिते गुण कहे घनेरे ॥
बड़ो प्रभाव जासु जग होई । अरु सर्वज्ञ होय पुनि सोई ॥
ऐसे ह्वै हैं तनय तुम्हारे । जाहुभवन सुनि वचन हमारे ॥
अब न करो तुम यहु तप भारी । पूजी मन कामना तुम्हारी ॥
शम्भुवचन सुनि शिवगुरु जागे । स्वप्न कह्यो गृहिणीके आगे ॥
नारि शिरोमणि शिवगुरुजाया । सुनि बाढ़ो आनन्दनिकाया ॥
सुत ह्वैहै सब गुण जेहिमाहीं । नाथ स्वप्न फुर संशय नाहीं ॥
शिवगुरु उनकी नारि सयानी । शिवशरणागतमनक्रमबानी ॥
सावधान सुमिरत सो स्वपना । भूलिगये सिगरो दुखअपना ॥
दो० तब आये घर सती सह विप्र अनेक जेंवाय ।
दियो दक्षिणा बहुतधन हर्षे आशिष पाय ॥
पुनि विप्रन जब आज्ञा दीन्हीं । शिवगुरुतबभोजनरुचिकीन्हीं॥
रह्यो अन्न द्विज भोजन शेशा । कियो तहां शिवतेज प्रवेशा ॥
दम्पतिसों भोजन जब करेऊ । हर की कृपा गर्भ रहिगयऊ ॥
जब आये सुखप्रद उरमाहीं । क्रम से गर्भ बढ़ै दुख नाहीं ॥
सतीतेज तब अतिबढ़िगयऊ । मध्यादिवससवितासमभयऊ ॥
अतिशय तेज देखि नहिं जाई । अतिसुखमानहिंवरणिसिराई॥
गर्भालस ते मन्द भई गति । यहिमेंकुछअचरजमानहुमति॥
चौदह भुवन बसैं जेहि काया । सो प्रभु जेहिके गर्भ समाया॥
महि,पय,पावक,व्योम,समीरा।रवि,शशि,आतम जासुशरीरा॥
अष्टमूर्ति शंकर भगवाना । महिमा जिनकी वेद न जाना॥
दुराधर्ष प्रभु तेज अपारा । जबसे व्यापि गयो तन सारा ॥
तबसे नहिं कछु संग्रह त्यागा । नहिं मन कछुप्रपंचअनुरागा ॥
दो० रम्य गन्धयुत पुष्प नहिं गहै जानि तेहि भार ।

भूषणकी रुचिको तहां कहिये कौन प्रचार॥
गरुई वस्तु जिती संसारा। ह्वैगै तिनसों अरुचि अपारा॥
कुछदिनयहिप्रकारचलिगयऊ। दोहदआयप्रकट तेहिभयऊ॥
गर्भिणि नारि मनोरथ होई। दोहद ताहि कहैं सब कोई॥
दोहद ताहि सतावन लागा। चाहतत्यागन सो नहिं त्यागा॥
यथा शरीर पतंग अभागा। त्यागतहूं चाहै नहिं त्यागा॥
दुर्लभ वस्तु पाय पुनि त्यागहि। और पदारथ नूतन मांगहि॥
जब वह मिल्यो तज्यो पुनि सोई। और अनूपम की रुचि होई॥
दोहद समाचार सुनि पाये। सती बन्धुजन देखन धाये॥
लै लै वस्तु अमोल पियारी। देखहिं आय सतिहिनरनारी॥
कबहूं कुछ चाखत हर्षाई। कछुकपाय कबहूं अनखाई॥
नारि विधाता बादि बनाई। गर्भहेतु जेहि दुखअधिकाई॥
मानुषतनु अनुसार बखाना। सतिहिनकुछदुखकरअनुमाना॥
दो० सब दुख दूरि होन हित जाहि भजै संसार।
सो शिव जेहिके गर्भ में तेहि नहिं दुखव्यवहार॥
सोवत देख स्वप्न सयानी। विधुनिर्मलवृष सबगुणखानी॥
तेहिपर आपु भई असवारा। गुण गावत गन्धर्व उदारा॥
विद्याधर बहु बिनती करहीं। आय समीप चरण शिरधरहीं॥
रक्ष रक्ष जय जय उच्चरहीं। अवलोकपयहध्वनिसबकरहीं॥
ध्वनिसुनितिनहिं देतिवरदाना। जबजागीतबकुछ न दिखाना॥
इत उत देखति विस्मय भारी। पुनि न सुनीवहध्वनिजयकारी॥
शयन करनको पलँग मनोहर। बिछीसेज तहँ अतिशयसुन्दर॥
तहँ विश्राम करत हर्षाई। नर्महु वचन सुनत अनखाई॥
स्वप्ने सब वादी गण जीते। खेदितदेखि परहिं सुखरीते॥
सबन जीत आनन्द सहीता। बैठी शारद पीठ पुनीता॥
तहां बैठि अति आनँद माना। जागी बहुरि न कुछ दर्शाना॥
जाग्रत महँ समता पुनि ऐसी। सत्पुरुषन के उर महँ जैसी॥

दो० विषय लालसा सती कहँ रही न गर्भ प्रभाव।
सबलक्षण मानहुँ कहत भावी बाल सुभाव॥

उरशोभा शुभ सरित समाना। कुचगिरिते जनुकीन्हपयाना॥
रोमावलि अतिशय छवि छाई। मनहुँ सेवारपाँतिचलिआई॥
रच्यो विधाता जनु सुत काजा। सुभग मनोहर वेणुविराजा॥
युगल कुम्भ विधि नूतन सुन्दर। भरेसुधारस अधिकमनोहर॥
सती पयोधर मिष दरशाये। सुत पय पीवन हेतु बनाये॥
द्वैतवाद युग कुच गत भाशा। शून्यवाद दुहुँ बीच प्रकाशा॥
सत्पुरुषनकरिकै दोउनिन्दित। सतीगर्भगतसुतकृतखण्डित॥
बढ़े गर्भ दूनहुँ मिलि जाहीं। उभय पयोधर अन्तर नाहीं॥
श्रीहर जन्म दिवस जब आयो। सब प्रकार बहुसमय सुहायो॥
लग्न रही शुभग्रहयुत पावनि। शुभग्रहकीपुनिदृष्टिसुहावनि॥
उच्च भवन बैठे ग्रह चारी। रविसुत सुरगुरु भौम तमारी॥
जिमि जायो सुखसों जगमाता। षण्मुखतनय देवऋषित्राता॥
तिमि शिवगुरुकी नारि सयानी। हर्षित जायो सुत सुखखानी॥

दो० गर्भवास व्यवहार सब निज माया दर्शाय।
बालकरूप आप शिव तहां प्रकट भे आय॥

छं० तहँआपशिवगुरुशिशुहिदेख्यो मनमगनसुखगरमयो।
अतिहर्षतनमनकी खबरिनहिं उपजपलपलसुखनयो॥
पुनिह्वैसचेत नहाय विधिसों दान बहु विप्रन दये।
शुभ धेनु धरणी वसन भूषण रतन गण मन्दिर नये॥

सो० शिवगुरु सब विधि कीन्ह देवपितरआराधना।
याचकगणकहँदीन्ह जेहिजोमांग्योतेहिसमय॥

तेहि दिन सकल जीव हर्षाने। स्वाभाविक निजवैर भुलाने॥
बाघ सिंह मृग गज अहि मूषक। काहू कर कोई नहिं दूषक॥
घातक सकल वैर बिसराई। वन महँ साथ फिरैं हर्षाई॥
एक एक की देह खुजावैं। निर्भय निजनिज प्रेमदेखावैं॥

वर्षहिं सुमन लता अरु तरुवर। सरित बहैं पावन जल सुंदर ॥
जलधर वर्षहिं वारंवारा। गिरिगणझरनाझरहिंअपारा ॥
द्वैत वादि कर पुस्तक सुंदर। सहसा आपु गिरी भूतल पर ॥
श्रुति शिर हँसे न मोदसमानो। व्यास हृदय पंकज हर्षानो ॥
दशादिशि अतिनिर्मलता छाई। त्रिविधबयारि बहै सुखदाई ॥
अग्निहोत्र विप्रन गृह सुंदर। उठी धूमबिन ज्वाल मनोहर ॥
तेहिक्षणआपुहिआपहुताशन।करुप्रकाशविस्मितसबद्विजगन ॥
*सुमनन सुमनवृष्टि झरिलाई। सुमनहृदयसमविमलसुहाई ॥
अति सुमनोहर गंध सुहावनि। अद्भुत सुखकारी मनभावनि ॥
जिमि राजै सुमेरु सों धरणी। जिमित्रैलोकी सुखमातरणी ॥
विद्याविनयपावजिमिराजहिं। सुवनसहिततिमिसतीविराजहिं ॥

दो॰ रामकृष्ण सों लह्यो सुख कौशल्या नँदरानि।
तिमि यह बालक पायकै भई सती सुखखानि ॥

आये बहु दैवज्ञ सयाने। शिव गुरु भलीभांतिसन्माने ॥
पूंछे सुत लक्षण तिन कहेऊ। बड़भागी तव बालक भयऊ ॥
जन्मकाललहि कीन्ह विचारा। ह्वैहै यहु सर्वज्ञ कुमारा ॥
रचि है शास्त्र स्वतंत्र अपारा। वागधिपन को जीतनहारा ॥
महिमंडल बहुकीरतियाकी। व्यापिहिजेहिविधिभासविताकी ॥
बहुत कहहिं कहँलौंविस्तारा। पूरण होइहै तनय तुम्हारा ॥
पिता न पूंछी तासु अवस्था। विप्रनहूँ नहिं कीन्हिव्यवस्था ॥
जे शुभज्ञ पण्डित जगमाहीं। बहुधा अशुभ जनावत नाहीं ॥
जाति बंधु सुहृदिष्ट सुवामा। सहितउपायनशिवगुरुधामा ॥
जाय जाय सूती गृह पासा। तनयदेखिसबलहहिं सुपासा ॥
जिमि ग्रीषमऋतुकरसबतापा। मेटहि हिमकरकिरणकलापा ॥
तैसेहि सुत विधुवदन निहारी। होहिं सकल नरनारिसुखारी ॥
राति समय सूती गृह माहीं। सुवन तेज अँधियारो नाहीं ॥

सो॰ बालक अतुल स्वरूप बिनहि दीप तमहानिगृह।

---

* देवन । दीसि ॥

ऐसो तेज अनूप लखि सब को विस्मित हृदय ॥
दो० देखनहारे जनन को जेहि कारण सुखदानि ।
तेहि निमित्त शंकर धस्यो नाम पिता अनुमानि ॥
अथवा बहुतकाल शिव सेवा । कीन्हीं तब दीन्हों वर देवा ॥
शिव प्रसाद प्रकटे सुखधामा । तेहिते भा शंकर यहु नामा ॥
यद्यपि कृपासिंधु भगवाना । सकलशक्तिधरसबकछुजाना ॥
तद्यपि जिमि नर देह सवाँरी । तिमि बालकलीला अनुसारी ॥
कुछ दिन बीति गये सुखदाई । बिहँसन लागे प्रभु हर्षाई ॥
धावन लगे घुटुरुअन नीके । भयोमोद अति पितु जननीके ॥
जब शंकर शुभ मंत्र सो आये । साधुहृदय अति आनँदछाये ॥
मणि गुच्छा देखैं प्रभु जब सों । विद्वन्मुख निर्मल भे तबसों ॥
सोवन को जो पलँग मनोहर । अतिकमनीय सेज तेहिऊपर ॥
तेहिपर शयन करत श्रीशंकर । हर्षित चरण चलाव अनंतर ॥
जे वादींद्र रहे संसारा । तिनके जे अभिलाष अपारा ॥
मनहु बालक्रीड़ा मन दीन्हें । पद ताड़नमिष भेद न कीन्हें ॥
दो० जब अक्षर मुख पद्म सों कहन लगे दुइ तीन ।
द्वैत वाद महवीर जे सबन मौन गहि लीन ॥
जब पद पद्म चलन प्रभु लागे । दशादिशि मतवादी सबभागे ॥
कहन लगे जब मधुरी बानी । कोयलविकल मौन तबठानी ॥
आनँद सहित चले जब शंकर । विकलमरालभयेतेहिअवसर ॥
चंद्र सरस धीरे पगु धरहीं । अरुणत्विषापदकीमहिपरहीं ॥
विद्रुम पल्लव मनहु बिछावहिं । केसर रजमय भूमि बनावहिं ॥
लोचन चिह्न ललाट मनोहर । माथे उडुपति अंक शुभगतर ॥
शूल चिह्न दूनहुँ कांधे पर । फटिक समान शरीर उजागर ॥
यह सब लक्षण देखि सयाने । श्री शंकर शिव शंकर जाने ॥
उर पर नागचरण महँ चामर । बालचंद्र मस्तक अद्भुत तर ॥
चक्र गदा धनु डमरू रेखा । माथे चिह्न शूल कर देखा ॥

अँगसुकुमार सकल पुनि वैसे। निमिषलगैं नहिं लोचनतैसे ॥
रेखा लक्षण चिह्न निहारी। अचरजलोगनकोअतिभारी ॥
नीति निपुण नृपकी मनमानी। राजबढ़ै दिनप्रति दुखहानी ॥
कुव्यसनगतनहिंमतिजेहिकेरी। सदा बढ़ै विद्या तेहिकेरी ॥
निर्मलसुखद शरदऋतुपाई। नितप्रतिजिमिविधुछविसरसाई ॥
दंपतितोष सहित तिमिसुन्दर। हर मूरति बाढ़ै निशिवासर ॥

दो० आदि सृष्टि सनकादिकृत ज्ञानपंथ भा क्षीन।
दुर्गतिप्रद मारग बहुत चले भये जन दीन ॥

छं० जन दीन ह्वैगो स्वर्गदुर्गम मुक्ति की चर्चा कहा।
सबलोगमलिनस्वभावते नहिंपुण्यजगमेंकहुँरहा ॥
जब सृष्टिनाशक विघ्न बहुविध होनलागेनितनये।
तेहिकाल शंकर रूपधरि हर धरणिपर प्रकटतभये ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री७स्वामिरामकृष्ण
भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितशङ्करदिग्विजये
श्रीशङ्करावतारकथापरोद्वितीयस्सर्गः २ ॥

श्लो० ॥ शिवेतिचाख्यां वचसा भजामि हरं शरीरेण हि पूजयामि ॥
उमेशमूर्तिं परिचिन्तयामि महेशपादौ सततं नमामि ॥ १ ॥

दो० बालचंद्र शेखर लियो यहि विधि जब अवतार।
तेहि पीछे जे सुर प्रवर आये यहि संसार ॥

निगमागम जे निपुण द्विजेशा। तिनके गृह भे प्रकट सुरेशा ॥
कमलापतिमखपति भगवाना। विमलविप्रसुतभयउसुजाना ॥
पद्मपादमहिकहि अतिजिनसों। बादिमहायशउठिगोतिनसों ॥
रवि सम तेज प्रभाकर नामा। पवन प्रकटभे तिनके धामा ॥
हस्तामलक कहै जग जाही। भयो जोभेद वादिगलग्राही ॥
वायू दशम अंश अवतारा। तोटक जाहि कहैं संसारा ॥
जिनके यश पयोधिमहँ धरणी। असिउतरायमनो दृढ़तरणी ॥

वादिगिरा जिमि नाव पुरानी । बूड़ि गई तहँ तुरत बिलानी ॥
नन्दीश्वर प्रकटे जग माहीं । सकल उदंक कहैं तिनपाहीं ॥
वादी निग्रह जनित अपारा । कीरति जिनकी भै संसारा ॥
ब्रह्मा मण्डन मिश्र कहायो । सुरगुरु आनँदगिरिह्वैजायो ॥
वरुण भये चित्सुख के रूपा । अरुण सनंदन करे स्वरूपा ॥

दो० पद्म पाद जेहि सों कहैं सोई सनंदन होय ।
उभय देव के तेज सों जानहु प्रकटोसोय ॥

अवरहु देव बहुत यहि भाँती । सेवन हेतु मदनआराती ॥
भूसुर तनय भये सब आई । जगतशरण चरणनमनलाई ॥
कोइ आचारज को मत ऐसो । आगे कहहुँप्रकट करिजैसो ॥
चार्वाक मत को निर्माना । सुरगुरु कृत चतुरानन जाना ॥
भयो तासु मन अति संतापा । तुम नर होहु दीन्ह यहुशापा ॥
भये देवगुरु मंडन आई । कीरति जासुधरणिमहँछाई ॥
शिवकरिकृपा सप्रेरण कहेऊ । नंदी आय सनंदन भयऊ ॥
यहि प्रकार सुर धरे शरीरा । वरणौं विधिकीकथा गँभीरा ॥
माहिष्मती पुरी सुखखानी । शोभाजासुनवरणि सिरानी ॥
सब धन रहे जासु द्विज गेहा । धरीविरंचि जाय तहँ देहा ॥
विद्या विनय सकलगुण धामा । विश्वरूप अस पायो नामा ॥
निजगुणकुलकीन्होंअभिमंडन । तेहिते नाम कहायो मंडन ॥

दो० यहिविधि विधिअवतारजब भयोधरणिमहँआय ।
उनकी प्यारी भारती जनमी नर तन पाय ॥

एकसमय मुनि निज निज वेदा । पढ़त रहे विधिपासअखेदा ॥
स्वर में चूके मुनि दुर्वासा । तबशारदकियोहासप्रकासा ॥
क्रोध रूप मुनिवर दुर्वासा । बाढ़ीरिस लखिशारदहांसा ॥
अग्नि समान नयन सो देखी । शापदीन्ह मुनिउग्र विशेखी ॥
तू दुर्विनय अवनितल जाई । जन्म जाय मानुष तन पाई ॥
परीचरण शारद भय व्यापा । बिनतीकरै हृदय अतितापा ॥

शारद विकल देखि मुनिराया। कहन लगे अबकीजे दाया॥
यथा पिता बालक अपराधा। तथाक्षमहुमुनि ज्ञानअगाधा॥
यहिविधि शारद मुनिनमनाये। मुनि दुर्वासा कुछ हर्षाये॥
बोले शाप विमोचन बयना। ह्वैहैं मनुजस्वरूप त्रिनयना॥
उनको दर्शन जब तू पैहै। पुनि यहि ब्रह्मलोकमहँ ऐहै॥
पायो जन्म शोण नद तीरा। सबगुण मूरति परमगँभीरा॥
दो० उभय भारती भूमि पर तेहि सों कहैं सुजान।
जेहि ते दूनौं लोक में संज्ञा भई समान॥
द्विजवर सुता रूप गुण हृद्या। सहजभई तेहिकहँ सब विद्या॥
जोगुण जेहिमाथे लिखिगयऊ। तेहिमेटै अस जग को भयऊ॥
सहित अंग जानै सब वेदा। सकलशास्त्र वरणै गत खेदा॥
काव्यादिक नाटक सबजाना। सो नहिं गुण जाकर नहिं ज्ञाना॥
देखिताहिअति अचरजमानी। सबलोकन तेहि शारदजानी॥
अतिगुणज्ञ शारदा भवानी। विश्वरूप गुण सुने सयानी॥
ऐसेहीं मंडन सुनि पाये। सरस्वती गुणवाद सुहाये॥
दरश आश दूनहुं यों जागी। सुनि गुण उभयभयेअनुरागी॥
अति चिंतवन परस्पर ठयऊ। उभय दरश सपनेमहँभयऊ॥
भाषणहू कुछ भा सुखकारी। जागतहीं वियोगदुख भारी॥
दर्शन की इच्छा अति बाढ़ी। दिनप्रति प्रीति परस्परगाढ़ी॥
स्वप्नरूपभाषणसुधिकरिकरि। गयोदुहुनकोयहिविधिमनहरि॥
क्रीड़ा भोजन कुछ न सुहाई। उभय शरीर गयो दुबराई॥
दो० कृशतन देख्यो पिता तब तनय समीपबुलाय।
कारण पूंछा शोचकर बहुत हेतु दर्शाय॥
कौन हेतु कृश देह तुम्हारी। जानि परै कुछ चिंता भारी॥
रोग शरीर तुम्हारे नाहीं। औरौ नहिं कुछ दुख तुमपाहीं॥
इष्ट हानि अनभल संयोगा। जगप्रसिद्ध दुखपावहिंलोगा॥
सो दोनों तुम्हरे नहिं देखौं। अपने मन यद्यपि बहुलेखौं॥

ब्याहकाल नहिंतवचलिगयऊ। नहिं अपमानतुम्हारोभयऊ॥
नहिं दरिद्र तुम्हरे घरमाहीं। कौनिवस्तु जो तवगृहनाहीं॥
नहिं तुमपर कुटुम्ब कर भारा। जब लौं मैं जीवत संसारा॥
है तुम्हरी आनंद अवस्था। मननआवकुछदुःखव्यवस्था॥
परम धुरंधर तर्क प्रधाना। जौन अर्थ उनहूं नहिं जाना॥
सो तुम जानहु पढ़ो पढ़ावो। सबके संशय कहिसमुझावो॥
नहिं तुम मूढ़ वाद नहिं हारे। क्यहिकारणमनदुःखतुम्हारे॥
जन्म दिवसते शुभ आचरणा। जस कुछवेद पुराणन वरणा॥
पाप कर्म नहिं तव मनमाहीं। नरकादिकभय तुमकहँनाहीं॥

दो० केहि कारण मुख पद्म तव देखौं शोभाहीन।
दिनप्रति पूंछातात जब प्रीति सहित हठकीन॥

बोले मंडन विनय समेता। जो तुम पूछहु कृपानिकेता॥
कहत मोहिं आवै बड़िलाजा। हँसिहैंमोहिंसुनिवृद्धसमाजा॥
कहिबे योग जौनि नहिंबाता। तव हठ वश वर्णतहौं ताता॥
विष्णुमित्र द्विज गुणिगम्भीरा। करहिं निवास शोणनदतीरा॥
तिनकी कन्या मनहु भवानी। है सर्वज्ञ सकल गुण खानी॥
सुनिसुनि तासु रूप गुणगाहा। मममन चाहै तासु विवाहा॥
विनयसहित सुनिसुतकेबयना। युगल विप्रबोले गुणअयना॥
वधू वरण वारता प्रवीना। पठये दै धन वस्त्र नवीना॥
ते द्वौ विप्र देश बहु त्यागी। तहँपहुँचे निजकारज लागी॥
पूंछा विश्वरूप पितु जैसे। शारद तातहु पूंछो तैसे॥
भारति कहहि सुना मैं ताता। राजस्थान बसैं विख्याता॥
द्विज वर विश्वरूप असनामा। सकलशास्त्र सब विद्याधामा॥

दो० तिनके युग पदरेणु महँ मो मन रह्यो समाय।
सो हमको तब मिलहिंगे जो तुम होहु सहाय॥

इमि कन्या के वचन सुहाये। सुनत रहे भूसुर मन लाये॥
युग द्विज जे पठये वर ताता। पहुँचे जाय सुखी*संघाता॥

* शरीर



हाथ बिराजे निर्मल लाठी। सुंदर वदन मनोहर काठी॥
विष्णुमित्र करि सब सत्कारा। पूंछा केहिकारण पगुधारा॥
माहिष्मती पुरी जग जाना। तहां बसैं हिमभित्र सुजाना॥
विश्वरूप के तात पठाये। तुम्हरेभवन नाथ हमआये॥
श्रुत वय कुल आचार सुपावन। रूप वेष गुण धर्म सुहावन॥
विश्वरूप जग कीरति जैसी। महाराज तव कन्या तैसी॥
सब प्रकार निज तनय समाना। जानिपठायो हमहिंसुजाना॥
यह विनती हमरी सुनिलीजै। विश्वरूप हित कन्या दीजै॥
युगमणिमिलन होयजेहिरीती। महाराजसोइ करहु सप्रीती॥
विष्णुमित्र बोले हर्षाई। तुम्हरे बयन मोहिंसुखदाई॥
निजगृहिणी सन पुछिहौं जाई। पुनि करिहौं अपने मनभाई॥
कन्यादान बधू आधीना। बिन पूंछे करिये न प्रवीना॥
दैवयोग कन्या दुख पावैं। तबगृहिणीजनअधिकसतावैं॥
जाया सन गाथा सब गाई। निजसंमतिमोहिं कहौबुझाई॥
सुनि पति के मुखकी वरबानी। बोली शारद मातु सयानी॥
दूरि रहैं कुछ जानि न जाई। कुलविद्याधनकी अधिकाई॥

दो० लोक वेद में प्रकट यह कन्या दीजे जानि।
कुलाचार धन युक्त कहँ अपनेसम अनुमानि॥

सुनहु सुबयनि! नेम यह नाहीं। जे प्रसिद्धतर हैं जग माहीं॥
ते न परीक्षा योग सयानी। कृष्णविवाह लेहु अनुमानी॥
तीरथ मिस घूमतगे श्रीहरि। कुण्डनेशसबनरपतिपरिहरि॥
विनय परीक्षाकीन्ह विवाहा। तिमि प्रसिद्ध हैं द्विजनरनाहा॥
यहविकल्पमनमें नहिं कीजै। यदुपति उपमा कैसे दीजै॥
मण्डनहूँ कर यश बिख्याता। थोरी तोहिं सुनावहुं बाता॥
अति दुर्जय जैनी जग माहीं। जिनकी विद्याकी मितिनाहीं॥
तिनहिं जीतिकरिअधरमदूरी। वेद धरम प्रकटो जग भूरी॥
ऐसी भट्टपाद की करनी। एकवदन किमि वरणौं घरनी॥

भट्टपाद यश पोषण हारा। विश्वरूप तिहुंपुर उजियारा॥
दहिनो हमहिं जो होय विधाता। लहिये विश्वरूप जामाता॥
विद्या धन द्विज करनहिं आना। नहिं कोउ धनहैतासुसमाना॥
दो० नृपति चोर नहिं लै सकैं नहिं वनिता सुत भाग।
यश दिगंत जेहि सों मिलैं सब संशय दुखभाग॥
लौकिक धन सब दुखकीमूला। उपजत रहत सदा उरशूला॥
प्रथमहिं अर्जन को दुख भारी। पुनि रक्षा की आपद न्यारी॥
खर्च भये धन अति दुखदाई। नाशकेरदुख कहि न सिराई॥
स्वजन चोर राजा भय रहई। दुखकहँसुख मूरख जन कहई॥
लोभी धन धरती तर धरहीं। दानभोगमहँ व्ययनहिंकरहीं॥
कछदिन गये धरेनहिं पावहिं। औरधरौ धन औरहिखावहिं॥
सरिता तीर बाढ़ि जब आई। तहां गड़ोधन जल बहिजाई॥
ऐसे दुख अनेक धन माहीं। विद्या सम दूसर धन नाहीं॥
तनया बहुत काल गृह रहहीं। दोषअनेक लोकश्रुतिकहहीं॥
ब्याह प्रथम रज उद्‌गम होई। नरक हेतु जानहु तुम सोई॥
तनया के मनकी सुनि लीजे। पुनि जो उचितहोय सो कीजे॥
जननी जनक सुता पहँ आये। समाचार सब ताहि सुनाये॥
दो० निजरुचिकहु सुनिशारदा मनआनँद न समान।
निकरि बहुरि रोमांच मिस तन बाहेर दर्शान॥
दंपति वचन उतरु सो भयऊ। गृहबाहेर शारदपितु गयऊ॥
बिदाकिये द्विजमानि विवाहा। निज भूसुर पठवा द्विजनाहा॥
शारद निज द्विजवर समुझावा। लग्न महूरत शोधि सुनावा॥
चौदह दिन पीछे दशमी की। ह्वैहैलग्न सकल विधि नीकी॥
चले विप्र वर अति हर्षाई। विश्वरूप गुरु देख्यौ जाई॥
मुखप्रसन्नलखि तिनअनुमाना। कारजसिद्ध भयो हम जाना॥
विष्णुमित्र प्रोहित तब दीन्हीं। लग्नपत्रिकावरपितु लीन्हीं॥
भयो हर्ष पूजे तिन द्विज वर। भूषणवसन दियो धनबहुतर॥

विश्वरूप सन बात जनाई। लह्योपरमसुख*आधिगँवाई ॥
पठै निमन्त्रण बंधु बुलाये। यथायोग बहु काज बताये ॥
ते सब साज सँवारन लागे। हर्षसहित निजमन अनुरागे ॥
मंगलचार भये सब भाँती। वरशोभानहिं कछु कहिजाती ॥
दिव्य वसन भूषण पहिराई। चलीवरात सकल छविछाई ॥
कुशलसहितसब सुखी शरीरा। पहुँचे जाय शोणनद तीरा ॥

दो० शोणतीरकी पहुँच सुनि लेन चले अगवान।
दरश लालसा मन बढ़ी बाजे बहुत निशान ॥

वरहिदेखि सुखलह्यो समाजा। घर लैगये बजहिं सबबाजा ॥
मृदुवाणी कहि आसन दीन्हें। पाद्यअर्घ विधिवतसबकीन्हें ॥
दीन्हों पुनि मधुपर्क सुहावा। विनयवचनबहुभाँतिसुनावा ॥
गृह कन्या गोधन ममसबधन। तुमअपनोकरिजानहुसज्जन ॥
हमरो कुल पवित्र तुम कीन्हों। मोहिंभलीविधिआदरदीन्हों ॥
तवविवाह मिसि दर्शनपायो। उदय भयो ममपुण्य सुहायो ॥
नतरु कहाँ हमको तव दर्शन। विधिसमान विज्ञान विचक्षन ॥
मम गृह सर्वस अपनो जानी। लीजै सकल वस्तु मनमानी ॥
समधी कृत सुनिविनय बड़ाई। कह हिममित्र हृदय हर्षाई ॥
कस न कहौ तुम ऐसे बयना। वृद्धउपासकसबगुण अयना ॥
जो ह्वैहै अभिलाष हमारे। सोहमकहिहैं विनहि विचारे ॥
यहि विधि कहहिं परस्परबानी। आनँद विनय नेहरससानी ॥

दो० दुहूंओरके लोग सब देखत यह वर ब्याह।
हासविलास मगनसब मनमहँ परम उछाह ॥

वर कन्या स्वाभाविक सुन्दर। तद्यपिजान सुमङ्गलअवसर ॥
दरश परस्पर महँ मन लोभा। परवशकृत अंगनकी शोभा ॥
वर कन्या के रूप अपारा। प्रभा मंद भे सब शृंगारा ॥
धारे लोकरीति अनुसारी। रूपवृद्धिनहिं हृदय विचारी ॥
तब बहुज्ञ तत्काल लग्नकर। लागे करन विचार परस्पर ॥

* मनव्यथा ॥

खेलत सखी वृंदमहँ शारद । तेहि पूंछहिं सबगुणीबिशारद ॥
जो निश्चयकरि दीन्हसयानी । वही लग्न सबके मनमानी ॥
अतिशुभ सों बेरा जब आई । बहु बाजन बाजैं सुखदाई ॥
बेद शंख ध्वनि भै सरसाई । निजपरायकछु सुनिनाहिंजाई ॥
विष्णुमित्र तनया कर पद्मा । ग्रहणकीन्ह हिमतनयसधर्मा ॥
विष्णुमित्र हिममित्र विप्रवर । मगन भये आनँदके सागर ॥
पूजी सकल कामना जिनकी । को कहिसकै हर्ष के तिनकी ॥
तेहिक्षण जो जो मांगत जोई । हर्षित ताहिदेहिं सोइ सोई ॥
उभय कल्पतरु जंगम जैसे । सभामध्य सोहैं द्वौ तैसे ॥
गृह्य सूत्र विधि के अनुसारा । विश्वरूप कियो होम प्रचारा ॥
दो० लावा होमे वर बधू धूम गंध शुभ लीन्हि ।
पुनिदंपतिनेअग्निकी सप्तप्रदक्षिण कीन्हि ॥
कियो होम पूरण यहि भाँती । जनवासे गे सकल बराती ॥
दाइज बहु दीन्हा द्विजराया । कोकहिसकै वस्तु समुदाया ॥
दानपाय द्विज निजगृह जाहीं । रहे बधू वर मण्डप माहीं ॥
चारि दिवसलौं द्वौ दिक्षाधरि । हर्षित बसे अग्नि रक्षाकरि ॥
बहुत भाँति सब की पहुनाई । कीन्हींसो नहिं वरणि सिराई ॥
बिदा होनकर दिन जबआयो । सासुससुर अवसर शुभपायो ॥
आय समीप वरहि समझायो । सावधान करि वचन सुनायो ॥
बाल समान हमारी बाला । नहिं कछुजान लोक जंजाला ॥
लड़िकनमें खेलै नित जाई । क्षुधा लगै घर आवै धाई ॥
यही एक संतान हमारी । तेहिकारण प्राणन ते प्यारी ॥
घरकोकाम कबहुँ नहिं कीन्हा । यहि की रक्षा तव आधीना ॥
मधुरवचन करिहै यह काजा । रूखे रूठि जाय महराजा ॥
कोऊ मधुर वचन वश होई । होय कठोर वचन वश कोई ॥
दो० जेहि को जौन स्वभाव है त्याग करै नहिं कोय ।
जिमि उपाय ते शीतगुण कबहूँ अनल न होय ॥

दण्डसहित सिखयोनहिंयाको । तात सुनौ तुम कारण ताको ॥
एक समय मुनिवर गृह आयो । सुतादेखि हमकहँसमझायो ॥
मानुष निज तनया जनि जानौ । तुम यहिको देवीकरिमानौ ॥
कठिनवचन कबहूं नहिंकहियो । मोरसिखावनदृढ़करिगहियो ॥
तव कन्या सर्वज्ञ सयानी । उभयवाद मध्यस्थ भवानी ॥
ह्वैहै यहिको बहुगुण गाथा । असकहिगमनकीन्हमुनिनाथा ॥
हमरी ओर चरण बहु गहियो । जननीसोंअपनी यहकहियो ॥
नीके राखहिं बधुहि सयानी । याहि धरोहरि हमरी जानी ॥
धीरज सों गृहकारज लेहीं । भूले रुचिर सिखावन देहीं ॥
सहज भूल बालक सन होई । तेहि कहँ हृदय न लावैकोई ॥
यहिविचारि लघुवयस निहारी । क्षमा करैं सब घरकी नारी ॥
हम सब पहिले बाल अयानी । काल पाय अबहैं गुणखानी ॥

दो० हमरे मन अभिलाष बड़ चरणगहैं हम जाय ।
भलीभांति निज वचनसों विनती देहिं सुनाय ॥

है परन्तु असमंजस एहा । और कौन नहिं हमरे गेहा ॥
गृहरक्षा जेहिके शिर धरहीं । तेहिते सबसों विनती करहीं ॥
आपु जाय कहिबे कैसो फल । हमहिंमिलै वैसोसब निश्चल ॥
ऐसी कृपा करैं सगरे जन । जे बरात में आये सज्जन ॥
यहिविधि विनतीसबहिसुनाई । दम्पतिनिजतनया समझाई ॥
दशा अपूरब अब तुम पाई । रहियोकरि अतियत्न सुहाई ॥
करहु न बाल विहार विनोदा । हम सम पैहैं और न मोदा ॥
अधिपति मातु पितातनयाको । ब्याह भये पीछे पति ताको ॥
तेहिते शरणगहौ तुमपतिकी । चाहहोय जो उत्तमगति की ॥
पतिके प्रथम निमज्जन करहू । पति प्रसाद भोजनआचरहू ॥
पति विदेश शृंगार न धरहू । पति देवता चरित अनुसरहू ॥
प्रियतम क्रोध करैं तेहि सहहू । तेहिक्षण परममौन गहिरहहू ॥

दो० यहि विधि सुमन प्रसन्नपति होय सदायहनेम ।

पतिप्रसन्न ज्यहिपर भयो तेहिपर सबकर प्रेम ॥

सकल इष्टफल साधन कारी । क्षमा जानु सब गुणमेंभारी ॥
पति सम्मुख परपुरुष निहारी । मतिबोलौतेहिसनतुम प्यारी ॥
जब सम्मुख कर वर्जन कीजे । पीछे कर सिखवन कहदीजै ॥
देखत बोलत शङ्का होई । प्रीतम प्रेम मग्न करु सोई ॥
जब घर आवै स्वामि तुम्हारा । उठहुत्यागि गृहकारजसारा ॥
नाथ यथारुचि पाद पखारहु । सेवहुनिजसुखसकलबिसारहु॥
पतिपरोक्ष तेहिके जो गुरुजन । आवहिंतिनको करियोपूजन ॥
सहितमान तिनकी शुभआशा ।पुजवहुनहिंजिमिहोहिंनिराशा॥
ससुर सासु पितु मातु समाना । जानि सदा करियो सन्माना ॥
देवर जेठनहूं अनुसरहू । अपनेशील सबहि वशकरहू ॥
पति सम्बंधी जो दुख पावें । दम्पति प्रीति भंग उपजावें ॥
सुनि उपदेश कीन्ह प्रस्थाना । गृह पहुँचे वर बधू सुजाना ॥
मंदिरसुख नहिंजाय बखाना । पावहिं गुरुजन सों सन्माना ॥
उभय भारती बहुसुख लहई । शापअवधि अपनी सो चहई ॥
शङ्कर मण्डन वाद सयानी । ह्वैहै जहँ मध्यस्थ भवानी ॥
शिव सर्वज्ञ भाव द्योतन करि । जैहै ब्रह्मलोक साखी भरि ॥

दो० जिनकी साखी शारदा पूजि सर्व विद्वाव ।
प्रकट करैगी जगतमहँ तिनकरगुण अवगाव ॥

सो शंकर सर्वज्ञ सुजाना । भक्तसुखद प्रभु कृपानिधाना ॥
खेलत खेल करत लरिकाई । जिमि खेलैं सर्वज्ञ कन्हाई ॥
प्रलयकाल जिमिबालमुकुन्दा । वट पल्लव सोवत सुखकन्दा ॥
सकल जगत देखैं निज माहीं । निज उरसों कछु बाहरनाहीं ॥
तिमि शंकर अपने महँ देखा । भूतभावि सबजगत विशेखा ॥
आतमगत सबलोक विलोका । भुवन चतुर्दश लोकालोका ॥
कबहुँ धरणिगत कबहूं पलना । देखिसुखी सबनरअरुललना ॥
अद्भुत बालक पलकन लागा । नयन मनोहर अंग विभागा ॥

वासुदेव सम सब छवि छाजा। सकलसुखदप्रभुगातविराजा॥
शिव चतुरानन विष्णु समाना। बालरूपधर कृपानिधाना॥
केशपाश श्यामल सुखकारी। कोमल नव नीरद छविहारी॥
शोभाखानि सकलगुणराशी। परममनोहर शिवअविनाशी॥

छं० चक्रांकचिह्नितपाशुपत कापालिक्षपणकमत घने।
पुनि जैन और अनंत दुर्मत जाहिं ते कापै गने॥
दुर्वादखल समुदायसों शुभ वेद मारग उठिगये।
प्रभुतासुरक्षणहेतु जगमहँ प्रकट शिवशंकरभये॥

दो० संसृति कानन भयहरण भद्र करण सुखकंद।
क्रीड़त शंकर कृपानिधि नाशक सब दुखद्वंद॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री७स्वामिरामकृष्णभारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेशङ्करदिग्विजये देवावतारकथापरस्तृतीयस्सर्गः ३॥

श्लोकं॥ श्रीगुरुं परमोदारं गुणागारं सुनिर्गुणम्। दक्षिणामूर्त्तिवपुषं भजेहं भद्रदं परम्॥ १॥

सो० सुमिरौं शंभुदयाल भवभय टारन हेतु प्रभु।
भये मनोहर बाल ज्ञानप्रकाशन तमहरण॥

दो० मायामनुज पुरारि शिव पितुगृह करैं निवास।
मातु पिता अरुसबनको बहुविधि देहिं हुलास॥

सो० पूरी भई जो आय शंकर की पहिली बरस।
ग्रहण किये सुरराय निज भाषाके सब वरण॥

दूजे साल मधुर रस पागे। लिखित अंक उच्चारण लागे॥
तीजे संवत काव्य पुराना। शंकर श्रवण करैं धरिध्याना॥
रही जो दैवी बुद्धि सोहाई। श्रवण विना जान्यो सुरराई॥
शिक्षाको दुख गुरुहि न दीन्हा। एकबार सुनि उर गहिलीन्हा॥
गुरुबिन पढ़िबे मो मन लावैं। सहपाठिन को आपु पढ़ावैं॥

रजतम जिनके नहिं छुइजाई । महि खेलत रज अंगसुहाई ॥
यहिविधिशिवगुरुसुतसुखदाई । सबमिलि जानिलईमनभाई ॥
शंकर को मुण्डन जब भयऊ । गातमनोहरअतिछवि छयऊ ॥
घृत आहुति पावक छवि जैसे । शंकर तेज बढ़ो बहु तैसे ॥
पुनि सबवेद कंठ करि लीन्हें । व्याहृति सहितपढ़ै मनदीन्हें ॥
क्रीड़ाकीन्ह काव्यमहँ शंकर । तर्कप्रबंध अधिक कर्कशतर ॥
तिन सबकर उल्लंघन कीन्हों । लोगनकोबड़अचरजदीन्हों ॥
जे पण्डित जन परम धुरंधर । वचनविभवजिनकोअतिसुंदर ॥
जल्प वितंडावाद प्रवीणा । जिनसों हारे वादि धुरीणा ॥
शंकर सम्मुख ऐसेहु पण्डित । बोलि न सकैं गिराभैखण्डित ॥
सुरगुरु चतुराई प्रभु हरहीं । सम्मुख होत मौन सब करहीं ॥
शेष वचन छवि छीननहारी । शिववाणी तिहुँपुर उजियारी ॥
यहि क्रम उच्चारण परिपाटी । जबहीं श्रीमुख सों उद्घाटी ॥
सुनि वादी मोहित ह्वैजाहीं । तासुउतरु कछुआवत नाहीं ॥
सो० कुमत कौन संसार जे नहिं खण्डन कियेहर ।
थपे न दूजी बार यद्यपि कीन्हें बहुयतन ॥
यमुना तात तेज सब शोभा । शंकरसों अनुपम कुलशोभा ॥
ऐसो तनय अलौकिक पायो । शिवगुरुउरअतिआनँदछायो ॥
यज्ञउपवीत देखि हम लेहीं । यहूमोद विधि हमकहँ देहीं ॥
यह अभिलाष रही मनमाहीं । कर्म विवश पूजी सो नाहीं ॥
लोग करैं आशा मनमाहीं । काल कृताकृत देखत नाहीं ॥
तीजे वर्ष भयो शिवलोका । सुतसोंमुदितहृदयनहिंशोका ॥
यह संसार सुलभ सुत नाहीं । होयकदाचित जो गृहमाहीं ॥
पुत्र विभव कर देखनहारा । है अतिशय दुर्लभ संसारा ॥
शिवगुरु बड़ेकष्ट सुत जायो । तासु उदय नहिं देखनपायो ॥
सतीकीन्ह निजपति तन दाहा । सहितबंधु सबकर्म निबाहा ॥
बंधु हाथ कछु क्रिया कराई । कछु निजहाथकरी मनलाई ॥

लोगन बहुत सती समझाई। लोक वेद गाथा दर्शाई ॥

दो० संवत भरके नियम सब पूरे करि शिव माय।

सुत उपनयन साज सब जोरे मन हर्षाय ॥

पञ्चम वर्ष भयो सो काजा। जुरेसकल द्विजबंधु समाजा ॥

प्रवर योग युत समय सुहावा। विधिवत यज्ञउपवीतकरावा ॥

यह उत्साह सबहिं मन माना। मातुहर्ष किमिजाय बखाना ॥

अंग सहित क्रम सों सब वेदा। गुरुसन पढ़िलीन्हे बिनखेदा ॥

शंकर छोटे गात सुहाये। सब विद्या शुभ गुणसबपाये ॥

लोगनकहँ भा अचरज भारी। हरकी अद्भुतशक्ति निहारी ॥

साथ पढ़ैं जे वटु समुदाई। सम पढ़िबे की शक्ति न पाई ॥

श्री गुरु के मन यह संदेहा। को समरथ पढ़ाव जो एहा ॥

पढ़े मास दुइतीन कृपानिधि। ह्वैगे गुरुसमान प्रभु सबविधि ॥

पढ़त रहे गहि नेम सुहाये। अचरजनहिं जोवेदसबआये ॥

चतुरानन सम वेद बखानै। गार्ग्य सरिस अंगनकहँजानै ॥

अंग सहितसब श्रुतिकीगाथा। आशय सकल युक्तिकेसाथा ॥

दो० सुरगुरु सम जानत भये शंकर वैदिक कर्म।

जो जैमिनि वर्णन करैं स्वर्ग हेतु जो धर्म ॥

वेद वचन के ज्ञानमो वेदव्यास समान।

नये व्यास मानहु भये काव्य विलास सुजान ॥

तर्क भली विधि देखी शंकर। कपिलतंत्रमहँप्रचलअधिकतर ॥

कीन्हों पातंजल जल पाना। भट्ट पाद मत नीके जाना ॥

आतम विद्या तिन सब जानी। जेहिके बिन न होय विज्ञानी ॥

सब विद्या में जो सुख पायो। सो सब यहिमें आयसमायो ॥

कूप तीर जो कारज होई। सुरसरितट न होय किमिसोई ॥

यहिप्रकारगुरुकुलबासि शंकर। पढ़त पढ़ावत वेद निरंतर ॥

अथ ब्राह्मणी को वरदान ॥

एक दिवस भिक्षा के हेतू। द्विजगृह गमनकीन्हवृषकेतू ॥

परम दरिद्री सो द्विज रहेऊ। तासु नारि शंकर सन कहेऊ॥
बड़े भाग उनके जग माहीं। तुमसे वटु जिनके गृहजाहीं॥
आदर युत परिचर्य्या करहीं। भिक्षा देहिं मोद मन भरहीं॥
वृथाकीन्ह विधि जन्म हमारा। जिनके नहिं दरिद्र कर पारा॥
देइ सकैं नहिं कण दुइ चारी। ऐसे जीवन को धिग भारी॥
दो० विनयवचनबहुभांतिकहि धात्रीफल यकआन।
दीन्हों शंकर हाथ में भक्ति सहित सनमान॥
करुणावचन सुनत करुणाकर। दया बहुत बाढ़ी उर अंतर॥
द्विज दारिद्र होय जेहि दूरी। कमलाकी अस्तुतिसुठि रूरी॥
पद कोमल नवनीत समाना। मधुरविचित्र अर्थको जाना॥
अतिशयशुभविनतीजबवरणी। तुरतहिप्रकटभई हरिघरणी॥
तड़ित वरण शोभा तन भारी। दशदिशि फैलिगईउजियारी॥
विधिसुरेंद्र वंदित लखि पद्मा। कीन्हप्रणाम जोरिकर पद्मा॥
ललितमनोहरअस्तुतिरचना। श्री हर्षित बोली यह वचना॥
राउर मन की रुचि मैं जानी। प्रथम जन्म के ये नहिं दानी॥
कियोनजिनशुभमोहिंक्योंभावैं। ममकटाक्षमहिमा किमिपावैं॥
सुनहुमातु अब इन शुभकीन्हा। मोहिंआमलकप्रेमसों दीन्हा॥
यहि फलकर फलदेहु सयानी। मोपर कृपाजो तुमउरआनी॥
सुनिशिववचन बहुतमनभाये। सुवरण के आँवरा वर्षाये॥
दो० द्विज गृह में चहुँ ओर सों कनकामल दर्शाहिं।
तैसे विस्मय भरिदियो सबही के मनमाहिं॥
छं० मनमाहिं विस्मयहर्ष सबके देय अंतरहित भई।
मधुकैटभारि विलासिनी तबलोकमहँ अपनेगई॥
सबजनप्रशंसा करत शंकर सुखदकोसुख देखहीं।
महिमाविलोकिसुहावनी बड़भाग अपनेलेखहीं॥
दो० स्वर्ग कल्पतरु भूमिपर शंकर सबगुणखानि।
सुर भूसुर प्रियकरत नित इष्टपदारथ दानि॥

अमर सिहाहिं संपदा देखी। द्विजगृहकरिसबभाँतिविशेखी ॥
गुरु समीप गमने सुरराया। पढ़ैं पढ़ावैं श्रुति समुदाया ॥
सकल कला शंकर वर पाई। लहीअधिक सौभाग्यबड़ाई ॥
जैसे निज सम्पति गृह जाई। सुमुखि मनोहर नारि सुहाई ॥

अथध्यानम् ॥

विद्या सकल रहस्य समेता। सीखी जिन श्रीकृपानिकेता ॥
तिनको वपु अति सुंदर सोहै। उपमा योग्य तिहुंनपुरकोहै ॥
जपति चरणपंकज मदहरना। मुनिगणहृदय मोहतमहरना॥
मुनिवरकर लालित बहुभाँती। वंदौं चरण मदनआराती ॥
जुपै चंद्रमणि स्रवितभयोजल। पावै पद्मराग मणि सरथल ॥
तहाँ सरोज प्रकट जो होई। चरणकमल उपमा लहुसोई ॥
श्री पद पद्म समान बतावैं। मुखद्विजराजसरिसकहिगावैं ॥
हम कहँ यहमत भावत नाहीं। कहौं जोहै कारण यहिमाहीं ॥
पद्म पाद सेवक जिन केरो। सब जानत यश जासु घनेरो ॥

दो० शत मंडल द्विजराजके निशिदिन सेवत जाहि।
तेहि मुख उपमा देतसो कवि शारदा लजाहि ॥

छं० जे पाद पुनिपुनि संत योगी हृदयपंकज महँ धरैं।
निजहृदयपावनकरन कारणप्रेमते बहुविधकरैं ॥
जेहि वदन ब्रह्मामृतस्रवतइंद्रादिसुरदुर्ल्लभलहैं।
पदवदन पंकजइंदुतेयहिभांति अतिउत्तमअहैं ॥

दो० तत्त्वज्ञान रूप फल धरहिं भक्ति हित जोय।
पान करहिं व्यमोह कहँ श्रीशङ्कर पद दोय ॥

सकल व्यसन भक्षक जे चरना। जे अतिशय पातक के हरना ॥
मत्सर दम्भ मान समुदाई। यहि सब दोष जे लेहिं चुराई ॥
तीन ताप के जे दुखदाई। जिनकीमहिमाअति श्रुतिगाई ॥
दया करहिं ते पद दुखहर्त्ता। होहिं सदा शुभमंगल कर्त्ता ॥
मुनि मृकण्डुके तनय सुजाना। अल्पमृत्युसुनि तबव्रतठाना ॥

मृत्युंजय को ध्यान लगायो। तिनके लेने को यम आयो॥
पाद प्रहार शंभु तब कीन्हा। यम भुजमें अबलौं सो चीन्हा॥
पुनि गिरीशमंदिर अँगनाई। पाद प्रहार परत सुखदाई॥
तहां दण्डवत जे जन करहीं। तिनके शत्रुनको पद हरहीं॥
परब्रह्म शंकर शुभ चरना। जिनकी विरदावलि श्रुतिवरना॥
शरणजासुकी मोह निवारक। श्रीपद कामादिक सुखहारक॥
चंद्र उदय सागर उल्लाशा। होहिं सकलतमकेर विनाशा॥
तारा विधुके पास विराजा। षोड़शकलासहित द्विजराजा॥
हिमकर निर्मल किरण सुहाई। करहिं ताप अह्लाद बढ़ाई॥
तैसे परम उदय शंकर को। वर्द्धक ब्रह्मतत्त्व सागर को॥

सो० बाढ़्यो ज्ञान प्रकास गयो अविद्या रूप तम।
*तारविचारविलास इनकेढिगशोभितअधिक॥

दो० सकल कलाधर नाथके मधुर पादविन्यास।
मेटि ताप त्रय करत उर ब्रह्मानन्द प्रकास॥

कोउकहै पदनतिमुक्तिविधाता। कोउकह पद कैवल्यप्रदाता॥
यहिविधिश्रुतिविदकरहिंविवादा। हमवरनैंयह विगतविषादा॥
श्रीपद भजन करैं मन लाई। प्रभुसेवक त्रिभुवन सुखदाई॥
तत्पद पंकज रज परिरम्भा। मनसों जबहि कियो आरम्भा॥
तत्क्षण मुक्ति देत जग माहीं। यहि में कौनहु संशय नाहीं॥
शंकर ऊरू अधिक विराजै। श्वेतवसन तेहिपर छविछाजै॥
जनु ऐरावत कर अति पावन। पयनिधिफेनसहितमनभावन॥
गौर वरण वपु परम मनोहर। कटि तट मूँज मेखला सुंदर॥
जो सुवरन पल्ली त्रय होहीं। फटिक कूट के तटपर सोहीं॥
शंकर कटि उपमा तब होई। और न मन तर आवै कोई॥
प्रभु श्रीकरसुखमा अतिनीकी। उक्तिकहौं तहँभावतिजीकी॥
बामहस्त श्रुतिग्रन्थ विचक्षण। गहे ज्ञान मुद्रा कर दक्षिण॥
बादि स्वमत अनुसार जो भाखे। श्रुतिमहँ सोइ कंटकभरिराखे॥

* प्रणव

सो काढ़ें मानहुँ मन दीन्हें। चुटकी सों कर पुस्तक लीन्हें ॥
कल्पद्रुमकिसलयकैसीसुति। श्रीकरलखिकमलाहिउपजीभाति ॥
दिनहुं चुरावत ये मम शोभा। निशिमहँ बढ़ैचौर उरलोभा ॥
यहभय कोकरिमन अनुमाना। पंकज करहिंउपाय सयाना ॥
सांझहि ते दलरूप किवारा। लाप रहै जौलौं भिनुसारा ॥
दो० श्री शंकर की उरथली मांसल अधिक विशाल।
रुचिर मनोहरसुभग अति राजत वरणमराल ॥
जनु*भूभ्रमन जनित श्रमहारी। जय लक्ष्मी की सेज सवाँरी ॥
बाह्यांतर रिपुके जयकारी। युगभुजपरिघ†ख्यातिपरिहारी ॥
राजहिशुभलक्षणयुतद्युतिकर। मानहु दुइ जयखंभ धुरंधर ॥
सूक्षमता मृड़ाल छवि हरई। चन्द्रकिरण उल्लंघन करई ॥
अस निर्मल उपवीत सुहावा। कहिनजायअद्भुतछविपावा ॥
भगवत्पाद कंठ बहु राजै। अतिगँभीरजहँ शब्दविराजै ॥
वादिविजय बोला ध्वनितासू। जय शंखध्वनि सरिसप्रकासू ॥
दंतपाँति अरुणाधर माहीं। अतिसुठिउज्ज्वलपरमसुहाहीं॥
जनु नव विद्रुम बेलि सुहाई। तेहिमहँ शरदचन्द्रछविछाई ॥
उडुप तेजहर श्री गुरु शंकर। उभय कपोल विराजत सुंदर ॥
मुखवासिनि भारति के कारन। जनु दर्पण विरचे चतुरानन ॥
सबजगको जो सुकृत उदारा। सोई मनहुं पयोधि अपारा ॥
तेहिते श्रीमुख चन्द्र मनोहर। उदयभयोजिमिसिंधुसुधाकर ॥
सुधा सुधाकर की अतिसुंदर। ब्रह्मामृत यहि वदन मधुरतर ॥
यहिविधिद्वौविधुअहैं समाना। कछु अंतर सों करहुं बखाना ॥
दो० उडुगन तेजहि हरत विधु श्री मुख तेज प्रभाव।
देखि संत जन तेज अति बाढ़ै सहज स्वभाव ॥
लखिशंकर सन्मुख द्विजजाया। जासुदरिद्रदुखितअतिकाया ॥
क्षीरसिंधु कन्या तहँ आई। कनकामल धारा वर्षाई ॥
कमलाप्रीतिपात्र सो लोचन। भवसागर दुख द्वंद्वविमोचन ॥

* पृथ्वी † प्रसिद्धि ॥

सो सकिहै नयनन गुण गाई । जेहि के सुकृतपुंज समुदाई ॥
दूषणादि जे शत्रु अपारा । जीति राम पुनि सेतु सवाँरा ॥
तैसेहि जे वादी दुर्बारा । तिनकृत जे दूषण विस्तारा ॥
मेटि अलौकिन युक्ति सहेतू । जगमें प्रकट कियो श्रुतिसेतू ॥
तापसकुल हिमकर श्रीरामा । तैसे पुनि शंकर सुखधामा ॥
अतिकायादिक जे बलधामा । तिन मारे वानर संग्रामा ॥
रामकृपा चितवनिफिरि जागे । मृत्युरूप निद्रा दुख त्यागे ॥
जो स्थूल देह अभिमाना । देहातम विभ्रम बलवाना ॥
सोई अतिकायादि समाना । तासुनाश महँ परम सुजाना ॥
शाखामृग समान संसारी । जन्म मरण सम्भव दुखहारी ॥
ऐसे शम्भु कटाक्ष उदारा । शरणागत कहँ सब सुखद्वारा ॥
यह संसार दुःख को सारा । क्षणक्षण क्षतिभयकंटअपारा ॥
काम दाव ज्वाला भयकारी । जहँ आरतिकर्दम अतिभारी ॥

दो० अधरम मारग विकट अति धीरज करै विनाश ।
रोग रूप वारण जहां दुखप्रद करैं प्रकाश ॥

संसृति कानन श्रम अपहरहीं । शंकर दृष्टि जहां कहुँ परहीं ॥
श्वेतविभूति त्रिपुण्ड मनोहर । उपमा तासु कहै कवि सुंदर ॥
कृपासमुद्र मिली जनु जाई । त्रिपथगामि त्रयधार सोहाई ॥
मैं उपमा वरणौं मन भाई । वेदत्रय शिर भाष्य बनाई ॥
तेहिउपकार जो कीरति पाई । रेखा त्रय मिष सो दर्शाई ॥
मूरति श्री कामारि मनोहर । शंकर रूप सुलभ भै सुंदर ॥
यह मूरति जिनके मन भाई । तिनकोतृणसम मदन देखाई ॥
वन अज्ञान सघन गंभीरा । भव दावानल तप्त शरीरा ॥
तिन संसारिन के हितकारन । आतमज्ञान द्वार दुख टारन ॥
वट तरु तर अरु मौन विहाई । शिव मूरति भूतलपर आई ॥
श्री शंकराचार्य्य वपु धारी । विचरत हर कैलासविहारी ॥

अथ गुण वर्णन ॥

जबते प्रकट भये करुणाकर। सेवक चिंता हृदयताप हर ॥
बड़े प्रचंड प्रबल रिपु भारी। अतिजल्पक मिथ्यापथधारी ॥
जल्प वितंडा माहिं चतुरतर। विजयी पंडित बड़े धुरंधर ॥
भासिवैक आदिक जगनाना। कीन्हों डर तिनके मनथाना ॥
वैशेषिक गण की चतुराई। गई बिलाय न कहुँ दर्शाई ॥
इनमाहिमहँ*क्रतुगणविस्तारा। उन शिव दक्षयज्ञ संहारा ॥
यही दुहुन महँ आयो भेदा। उभय हरैं प्रणतारत खेदा ॥
दो० दूनहुँ जीतो काम कहँ द्वौ सर्वज्ञ समान।
अस्तुति दूनहुँ की करैं सुर नर विज्ञ सुजान ॥
विद्वज्जन त्रिलोक महँ जेते। कोउ मनतर आवैं नहिं तेते ॥
एक कला उपमा जो लहई। शिवसम्मुख ऐसो को अहई ॥
कहै जो कोउते आपु समाना। नाहीं करिहै कौन सुजाना ॥
स्वर्ग विपिन सुर वृक्ष अनंता। तरुवर मो न पुष्पकर अंता ॥
तिन पुष्पनमहँ भ्रमरवरूथा। तिमिअसंख्यशंकरगुणयूथा ॥
विषय लालसा को प्रभुमारा। शस्त्र मनोहर वस्तु विचारा ॥
हिंसा क्रोध तथा कटु बानी। क्षमा द्वार इन सबकी हानी ॥
मिथ्या भाषण संचय लोभा। दैन्यजनित जो मनकरक्षोभा ॥
श्री शंकर तिहुँ पुर उजियारे। गहि संतोष सकल संहारे ॥
दोष बड़ो मत्सर बरिआरा। अनसूया ते ताहि निवारा ॥
औरनके लखि गुणगणपांती। मद अरु मान हनेयहिभांती ॥
यह तृष्णा जो प्रेतिनि भारी। तृप्ति परम गुणसों संहारी ॥
शिष्यन के जो दोष मिटावैं। तिन समीप ते कैसे आवैं ॥
छं० जोस्वर्ग मुक्ति विनाश कर सो काम शिष्यन को हयो।
निःशेष दोषन को शरोयहि चूर्णसम पेषण कियो ॥
लोभादिरिपु समुदायको तृण सरिस जो क्षणमहँ हनै।
सो पूज्य पाद दयाल मोसों कहौ क्यों वरणत बनै ॥

---

* यज्ञ ॥

सो० शंकर शुभ गुण देखि दिग्गज अरु वाकी बधू।
उत्तमप्रश्न विशेखि किये सो अब वर्णन करौं॥

दिनमें नाथ निशाकर किरना। हैं ये कौन धर्मतप हरना॥
मुग्धे ये विधुकर नहिं जानो। जोमैंकहहुँ वचनचितआनो॥
शंकर नव अवतार सोहावन। तिनकेगुणगणदिग्मनभावन॥
प्रीतम जो यह तव फुर बानी। उत्पल पांती क्यों विकसानी॥
श्यामकमल बिनुविधुकर पाये। दूजे केहि जगमाहिं फुलाये॥
प्रिया श्याम पंकज यह नाहीं। जो संशय तुम्हरे मनमाहीं॥
दिग्वनिता श्री शंकर के गुन। इत उत सब देखैं विस्मितमन॥
तिनके श्याम अपांग सोहावन। फैलरहे सबदिशिमनभावन॥
यहि विधि उत्तर प्रश्न सोहाये। अतिराजहिं सज्जनमनभाये॥
शंकर गुण गण पांति सोहाई। सुखदायिन सबके मनभाई॥
जेहि कहँ मधु देखें नहिं भावें। जो दोषहु माधुर्य्य सिखावें॥
इक्षू क्षीर अनादर करहीं। सकल माधुरी को मदहरहीं॥
अति कमनीय सचंचलचाला। जो उल्लंघति सब दिग्जाला॥
परम धन्य तेहिकोहमभानहिं। तेहिसमानऔरेनहिं जानहिं॥

दो० सुनि शेखर को क्षमा गुण वर्णन करैं कवीस।
तौ धरती की कीर्त्तिसब वृथा होय अरु खीस॥

जो विद्या गुण कहिये तासू। होहिं गुहादिक मदकरहासू॥
करिये जो वैराग प्रकाशा। तौशुककायशकी नहिंआशा॥
बहु जलपन कहँलोंकरिजाहीं। उपमाको त्रिभुवन कोउनाहीं॥
शंकर मूरति महँ गुण नाना। बसहिंक्षमाजहँधरणिसमाना॥
कीरति रुचिर बढ़ावनहारी। है विद्या शारद अनुहारी॥
भक्त मनोरथ पूरणकारी। कल्पलतादिक की छविहारी॥
प्राकृत जन की उपमा दीन्हें। को नहिं मंद बनै अस कीन्हें॥
शंकर तुल्य कौन जग माहीं। भयो नहै कोउ होनो नाहीं॥
जिमि कनकाचलहै अतिसुंदर। तीनकाल तेहिकी नहिं सरिवर॥

सोकुलतिनसोंअधिक सोहावा। भूषण तासु शील मनभावा॥
शील रुचिर भो विद्या पाई। विद्या विनय पाय सरसाई॥
शंकर कल्पविटप संसारा। शोभनयशसोइसुमनअपारा॥
गुणपल्लव जहँ परम प्रकासा। बुधमधुकर सेवहिंचहुँपासा॥
दो० अथवा पंडित अमर नित आवैं जेहिके पास।
ज्ञान मधुरफल क्षमारस विद्या मनहुँ सुवास॥
अथ वाणी वर्णन॥
दो० शंकर वाणी चातुरी जेहि कयहुँ सेवन कीन्ह।
शेष कपिल काणाद की गिरानतेहि मनदीन्ह॥
और गिरा केहि लेखे माहीं। तेहिते बुध आदर तहँनाहीं॥
भट्ट भास्कर वाद कुपंका। रह्यो दुर्दशा रूप कलंका॥
बूड़िरहेश्रुति शिरतेहिमाहीं। काढ़िलियो जिनजनुगहिबाहीं॥
ऐसी शंकरगिरा रसाइनि। अक्षरब्रह्मस्रवै सुखदायिनि॥
नृपति भगीरथ के हित लागी। शंकर जटाजूट कहँ त्यागी॥
हिमगिरि ह्वै सुरसरिकी धारा। चली प्रवाह वेग बरिआरा॥
श्रीशंकर हिमशैल स्वरूपा। बोलनि गिरिगर्जन अनुरूपा॥
सुरसरि सम प्रभु गिराप्रवाहा। नहिं पावहिं वादीगण थाहा॥
अस प्रवाह सोहैं महि माहीं। दुर्भिक्षू दुकाल भय नाहीं॥
जेहि विधि अमरनदीके तीरा। नहिंदुर्भिक्ष जनित कछुपीरा॥
चित्त मतङ्गज की दृढ़ ⊛ वारी। बौद्धरूप नृपकी पुरि प्यारी॥
दूरि भयो जेहिसों दुर्वादा। मेटति है जो सकल † विषादा॥
सूरि धरैं उरहार बनाई। चिन्ता तूल बयारि सोहाई॥
वेद चतुरता जेहि मों वरणी। जो भवसागर की दृढ़ तरणी॥
भगवत् पाद बैखरी बानी। उदय करहु जगमों सरसानी॥
शंकर उक्ति निगुंफ सोहावा। अतिउत्कर्ष जासु जगछावा॥
जेहिमुनिवादिन आव न बाता। भयो मनहुं जिह्वा कर पाता॥
सुनत जाहि रसना बल नाशा। जिमिबगलामुखिमंत्रप्रकाशा॥

⊛ गजबन्धनीवेड़ी † दुःख॥

दो० वेद शिखर पंकज सुभग सो जनु सुरभि उदार।
जय लक्ष्मी विरदावली घंटा शब्द अपार॥

कस्तूरी कर्पूर सुगंधा। जहांबसहिं असवचनप्रबंधा॥
त्रिविध ताप उल्लास चोरावै। विधुकरको मदमान मिटावै॥
खांड़ दाख मधु सम मधुराई। कोअसजगजेहिको नसोहाई॥
ऐसे मुनि शेखर व्योहारा। केहिकोदेहि न मोदअपारा॥
मत अद्वैत राजपथ सोहा। जहां भेद कंटक अवरोहा॥
शंकरवाणि प्रबंध उदारा। सोई बँधो जहँ बंदनवारा॥
विगत राग ईर्षा अभिमाना। ते सज्जन हैं पथिकसमाना॥
तिनकी व्यापिरहीं तहँ पांती। तिनकहँसुखदसदासबभांती॥
यहसंसार सो विपिन अपारा। बुद्धिरूप मारग विस्तारा॥
दुष्ट नीति सोइ ईति समाना। गई विलापभीति जेहिमाना॥
अस प्रभुवचन वतास सोहाये। प्रसादादि गुणयुत मनभाये॥
दावसदृशजनमनपरितापा। गयोसकलश्रमसुखअतिव्यापा॥
युक्ति खानि शिवसूक्ति सोहाई। सुनि सुनियह शंका उरआई॥
रसना पर इनके सुखराशी। नाचहि शारद सदा हुलाशी॥
तेहिके कंकणकी ध्वनि भारी। नूपुर मुखर किधौं मनहारी॥
क्षुद्रघण्टिका को रव एहा। अस उपजै लोगन सन्देहा॥
गिरा गुंफ शंकर को चोखा। वर्षत जलधर कैसो धोखा॥
पवन क्षुभित पयसिंधु तरङ्गा। तिनकर करहिं मानमदभङ्गा॥
पुनि सो मालति गर्व नशावन। गिरागुंफ प्रभुको अतिपावन॥

छं० भाष्यादिरूप मनोज्ञवाणी जन अविद्या जो हरै।
सुरवैरि वादिसमूह शङ्का नाशिनी सब सुखकरै॥
आपदनिवारणि मुक्तिश्रेणी सुधास्वादु रसायनी।
सोहरहु ममभवरोग को अरु देहु गति अनपायनी॥
आयासको अंकुर मनहुं अरु बीज है मनताप को।
सब क्लेशको रंगस्थली प्रासाद है सब पाप को॥

रोगादि दोष समस्त को प्रस्ताव डिंडिम रूपजो।
है अनृतकी दृढ़ मूल चिंता को मनौ उद्यान सो॥
सो० ऐसो जो दुख रूप अहंकार देहादि गत।
मुनिवर उक्ति अनूप नाश करै तत्काल तेहि॥
वेद पुरातन सीप मुक्तामणि शंकर गिरा।
मुक्ति भवन की दीप हरु दुरंत भवभय सदा॥
जैन शिरोमणि सूरि क्षपणकादि जेहि हत किये।
अहै सजीवनिमूरि अनुवर्ती सब जनन कहँ॥
झंझा मारुत बढ़हिं तरंगा। कोलाहल परिपूरित गंगा॥
ऐसे शिव के वचन प्रवाहा। नाशहिं मनकी दारुण दाहा॥
झूठ मतन की रज दुखदाई। बैठि गई अब नहिं दर्शाई॥
करुणासिन्धु गिरा सन्दोहा। नाश करहिं सज्जनमनमोहा॥
अति सौरभ मालती नवीना। तेहिसमानप्रियकारिअदीना॥
कल्प वृक्ष मकरंद सोहाये। तहँ क्रीड़त निजगुण हर्षाये॥
करुणासागर आदर दीन्हें। ऐसे बैन उचारण कीन्हें॥
ते सन्तन को चित्त रमावैं। अरुआमोद मदहि सरसावैं॥
धार प्रवाह सरस सुखराशी। वचनामृत धारा सुप्रकाशी॥
जे सज्जन तहँ क्रीड़ा करहीं। पुनि नहिं द्वैतवचनमनधरहीं॥
हेम तन्तु वर वसन सवाँरा। पहिरहिं जो नर परम उदारा॥
सो० तेहिको किमि प्रिय होय महादरिद्री योग पुनि।
मलिन काथरी जोय फटे पुराने वसन की॥
ऐसी मुनिवर की जो वानी। बुधजन शिक्षाकी शुभखानी॥
तेहिसो करि सपक्ष निजपक्षा। जेहिकी बुद्धि भई अतिदक्षा॥
क्षीर क्षार सम देखहिं सोई। मधुचाखन की रुचिनहिंहोई॥
रूखी जानि सिता नहिं लेहीं। कहौ ऊखमहँ कब मन देहीं॥
दाख ताहि कैसेहु नहिं भावै। कदलीकहँकेहिविधिमनलावै॥
शिव वाणी लखि परमसोहाई। मधु बेची आपनि मधुराई॥

आनँदसहितदाख पुनि दीन्हीं। पात्रजानि पय अर्पणकीन्हीं॥
ऊख मधुरता बलकरिलीन्हीं। सुधा चोर भयते धरि दीन्हीं॥
तेहि कारण श्री शंकर बानी। अद्भुत महामधुर गुणसानी॥
कहिआवै सोकिमिमोहिंपाहीं। जेहिकी उपमात्रिभुवननाहीं॥
शम्भु गिरा सौरभ सरसाई। सो कपूर ने ऋण कर पाई॥
मृगमदपाढ़ि सम्पादन कीन्हीं। सेवा करि मल्लीगण लीन्हीं॥
केसर मोल देय सो पाई। चंदन तरुवर लीन्हि चोराई॥
धन्य गिरा सौगंध्य मनोहर। महिमा जासु सदा सर्वोपर॥
रुचिरमधुरदधि हमने खायो। बहुदिन क्षीर स्वादुपुनि पायो॥
देखी ऊंख दाख पुनि चाखा। रस मकरंद हृदय करि राखा॥
कदली अधिकमधुर हम खाई। अब श्रीशंकर गिरा सोहाई॥
पायन रुचि उनकी मनमाहीं। साध सुधाहू की अब नाहीं॥

छं० संतप्त भव संताप कहँ कर्पूर वृष्टि विहारसी।
श्रीमुक्ति मृगनयनीमनोहर गात मोतीहारसी॥
अद्वैत आतम बोध सर हंसी अनूपम पावनी।
सोकरहु ममबुद्धि श्रीशंकर गिरा मनभावनी॥
वेदालवालसुरेश आदिक वचनजल सींचीगई।
कैवल्यआशपलाशबुधमनशालपरजोअतिछई॥
द्वैतत्त्वज्ञानप्रसूनसुन्दर अमृतफल द्विज सेवई।
सोवचनबेलिमुनीशको प्राशस्त्यगुणमोहिंदेवई॥

सो० नृत्य समय भूतेश जटा मुकुट अति विशदते।
सुरसरि धार विशेश कोलाहल ध्वनि सों बहैं॥

तिनकी अस्पर्द्धा बहु करहीं। गिरा प्रवाह जे प्रभुउच्चरहीं॥
अमृत सरोवर सरित अपारा। ढाढ़े कूल तुरावति धारा॥
तिन सरि की परिपाटी जैसी। शंकरगिरा सोह पुनि तैसी॥
उल्लंघित श्रुतिपथ मर्य्यादा। बादि मानमथि देति विषादा॥
वेद शिखर अवगाहन हारी। शंकर गिरा सन्तजन प्यारी॥

श्री शंकराचार्य्य मुनि राजा। ऐसी वाणी सहित विराजा ॥
मान सहित देवासुर पांती। क्षीर समुद्र मथो बहुभाँती ॥
भुज बल फेरत मंदर गाढ़े। क्षुभितासिंधु लहराअतिबाढ़े ॥
तिनके तुल्य वचन शंकर के। धारापात अमृत जलधरके ॥
भव संताप मगन जन दीना। तिनकहँसुखप्रदपरमप्रवीना ॥
प्रभुकीकिमि अस्तुतिकहिजाई। जासु गिरा ऐसी सुखदाई ॥
अथ यश वर्णन ॥
केश युद्ध पयनिधि सो ठाना। गदा युद्ध हिमकरसों माना ॥
बाहुसमर शिवगिरिसन करई। परमचतुरशिवयशमनहरई ॥
कथा शुद्ध वस्तुन की आई। तब काहू यह बात चलाई ॥
है परिशुद्ध चंद्र सुखदाई। दूजे तब यह गिरा सुनाई ॥
जन्म सिंधु विष जासु सहोदर। दिनमलीन रजनीमहँ सुंदर ॥
गुरुतियगमनकलंक विराजहि। पुनिपुनिग्रसेराहुद्विजराजहि ॥
कोककमल विरहिनदुखदायक। नितप्रतिबढ़ैघटैनिशिनायक॥
दो० बहुकलंक अवगुण भवन नहिंपुनीत द्विजराज।
अतिपावन शंकरसुयश विगतकलंक विराज ॥
यहिविधि निर्जितउडुगणनाहा। निज कलंक खोदनसो चाहा ॥
हिमकर शंकर सेवन करई। गंग तरंग शीश पर धरई ॥
शिवयश दशदिशिनभलौंपूरा। सोह अनूप मनोहर रूरा ॥
दशदिशि मृगनयनी कमनीया। तिनकर केशपाश रमनीया ॥
तहँ नव मल्ली माल उदारा। परम चतुर रचना विस्तारा ॥
बहुरि सोयश दिगनारिललारहि। चंदन रेखा रुचिर सँवारहि ॥
मुनि दिग्वनिता कंठ मनोहर। मुक्ताहार भयो यश सुन्दर ॥
शंकर यश सम हिमकर नाहीं। कहौं जोहै कारण यहिमाहीं ॥
यहिकहँ सबदिशि अंकमलाई। शशिधर एकएकप्रति जाई ॥
किरण रूप कर सो यह चंदा। तारा कर्षि लहै आनंदा ॥
सो क्रम सो उडुगण पहँ जाई। है प्रसिद्ध यश विधुसरसाई ॥

स्वर्गसदा यहि चुम्बन करहीं। सोनतहां नित थिरताधरहीं ॥
करहि वियंगंगा आलिंगन। तेहिचंद्रहि कबहूं सालिंगन ॥
लोकालोकदरी लखिहर्षति। तेहिनिशिपतिकी तहँनाहींगति ॥
शेष करहि यहि शशिपरप्रीती। तहाँ गमनकी तासु न रीती ॥
यहिविधि तीनिलोकसुखकारी। शंकर सुयश चंद्रछविहारी ॥
दो० मुनिशेखर यश सिंधु की लहरैंसहित विलाश।
सकल दशा के अंत लौं पूरो करैं प्रकाश ॥
चंद्रकिरण कहँ देखिकै बहुत करहिं उपहाश।
तिनहिंविलोकत होय नित सुधामानकर नाश ॥
जग व्यापी जो तम अज्ञाना। घातकरहि तेहि भानुसमाना ॥
पुनि शिवकीरति रूपा माला। राजै बहुगुण भरी विशाला ॥
अति उत्कंठा सह पंचानन। नखवर मत्त गयंद विदारन ॥
कीन्हि प्रकट मुक्तागन माला। अतिशयसुखमाजासुविशाला॥
तेहिसन बाहुयुद्ध की लीला। कीरतिकरहिविमलगुणशीला॥
कमलिनि प्रश्नकरी हर्षित उर। लोकालोक दरी प्रति सुंदर ॥
तोहिं अतिशय हर्षित मैं देखों। निजमनमें यहकारण लेखों ॥
कीरति हिमकर प्रीतम संगा। भोआलिंगन मिलनप्रसंगा ॥
लोकालोक दरी तब कहेऊ। सखितवगातप्रफुल्लितभयऊ॥
अति प्रसन्न मैं पावहुँ तोहीं। निजसुखहेतु सुनावहु मोहीं ॥
प्रश्न परस्पर को वर उत्तर। भई उभय मुसुकानिमनोहर ॥
बहुत गर्व जिनको दुर्वारा। ऐसे वादी विदुष अपारा ॥
तूल समूह समान विराजै। शंभु प्रभंजन सों सब भाजै ॥
हिमकर सम जो बोध अबाधा। तासुजन्मथलसिन्धुअगाधा ॥
पुनि भवदाव ताप संहारी। शंकर मेघ सरस सुखकारी ॥
एसी कीरति सहित विराजा। जयतिसदा शंकरमुनिराजा ॥
दो० भारतादि इतिहास वर अरु पुराण सुखसार।
अस्मृति नानाशास्त्रप्रभु पुनिपुनि कियेविचार ॥

लोक वेद अति लही बड़ाई। पाई सर्वज्ञता सुहाई॥
व्यास मुनीश्वर गिरा सुहावनि। शांतिपर्वगतअतिशयपावनि॥
बहुत विचार कीन्ह मन लाई। पर न शांति पाई सुख छाई॥
शांति जनित शुद्धत्व सुहावा। श्रीशंकराचार्य्य मुनि पावा॥
व्याख्या चतुरवदनअतिसुंदर। तेहि कारण चतुरानन शंकर॥
ये मिथ्या प्रपञ्च को जानैं। वे चतुरानन सांचो मानैं॥
नाग शरीर कहावत भोगा। श्रीहरिको तेहि कर संयोगा॥
तेहि कारण पुरुषोत्तम भोगी। ये पुरुषोत्तम भोग वियोगी॥
काम जयी दूनौ गत माना। वे विरूप ये काम समाना॥
अस अनूप जगगुरु महराजा। जयति सदा शंकरपतिराजा॥
श्रीशंकर ढिग पण्डित आवें। ते बहुविधि शंका मनलावैं॥
मुख बैठी शारद नित सेवा। हैं कि मुये कमलासन देवा॥
लक्ष्मी क्षमारूप इन पाहीं। कि मुये विश्वम्भर तौ नाहीं॥
आरज सेवित चरण निहारी। काम विजयकी कीरतिभारी॥

दो० भयन विनाशन प्रकट भे श्री शंकर के रूप।
ऐसी शंकर बुध करें देखि प्रभाव अनूप॥

एक राम महँ जेहिकी प्रीती। मायाभिक्षु दिखाय प्रतीती॥
सीता को रावण लै गयऊ। समर सुरारिनसों तब भयऊ॥
रावणप्रति अति निष्ठुरसीता। तासुहेतु रिपुदल प्रभुजीता॥
तापस वेष राम लै आये। सीतहि सुरनरमुनियशगाये॥
आतम विद्या सिया समाना। परब्रह्म जेहि सदा सुहाना॥
क्षणिक ज्ञानवादी दशकंधर। हरिलैगौ निजमतबलदुस्तर॥
देखि अनेक जीव वादी मत। निठुररहीकरिबुधिउनकीहत॥
ते विवेक वैरी गण जीती। लाये शंकर ताहि सप्रीती॥
मुनिवर योग काछ सबकाछे। तापस वेष विराजत आछे॥
दो० ब्रह्मानंद स्वरूप महँ सबहि रमावै जोय।

त्राता तीनहुँ भवनके बसहु हृदय मम सोय ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री ७स्वामिरामकृष्ण भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेश्रीशंकर दिग्विजयेविद्याध्ययनयज्ञोपवीतादिचरित्र वर्णनपरश्चतुर्थस्सर्गः ॥ ४ ॥

श्लोकं ॥ वन्दे सदा ज्ञानघनस्वरूपं स्वमाययानिर्मितदिव्यवेषम् ॥
यतीश्वरैस्सेवितपादपीठं श्रीशङ्करङ्कल्पतरुं महेशम् ॥ १ ॥

छं० यहिभांति सब श्रुतिपारगामी वर्षसप्तमलौभये।
पुनि पायगुरुआयसु कृपानिधि भवनमेंअपनेगये ॥
निशिदिनकरैं निजमातु सेवा पढ़हिंवेदनको सदा।
दुहुँकाल अग्नि दिनेशपूजैं भक्ति परिपूरणहृदा ॥

सो० कहे जौन शुभ धर्म्म ऋषिन स्वयम्भू आदिने।
सदाकरैं निजकर्म्म तथा प्रकाशहिं तरणिसम ॥
शंकर बालहि देखि युवा क्रोध अपनो तजैं।
अति प्रभावउर लेखि वृद्धदेहिं आसन अपन ॥

जेजे जन प्रभु सम्मुख आवैं। हाथजोरि शिर तुरत नवावैं ॥
कोमलवचन चरितसुठि नीके। सब अँग सबल भावते जीके ॥
ये सबगुण लखि मातु सयानी। अनुपम तनय जानि हर्षानी ॥
एक समय शङ्कर की माता। चलहिं मंदगति जर्जर गाता ॥
मज्जन हेतु सरित पहँ जाई। घामजनित पीड़ा अतिपाई ॥
कीन तहां कछुकाल विलम्बा। गृह नहिंआई शंकरअम्बा ॥
तब प्रभु मनअतिशङ्का छाई। नदी तीर देखी सो जाई ॥
कमलपत्र जलयुत लै शङ्कर। शीतल पवन करी जननी पर ॥
सावधान करि यतन समेता। गृह लैगे श्री कृपानिकेता ॥
तब शङ्कर अस मन अनुमाना। जननी कराहिं सदा अस्नाना ॥
जाय नदी तट नितश्रम पावै। केहिविधिमातु कलेशनशावै ॥
लावहुँ जो सरि निजगृह पासा। तौ जननी कहँ होय सुपासा ॥

यह विचार सरिता तट जाई। अस्तुतितासुकीन्हि मनभाई॥
छंद अलंकृत पद सुखकारी। परमरुचिर कविजनमनहारी॥
पूर्णा नदी परम सुख पावा। हर्षित ऐसो वचन सुनावा॥
जगहित बाल बसै मन तेरे। तव इच्छा पूजिहै सबेरे॥
यह वरदान नदी सन पायो। विनयसहितअपने गृहआयो॥
बीती राति भयो भिनसारा। दिनपतिकर फैलो उजियारा॥
शीतपवन जलशीकर पावनि। लोगन देखी सरितसुहावनि॥
माधव मंदिर तीर सुहाई। मानहुँ नई नदी बहिआई॥
सो० दुख दरिद्र हरतार सकल अलौकिक चरितसुनि।
केरल नृपहि अपार बढ़ी लालसा दरश की॥
श्री शंकरहि बोलावन काजा। निज वर मंत्री पठयो राजा॥
सचिवप्रवीणशम्भु ढिगआवा। बहुकरिणीधन सम्मुखलावा॥
सरस मनोहर मंजुल वचना। मधुर सुहावनि वाणीरचना॥
सकल उपायन आगे राखी। बोलाचतुरविनयबड़ि भाखी॥
जेहिसमान नहिं काहुहि बोधा। जेहिके सरिस न कोई योधा॥
जासु सभा महँ द्विजवर भारी। राजहिं सकल हेमपटधारी॥
पूजित बसहिं सभासद पंडित। विद्या मूरति बोध अखंडित॥
जिनकी सरस वाद गाथा सुनि। मौनहोहिं वादी मानहुँ मुनि॥
तेहि राजा ने मोहिं पठायो। ममअतिसुकृत इहांलैआयो॥
जेहिने जीते सकल महीपा। स्तूयमान चरणः कुलदीपा॥
श्री पदरेणु सकल सुख साजा। आदर युत पावै मम राजा॥
मत्त गयंद सकल गुणखानी। पठयो तवहित नृप सन्मानी॥
राजभवन सबभाँति सोहावन। निजपदधूरि करहुतेहिपावन॥
यहिविधि सुनी मंत्रि वरवानी। दूत चातुरी मय रस सानी॥
अतिउदार वाणी श्री शंकर। बोलेऋषिजेहिकीअस्तुतिकर॥
भिक्षा अन्न अजिन परिधाना। कष्ट सहित सबनेम विधाना॥
वटू धर्म्म जे वेद बताये। होहिं सुखद कीन्हे मन लाये॥

अपने कर्म छांड़िये भोगा। रुचहिंगजादिकनहिंजिमिरोगा॥
हे अमात्य वर नृपसन जाई। कहो हमार वचन समुझाई॥
दो० राजा अपने प्रजा कहँ करे धर्म्म उपदेश।
देहि सबनकहँ जीविका सोई प्रवर नरेश॥
देवादिक ऋण विगत सुखारी। वर्णाश्रम निजपथअनुसारी॥
करिबो उचित नृपति को एहू। तुमहूं सब सोइ यतनकरेहू॥
सुनि ये वचन लौटि सो गयऊ। शंकरचरितनृपतिसनकहेऊ॥
राजा सुनि वृत्तान्त सुहावा। आपुहिचलिशंकरपहँआवा॥
बालरूप ऋषिवर छवि छाजे। भूसुर बालक मध्य विराजे॥
अति निर्मल उपवीत सुहाना। भासमानविधुकिरणसमाना॥
जनुहिमगिरिद्रुमसहितसुहावा। स्वच्छ जह्नुतनयाछविछावा॥
श्यामल हरिणचर्म परिधाना। करैंउचित निजकर्मविधाना॥
नूतनाम्बुद इवाम्बर धारी। पूतनारि * भ्राता अनुहारी॥
हेम सरिस मौंजी छवि छाई। भासिरही कटि परम सुहाई॥
मानहुँ कल्पबेलि रुचिराई। कल्पविटप सुखमा सरसाई॥
मंद हास मुख पद्म विराजा। दर्शन पाय सुखी अतिराजा॥
बार बार करि दंड प्रणामा। मान्योविधिसमसबवरधामा॥
शिव पूंछी तेहि कुशल भलाई। नृप शेखर वरणी हरषाई॥
अयुत मुहर प्रभु आगे राखी। प्रीतिसहितविनतीबहुभाखी॥
नाटक त्रय जे आपु बनाये। बहुरिनृपति शिवकहँदर्शाये॥
दो० रस, गुण, रीति, विशिष्टते, भद्र, सन्धि, युतभाव।
१ शृंगारादयः २ प्रसादादयः ३ वैदर्भ्यादि ४ सुखप्रमुखादि ५
संग्रह सो सब देखि कै हर्षि कह्यो मुनि राव॥
मांगु चतुर नरपति वरदाना। हौं प्रसन्न तैं अतिगुणवाना॥
सुनी गिरा हृदयंगम सारा। श्रवणसुखदतुलितामृतधारा॥
कर सम्पुट कीन्हे नरनाहा। निजसमानसुतकर वरचाहा॥
शंकर बोले सुनु महराजा। यह धन हमरे कौने काजा॥

* बलदेव॥

मम गृह बासि जनन कहँ देहू। सुखसों गमन करहु निजगेहू ॥
पूरी ह्वैहैं तव अभिलाषा। रहसि बुलाय ताहिसोंभाषा ॥
जेहि उपाय नृप संतति होई। सिखयो प्रभु आराधन सोई ॥
इष्ट विधान सुनत हर्षाना। सकलइष्टफल करतलजाना ॥
यहिविधि श्रीशंकर भगवाना। कीन्हों तासुउचितसनमाना ॥
सकल कलाधर वर नरनाहा। गाये नगर जाय गुण गाहा ॥
सबविधि आपु कृतारथ जानी। उदित नरेश परम सुखमानी ॥
कवि कोविद श्रुति पारंगामी। आय भये शंकर अनुगामी ॥
शेष कुशलता सीखन हेतू। पढ़ैं सदा सेवहिं वृषकेतू ॥
आपु पढ़े जे वेद सुभागा। कीन्हों सारासार विभागा ॥
सो शिष्यन के उर धरि दीन्हें। मगनमोद सागर सबकीन्हें ॥
द्विजवर सकलकरैं सन्माना। नहीं धन्यकोउ जासुसमाना ॥
सर्व तत्त्व के जाननि हारे। लोकवेद विधि को अनुसारे ॥
मातु पूजि परितोष बढ़ावा। यहिप्रकार कछुकालबितावा ॥

दो० माता शंकर के शरण सो जननी हितकारि।
विरहपरस्परकोसहन कठिनउभयभोभारि ॥

तदपिब्याह की रुचि मनमाहीं। सपनेहु श्रीशंकर के नाहीं ॥
देव देव शंकर सुर भूपा। जानत निर्विकार निजरूपा ॥
यथा सुमेरु शिखर गृह पाई। पुनिकिताहिमरुधरणिसुहाई ॥
तदपिबंधुनिजमति अनुसारा। पाणिग्रहणकरकरहिंविचारा ॥
कुलविद्याधनगुण जहँजानहिं। वरसमान कन्याअनुमानहिं ॥
एक दिवस मुनिवर गुणगाये। दर्शन हित शंकर पहँ आये ॥
श्रीदधीचि उपमन्यु सुजाना। अरुअगस्त्यगौतमगुणवाना ॥
त्रितलादिकऋषिमुनिगणदेखी। शंकर उठे सनेह बिशेखी ॥
मातुसहितकरिबहुविधिपूजन। स्वागतविनयकीन्हिहर्षितमन ॥
हाथ जोरि आसन बैठारे। ऋषयमुदितमुखपद्म निहारे ॥
सकल मुनीश्वर शंकर साथा। कहन लगे परमारथ गाथा ॥

कथा मध्य जननी शिरनाई । कह्योमुनिनसनविनयसुनाई ॥
हम कृतकृत्य जन्म फल पाये । तुमजगपूजित ममगृहआये ॥
कहँ कलियुग दोषनकोभाजन । कहँतवचरणकमलकरदर्शन ॥
जोमम पुण्यभयो यह लाहा । तौ बहुसुकृत न जायसराहा ॥
यहबालक अतिशय लरिकाई । वेद पारगामी मुनिराई ॥
पुनिमहिमाकीअसिअधिकाई । अचरजतव न चरितसमुदाई ॥
अति दुर्लभ जो दरशतुम्हारा । सो तुमआप सदनपगुधारा ॥
दो० कृपादृष्टि अतिशय करौ यहिकर सुकृत विशाल ।
मोरे सुनिबे योग जो भव तुम कहो कृपाल ॥
सादर सुनि जननी की बानी । मुनिप्रेरित अगस्त्यविज्ञानी ॥
कहन लगे सुनु सती सयानी । तुमसेये शिव मन व्रत बानी ॥
दंपतिको तप अधिक निहारी । ह्वैप्रसन्न प्रकटे त्रिपुरारी ॥
हँसि बोले शंकर दुखभंजन । रजनीबल्लभ खंड विभूषन ॥
मूरुख बहुत एक सुत ज्ञानी । मांगहु जो तुम्हरे मनमानी ॥
एक तनय सर्वज्ञ सुजाना । शिवगुरु मांगेहुयहवरदाना ॥
नर अरु नाग सुरासुर जोई । शिव समान सर्वज्ञ न कोई ॥
द्विजअभिलाष सिद्धजेहिहोई । तुम्हरे भाग प्रकट भा सोई ॥
ऐसी सुनि मुनिवर की वाणी । मुदित मातु जोरे युगपाणी ॥
केती आयु दया करि कहऊ । तुमसबकछुमुनिजानतअहऊ ॥
षोड़श वर्ष अवस्था जानहुँ । तदपियहूनिजउरतुमआनहुँ ॥
अष्ट अष्ट सम्बत समुदाई । रहिहैं पुनि कछुकारण पाई ॥
भावी कथा कहैं मुनि ज्ञानी । कियो निवारणऋषयसुबानी ॥
बिदा मांग ऋषि शङ्कर पाहीं । गेसबनिजनिजआश्रममाहीं ॥
करिशिहिमानहु आँकुशलागा । तिमिदुखपायो मुनिवरबागा ॥
बड़ पवन कदली गति जैसी । ऋषि के वचन मातु भै तैसी ॥
पुष्करिणी जिमि ग्रीषम पाई । तिमिजननीतनगयो सुखाई ॥
दो० शोक विकल जननी निरखि श्रीशङ्कर मतिधीर ।

तासु प्रबोधन करन हित बोले गिरा गँभीर ॥
जानहु नश्वर तुम संसारा। वृथा करहु यहशोक अपारा ॥
झीन बसन की ध्वजा सवाँरी। कम्पित प्रबल पवनकीमारी ॥
ताहू सों अति चञ्चल देहा। अस्थिर जानि करै को नेहा ॥
मूढ़हु यहतन थिर नहिंजाना। किमिकहियेज्यहिकोकछुज्ञाना ॥
केते सुत महि लालन कीन्हें। केती बधू भोग मन दीन्हें ॥
कहाँ सुवन कहँ बधू सोहाई। भव सँग पथिकसंग की नाईं ॥
भव भरमत लोगन सुख नाहीं। देखौ करि विचार मनमाहीं ॥
तेहि कारणलै * चौथाआश्रम। करिहौंअतिशययतनमहाश्रम ॥
जेहिविधि मुक्तहोय भवबंधन। और न दूजी बात मेरे मन ॥
करन कठोर सुनी सुत बानी। दुगुन शोक पीड़ा सरसानी ॥
नयन बहैं आँसुन की धारा। कोकहिसकै शोचकर पारा ॥
गद्गदकंठ न कछु कहिजाता। उरमहँ दुखसुख आव न बाता ॥
धीरज बाँधि नयन जलरोकी। कहै मातु सुतमुखअवलोकी ॥
यहिबुधित्यागिसुनहुममबाता। गृही होहु पहिले बलिमाता ॥
होहिं तुम्हारे तनय उदारा। करिये बहुत यज्ञ विस्तारा ॥
तब करियो संन्यास सोहावा। यहु क्रम सब वेदन में गावा ॥
जन्म लेहिं जग में द्विज जेते। त्रयऋणऋणीहोहिंसुततेते ॥
दो॰ विद्या ते ऋषिऋण पितर पुत्र भये सों जाय।
ऋण देवन को तब मिटै करै यज्ञ मन लाय ॥
त्रयऋण मेटिलेय द्विजजबहीं। मुक्तिमाहिं मन लावै तबहीं ॥
श्रुति स्मृति सब जानत नीके। मानहुँ तात वचन जननी के ॥
तुमहीं एक मोर आधारा। दूजो नहिं घर बूढ़ो बारा ॥
सो तुम प्राणन हूं ते प्यारे। तुम बिन कैसे रहौं दुलारे ॥
जो तुम जैहौ मातहि त्यागी। मोहिंसमाननहिंऔरअभागी ॥
मम पालनमहँ को चितधरिहै। पड़े शरीर क्रिया को करिहै ॥
तुमसबधर्म्म जानि अतिज्ञानी। जैबे की कैसे उर आनी ॥

* संन्यास ॥

द्रवे हृदय कैसे तव नाहीं। कृपा न आवति क्योंमनमाहीं॥
यहिविधिजननी व्याकुलदेखी। उरउपजी तब कृपा विशेखी॥
मोह रहित कहि गिरा सुहाई। माता बहु प्रकार समझाई॥
जबहीं वर्ष आठईं आई। कियो विचार देव सुखदाई॥
संसृति को न चहै मन मेरो। अम्बा ने बहुविधि मोहिं घेरो॥
मम मनकी देखै यह नाहीं। आयसु नहिं देहै मोहिं काहीं॥
माता वचन टारि नहिं जाई। जो गुरु सम वेदन महँ गाई॥
दो० यहि कारण संन्यास में मातु वचन की चाह।
थोरेहु आज्ञा के विना है नाहीं निर्वाह॥
यह विचारि कबहुं श्रीशङ्कर। नदी नहानगये सँग द्विजवर॥
जबहिं प्रवेश कीन्ह जल जाई। चरण गहो जलचर तबधाई॥
करन लगे रोदन तब शङ्कर। हाजननी मोहिंपकरोजलचर॥
गहिरे में खैंचे लिये जाई। एकहु पग चलि सकों न माई॥
बड़ो भयावन मुख फैलायो। सबप्रकार चाहै मोहिं खायो॥
घरमहँ मातुखबरि सुनि पाई। सरिसमीपअतिव्याकुलआई॥
सुत मुख देखि भयो संतापा। करनलगीयहिभाँति विलापा॥
मरिबेते पहिले पति चरणा। शरणरहे अबतुम दुखहरणा॥
मगर विवश ममबालक जाई। हाशिव मोहिंक्योंमौतनआई॥
मैं भरिजन्म कीन्हि तव सेवा। अशुभ होत कैसे मम देवा॥
नयन तनय आनन सों जोरे। अंग वसन आँसुन सों बोरे॥
यहि प्रकार शोचै तहँ ठाढ़ी। देखिप्रभुहिअतिकरुणाबाढ़ी॥
शङ्कर बोले सहित सनेहू। अम्ब मोहिं आयसु जो देहू॥
तुम्हरे अनुमत मैं संन्यासा। करौंतो बीतिजाय ममत्रासा॥
छोड़ै चरण तुरत यहु जलचर। तुम जो देहु सन्यासकेर वर॥
जब यह गिरा कही सुरत्राता। चकितभईमनमहँसुनिमाता॥
तुरताहिअपनीअनुमतिदीन्हीं। निजउरमें निश्चययहकीन्हीं॥
जियत रहै दर्शन मैं पैहौं। नतरु पुत्र बिन मैं मरिजैहौं॥

सो० माता अनुमति पाय कियो मानसिक न्यासतब।
जलचरगो बिलगाय चरणछोड़िकरि शम्भुको ॥
यह दर्शायो भाव भव जलचर जिन कोपसो।
मुक्ति न और उपाव बिन कीन्हें संन्यास के ॥

जल बाहर शङ्कर तब आये। माता को ये वचन सुनाये ॥
अम्ब कियो मैं मानस न्यासा। उचितमोहिं अबभयोप्रवासा ॥
मोहिं लायक आज्ञा अब देहू। सो करिहौं मैं बिन सन्देहू ॥
बन्धु सकल सेवा सब करिहैं। तवआज्ञानिशिदिनअनुसरिहैं॥
भोजन वसन यथा विधि देहैं। हमरे पितु कर धन जे लेहैं ॥
रोग भये पुनि औषध दाना। करिहैं सब प्रकार सन्माना ॥
मरणसमय सबक्रिया तुम्हारी। बंधु करहिंगे धर्म्म विचारी ॥
धन के लाभ लोक की लाजा। बंधु सवाँरहिंगे सब काजा ॥
अपने मन कुछभयनहिंलावो। मोहिं योग उपदेश सुनावो ॥
यह सुनि पुनि बोली महतारी। सुनहु तात यह विनय हमारी ॥
जलचर ते जीवन तव रहेऊ। मानस न्यास तुम्हारो भयऊ ॥
तव जीवन कारण मैं जानी। प्रियवियोगवाणी प्रियमानी ॥
यह दुख कहु कैसे सहि जाई। तवकर जो मैं क्रिया न पाई ॥
तुमहीं आय करो संस्कारा। ये तौ मानहुँ वचन हमारा ॥
जो तुम कहौ यती मैं भयऊ। अबअधिकार नहमको रहेऊ ॥
मुनिअगस्त्यहमसनसबभाखा। तव प्रभाव कछु गुप्त न राखा ॥
तुम समर्थ शंकर अवतारा। तुमकहँ नहिं कछुदोषप्रचारा ॥
लोक विरुद्ध कदाचितमानहुं। तहँ यहु मेरो उत्तर जानहुं ॥

दो० तुम ऐसो सुत पायकै भयो न पूरण काम।
तौ क्या हमकहँ फलभयो उतरुदेहु सुखधाम ॥

अपनी क्रिया हेतु दुख देखा। माताको हठ जानि विशेखा ॥
शङ्कर कृपासिन्धु सुखदाई। कह्यो मातुसन यों समुझाई ॥
रात दिवस अरु सांझ प्रभाता। कौनेहु समय बीच सुनु माता ॥

वशभर वश तैं करु सुधि मोरी। ऐहौं तुरत काज सबछोरी॥
मानहुं तुम विश्वास हमारा। करिहौं मैं सबकर्म तुम्हारा॥
तवहितलागि अनकरणी बानी। जो तुमकही सकल मैं मानी॥
तुमहूं मम यह विनती मानहुं। अपनेमनमें असनहिं आनहुं॥
मम सुत लैलीन्हों संन्यासा। मोहिंत्यागिचलिगयोप्रवासा॥
मैं अनाथ विधवा दुख पैहौं। कैसे अपनी बयस बितैहौं॥
असिचिंता कबहूंजनि करियो। मेरे वचन हृदय में धरियो॥
तव ढिग रहि जेतो फल देहौं। तेहिते सौ गुण फल पहुँचैहौं॥
यहि प्रकार जननिहिवरदीन्हा। पुनिकुटुम्बसनभाषणकीन्हा॥
अबहमन्यासमाहिंमतिदीन्हीं। दूरि जान की इच्छा कीन्हीं॥
तुमको सौंपत हौं निज माता। सबमिलिहोहुतासुसुखदाता॥
जननी कारज सबसन भाखी। मातुचरण रजशिरपर राखी॥
विनय कीन्ह दूनौ करजोरी। जननी सौंपी बंधु निहोरी॥
नयन नीर सुतको अन्हवावा। अधिकसनेहहृदयभरिआवा॥

दो० माता के हित जो नदी लाये भवन समीप।
तहां एक मंदिर रहा जहँ वश यदुकुल दीप॥

वृष्टि होय जब वर्षा पाई। नदी नीर मठ में भरि जाई॥
बहुत बेर जल को दुख पाई। श्री माधव नभगिरा सुनाई॥
जेहि क्षण चलो चहैं श्रीशंकर। विनवहिं जननी को जोरेकर॥
दूरि रही सरिता तुम लाये। माता के सब ताप मिटाये॥
हम कहँ देत क्लेश यह भारी। क्यों न करौ हमरी रखवारी॥
सुनि आकाशगिरा तहँ आई। द्वौकर प्रतिमा लीनि उठाई॥
अचल रही मूरति अति भारी। जो काहू सों टरहि न टारी॥
सो उठाय ऊंचे बैठारी। पुनि यह शंकर गिराउचारी॥
अब बाधा सरिता की नाहीं। रहिये आपु सदा सुखमाहीं॥
तब मातासों अनुमति लीन्हीं। माधव मुदित अनुज्ञा दीन्हीं॥
दूरि जान को कीन्ह विचारा। अतितीक्षण विरागउरधारा॥

जो नौका महँ होय सवारा। गिरो चहै नहिं सागर धारा॥

दो० तैसे जेहिको होयगो ज्ञान विराग विचार।
महा सोहावन पोत सम सोकि गिरै संसार॥

छं० यहिभांति मातु मुरारिकहँ परितोष श्रीशंकरगये।
श्रीघटज मुनिके वचन अपने चित्तके भीतर लये॥
अत्यंत भोग विराग मनमें दूरितृष्णा दुखकियो।
आनंद ज्ञानस्वरूप आतम प्रेम परिपूरण हियो॥

दो० जिनकी मूरति दूसरी सोम अग्नि रवि नयन।
तेहि समीप पहुँचो नहीं जरो बीचही मयन॥

सो० महाबात जिमि दीप का मन सम्मुख ह्वैसकै।
कैसे आव समीप काम मूल संसार यहु॥

विधिहिकामजब वशकरिपाये। निज तनया के पीछे धाये॥
चंद्र मदन रस ऐसे पागे। तारा गुरुपत्नी लै भागे॥
तथा मोहिनी रूप निहारी। * अह हमहूं धायो व्रतधारी॥
यहि विचारि यतिवर वपुधारा। जग पावन श्रीशम्भु उदारा॥
काम व्यथा चर्चा जहँ नाहीं। जयतियतीश्वरत्रिभुवनमाहीं॥
तीन लोक विजयी विख्याता। मुनि गंधर्व सुरासुर हाता॥
पावक सिंधु सकल जग हारा। जो धन्वी वर यहि संसारा॥
तेहि मनसिज से जे बरिआये। परमशूर त्रिभुवन गुणगाये॥
तिनकीमहिमा किमिकहिजाई। सुमिरत मनकोदोष नशाई॥
वशकरिलीन्हशांतिमतिमनकी। दांतिक्रिया सबरोकी तनकी॥
उपरति विषय स्तंभन कीन्हों। क्षांती मृदुतासों भरि दीन्हों॥
दिनप्रतिजो समाधि विस्तारी। बढ़ी ध्यान उत्कंठा भारी॥
श्रद्धा अतिशयप्रिय मनमाहीं। इनसबकर कारण हमनाहीं॥
जानि सकहिं किमुपर वैरागा। अथवा कारण अपरविरागा॥
वनितासरिस विजनताप्यारी। देहिं सदा मन आनँद भारी॥
जो प्रारब्ध वेग मिलि गयऊ। देह स्थिति निमित्तसोभयऊ॥

---

* आश्चर्य॥

गृह गोचर ममता सब त्यागी। उरवासी शिवसन लौलागी॥
देखत जाहिं शैल सरिता वन। ग्राम नगर नर पशु पतंग गन॥
इंद्रजाल महँ चतुर जो होई। मायाविविध देखावै सोई॥
मायानाथ ब्रह्म यह माया। दर्शायो बहु जगत निकाया॥
श्री शंकर ऐसी बुधि कीन्हें। चले जाहिं मारग मन दीन्हें॥
जे वादी श्रुति धेनु पुरानी। निजनिजपथ खैंचे अकुलानी॥
निजमारग प्रवृत्त तेहि कीन्हा। एकदंड तेहि कारण लीन्हा॥
खल मतवादिं कुमारगगामी। दण्डदीन्हसबकहँ श्रीस्वामी॥

छं० मदभरे अति स्वच्छंद जल्पक मर्मभेदक जे रहे।
संसारि मृगकहँ श्वान से नहिं जाहिं काहूपै गहे॥
कहौकौनक्लेशनहोतविप्रन परतनहिंकेहिशोकमें।
सोदण्डधरमुनिराजरक्षक होतनहिंयहिलोकमें॥

सो० अंग वसन काषाय दण्ड एक धारण किये।
प्रभु वन देखो जाय श्री मुनि गोविंदनाथ को॥

जो नर्मदा तीर अति पावन। तहांप्रवेशकीन्ह श्रुतिभावन॥
अस्ताचल गमने जब दिनकर। सांझ समय पहुँचेश्रीशङ्कर॥
सरि तट द्रुम बयारि जो लागी। हर्षित भे श्रम पीड़ा भागी॥
विपिन मध्य गमने सुखदाई। जहां अनेक यती रहे छाई॥
कहुँ मृगचर्म कतहुँ कोपीना। कहुँ कंथा कहुँ करक नवीना॥
वल्कलादि छाये मन भावैं। वृक्ष मनहुँ मुनिवास बतावैं॥
रहे तहां जे मुनिवर ज्ञानी। गुफा तीर लैगे सन्मानी॥
चोरो और द्वार कहुँ नाहीं। गुरुवर वास करै तेहिमाहीं॥
तहां छिद्र प्रादेश प्रमाना। सोई जनु प्रतिहार समाना॥
श्रीगोविन्द गुहा अतिपावनि। शरणागतपरितोष बढ़ावनि॥
देखि तीनि परिकरमा दीन्हीं। छिद्रसमीप दंडवति कीन्हीं॥
तुष्ट हृदय पुनि अस्तुतिठानी। विगतशोक शुभलक्षणबानी॥

छं० पतगेंद्र वाहन श्री रमण पर्यंक रूप सोहाव जो।

कामारिके पदमाहिं नूपुर के सरिस छविपावजों ॥
सबसिंधु पर्वतसहित पृथ्वी जासुशीशविराजही।
श्रीशेषरूपनमामिसद्गुणखानि श्रीमुनिराजही ॥
भयभीतलखिनिजशिष्यगणनागेशरूपविहायकै।
जिनकरिअनुग्रहसेवकनपरसौम्यवेष विधायकै ॥
सीशांतमुनिवरऋषिपतंजलिप्रकटभेहौ आयकै।
प्रणामामिपुनिपुनितवचरणनिजहृदयहर्षबढ़ायकै ॥
जोजायकै पातालमहँ श्रीशेषसन पढ़ि आयकै।
पुनियोगअरुव्याकर्णकीवरभाष्यदीन्ह बनायकै ॥
यह महा जगउपकार जिनको रहोपृथ्वी छायकै।
तिनआपुकीमैंशरणआयों सकलआशविहायकै ॥
दो० व्यासपुत्र के शिष्यवर गौड़पाद भगवान।
उनके यशधर आपुकी नहीं जगतउपमान ॥
परब्रह्म की मोहिं जिज्ञासा। तेहि कारण आयोंतवपासा ॥
सुनि तव महिमा परम उदारा। शिष्य होनहित नाथतुम्हारा ॥
अपने शरणागत प्रभु जानी। करहु मोहिं उपदेश सुबानी ॥
मुनिवर सुने शम्भु के वयना। अतिशयनिपुणप्रेमरसअयना ॥
बड़े भाग खुल गई समाधी। पूछा श्रीमुनि बुद्धि अबाधी ॥
को तुम कहां जन्म तव भयऊ। श्रीशंकर यह उत्तर दयऊ ॥
छं० स्वामी न मैं आकाश मारुततेज नहिं पुनिजलमही।
नहिं शब्द पर्श न रूप नहिं रसगंध प्राणहुं मैंनहीं ॥
हौंमैं न मन बुधिचित्त अहमिति सकलसाक्षीरूपजो।
केवलसनातन परमअजमोहिं जानिये शिवरूप सो ॥
सो० सुनि शंकर के बैन आतम अनुभव रस भरे।
हर्ष करुणाऐन बोले यह वाणी मधुर ॥
शंकर तुम निश्चय कर शंकर। लीन्हों है अवतार धरणिपर ॥
ज्ञानदृष्टि सब जानत अहऊं। मिथ्यावचनकबहुँनहिंकहऊं ॥

पुनिमुनिवर शंकर रुख चीन्हों। चरण गुहाते बाहर कीन्हों॥
भक्तिसहित शिव पूजा कीन्हीं। मानहुँसबहिसिखावनिदीन्हीं॥
पुनि कीन्हीं उपदेश सुबानी। श्रीगोविंद नाथ मुनि ज्ञानी॥
श्रीशंकर निवास तहँ कीन्हा। श्रीगुरुपद सेवा मन दीन्हा॥
जानत ब्रह्मतत्त्व पुनि सोई। लाभ भलीविधि जेहिमेंहोई॥
अस संदेह करै जनि कोई। जो जानत क्यों चाहतसोई॥
यह संशय कर सुनहु निवारण। संप्रदाय परिपालन कारण॥
जैसो मानुष तनु प्रभु धारा। चरित करैं ताही अनुसारा॥
भक्तिसहित कीन्हीं परिचर्य्या। अधिकप्रसन्नभये यतिवर्य्या॥

दो० मुनिवर शिवको कीन्ह तब ब्रह्मभाव उपदेश।
महावाक्य चहुँ वेदकर आशय रुचिर सुदेश॥

व्याससूत्र पुनि किये विचारा। तिनको हृदय जो गूढ़ अपारा॥
भलीभांति जान्यो श्रीशंकर। व्यासमतहि जो परब्रह्मपर॥
व्यास पराशर सुत गुणवाना। माता सत्यवती जग जाना॥
व्यास तनय शुकदेव सुहाये। जिनके चरित पुराणन गाये॥
उनके शिष्य भये मुनि राजा। गौड़पाद अस नाम विराजा॥
मुनि गोविन्दनाथ पुनि तिनके। शिष्यभये श्रीशंकर जिनके॥
मुनि गोविन्दनाथ के तीरा। शास्त्र जाल शंकर मतिधीरा॥
श्रद्धा सहित सुनै तिन पाहीं। जिनकीउपमा त्रिभुवननाहीं॥
प्रथमहिं गये जो शेष समीपा। करिपरितोषितनाग महीपा॥
पुनिकीन्हों यहि विधि संकेता। हे अनन्त प्रभु कृपानिकेता॥

दो० निज विद्या उपदेश जो करिहौ मोहिं उदार।
तौ मैं करिहौं तासु बहु भूतल पर विस्तार॥

यहिविधि सत्यप्रतिज्ञा कीन्हीं। नागेश्वर तब विद्या दीन्हीं॥
असप्रभाव जिनकर जगगावा। तिनसों चौथो आश्रमपावा॥
सूर्य्यादिक पूजित परधामा। शंकरपायो अति अभिरामा॥
अतिशय ऊंचे पद पर राजे। जैसे ध्रुव महराज विराजे॥

पाटल वसन धरे तनु सुन्दर। यहि प्रकार शोभित श्रीशंकर॥
संध्या अरुणमेघ छवि छावा। मानहुंहिमगिरि कूट सुहावा॥
औरहु उपमा कहहुं सुहाई। जो मेरे मन में अति भाई॥
जनु अज्ञान महागज मारी। तासु चर्म रुधिराप्लुत भारी॥
उदित अरुण करके अनुहारा। सोइ अम्बर मिस तनुपर धारा॥

अथ शंकर को ब्रह्मरूप वर्णन॥

क्रीड़त ब्रह्मश्रुतिन मों जैसे। क्रीड़हिं निशिदिन शंकरतैसे॥
दो॰ परमहंस गति ब्रह्म जिमि तिमि शंकर भगवान।
ज्ञा निज महिमा मों निरत तैसेहि कृपानिधान॥
विधि प्रपंचरत ब्रह्म न होई। शंकर निःप्रपंच पुनि सोई॥
यहिते इन्हें ब्रह्म मैं जानहुं। निश्चययुतनिर्णयउरआनहुं॥
बृहिधातू को अर्थ उदारा। घटितसकलविधिबिनउपचारा॥
केवल भाव ब्रह्म को जैसो। शंकर को सोहै पुनि तैसो॥
श्री वामन दुइ पद सो नापो। त्रिभुवननिजकायासों व्यापो॥
जो इनको पद ज्योतिस्वरूपा। वहिसों पूरण त्रिभुवन रूपा॥
सतगुण इनको सो कहुँनाहीं। व्यापो भवपालन लयमाहीं॥
सतगुण जो लक्ष्मीधर केरा। केवल पालन काज निवेरा॥
बाल्यादिक जो दश आकारा। तिनसों सदा रहै यह न्यारा॥
हरिके मत्स्यादिक अवतारा। सदा होत जानत संसारा॥
तेहि कारण वैराग समेता। रमै जासु निज महिमा चेता॥
गुणविचारिसबश्रुतिमनधरहीं। विष्णुपरमपद वर्णन करहीं॥
जेहिकारणहरिसोंअतिशयतर। हैस्वरूपजिनकोअद्भुतवर॥
हरिते होय अधिक पद जाको। विष्णुपरमपद कहियेताको॥
शिव को भूतन सों आसंगा। इनहिं न कबहूं भूत प्रसंगा॥
वै गोवृषभ सहितनितविचरहिं। गोइन्द्रियसमये नहिंविहरहिं॥
उनको रहै विभूति प्रसंगा। इन्हहिं न* भूतिसाथसंसर्गा॥
उन ढिग †भोगि सर्प बहुताई। इन समीप भोगी नहिं जाई॥

* ऐश्वर्य † विषयी॥

दो० अद्भुत यद्यपि भांति बहु उन इनको व्यवहार।
वेद त्रिपुर के दहन ते शिव तुरीय उच्चार॥
त्रिपुरा सुर के तीनि पुर कीन्हें दहन गिरीश।
स्थूल, सूक्ष्म, कारण, त्रिपुर जारे इन जगदीश॥

त्रिपुरविजयशङ्कर जब कीन्हा। सुवरणरूप धनुष करलीन्हा॥
सुन्दर वर्णादिक जो धर्म्मा। इनढिगकोई बसहि न कर्म्मा॥
उनके शर के फल भगवाना। पुरुषोत्तम प्यारे गुणवाना॥
इनकी पूरु कर्म्म फल माहीं। है आसाक्ति स्वप्न में नाहीं॥
सविता सोम * अरी हैं जाके। धरणि रूप रथ सोहै ताके॥
अहमादिक बहुअरि जहिमाहीं। देहरूप महिमय रथ नाहीं॥
श्रोत्रादिक, ज्ञानेन्द्रिय, जानहु। हस्तादिककर्म्मेन्द्रिय, मानहु॥
ये दुइ पंच भेद पुनि प्राना,। व्यान अपान उदान समाना॥
मनबुधिचित, अहमितिअज्ञाना। कामरुकर्म्म वासना नाना,॥
यह पुर्य्यष्टकबिनहि सहाई। जेहि कारणजीता यतिराई॥
तेहिकारण सबश्रुति समुदाया। शङ्करकहँ परशिवकरिगाया॥

अथ परमहंस सत्त्व वर्णन॥

हंस महा वर्षा परिहरही। कमलनालभोजनपुनिकरही॥
मानसरोवर सदा विराजा। तैसेहि परमहंस यति राजा॥
पाप पयोदश घन गंभीरा। वेगसहित वर्षहिं दुख नीरा॥
वर्षा ऋतु संसृति दुर्वारा। दूरि तजैं मन परम उदारा॥
अति प्रचण्ड प्रतिपक्षी नाना। उनकोयश† नालीक समाना॥

दो० तासु नाल को ग्रास करि अतिसोहत यतिराज।
बुधजन मानस मानसर निर्म्मल सदा विराज॥

ब्रह्म क्षीर जग नीर समाना। उभयविवेक न कोउकरिजाना॥
करिविवेक हरिलीन्हों शोका। परमहंस तेहिको कहैं लोका॥
द्विजवरकरहिं बुद्धिअतिपावनि। × रागद्वेषबिलगायसुहावनि॥
नीर क्षीर के न्याय समाना। सारासार परस्पर साना॥

* चक्र † कमल × रागक्षय॥

सबको रह्यो अधिक दुर्बोधा। श्रीशंकर मुनिकीन्ह प्रबोधा ॥
तेहि सों परमहंस हैं सोई। रहे अशक्त और जे कोई ॥
विषयनिम्बफलरसिक सदाहीं। काककहैं मुनिवर तिनपाहीं ॥
कूपरको तम × हंस निवारत। ये पुनि अन्तरदृष्टि सवाँरत ॥
वैनालीक प्रीति नहिं तजहीं। ये नालीक † प्रेमकहँ भजहीं ॥
जे अलीक विषयादि घनेरे। तिनकीरुचिकब आवतिनेरे ॥
जैसे वै जग के प्रियकारी। तैसे ये सब के उपकारी ॥
वै निज सुहृच्चक्र ‡ दुख हरहीं। ये निज मित्र वर्ग सुखकरहीं ॥
घट पटादि वै अर्थ विकाशैं। ये पुनि आतमअर्थ प्रकाशैं ॥
सो० ये लक्षण सब जानि उभय हंसगुनि मुनिनिरखि।
न्यूनाधिक उरआनि परमहंस हम सों कहत ॥

अथ वर्षाशरद् वर्णन ॥

हंस स्वरूप पाय श्री शङ्कर। करत स्वरूप विचार निरंतर ॥
मेघ चलहिं वर्षाऋतु पाई। दामिनि कबहुँ तहां दर्शाई ॥
भोगचपलता मनहुँ दिखावहिं। चपला की उपमासमुझावहिं ॥
रवि निष्ठुरपद सों नितछुवहीं। यहदुखहमइतनोनहिंगिनहीं ॥
जोहम ⊛ पुष्परूपजल वर्षहिं। निजकरसों सविताआकर्षहिं ॥
मम पत्नी महि को दुख देहीं। तेहिकर प्रसवहेतु हरिलेहीं ॥
यहु विचारि निज वैर सँभारा। घेरहिं सविताहि मेघ अपारा ॥
मेघ मण्डली बीच सुहाई। यहिप्रकार चपला छवि पाई ॥
ज्ञानवान ह्वै भोग विलासी। अंतरंग गत बोध कलासी ॥
दो० विष्णु रूप को पाय कै गर्जहिं मेघ गँभीर।
ब्रह्मभाव उपदेशजनु सबहिंकरहिं मतिधीर ॥
जेहिकारणअतिशयसबलोका। मुदितहोहिंसुनिनादविशोका ॥
ज्ञान गर्व्व पूरण उर छाया। मोरन यजनकरहिं यतिराया ॥
यहिरिसि देवराज चढ़िआयो। घनस्यन्दननिजधनुषचढ़ायो ॥
गिरि मल्लिका नवांकुर सुंदर। नीलझिंटि आमोद मनोहर ॥

× सूर्य † कमल ‡ चक्रवाक ⊛ वीर्य ॥

तासु पराग भरी मन भावैं। वन बयारि सुंदर तहँ आवैं ॥
सतरजतम गुणमिलतप्रकाशा। जनुजग माया केर विलाशा ॥
घन निशिचर दल सरिससुहाये। तमसमक्रवितनु की दरशाये ॥
तीक्षण शब्द करहिंअतिघोरा। लीन्हे चित्रित चाप कठोरा ॥
दो० भ्रमहिं घेरि सब ओरते दामिनि नयनदिखाय।
ध्यान यज्ञ जनु पतिन को भंग करैंगे आय ॥
गगन धाम सब ढाँपिके छोड़हिं जलकी धार।
तेहि अवसर निजरूपको शंकरकरहिं विचार ॥
सब इन्द्रिय रोंकी सुरसाईं। आतमगतमनकीन्ह गोसाईं ॥
व्यास सूत्र नय सहित सुबानी। श्रुतिकेमधुर अलापसयानी ॥
आतम ढिग शंकर बुधिसुंदरि। पहुँचीतनअभिमानदूरिकरि ॥
परम प्रीतिभाजन श्रुतिगायो। ऐसोनिज प्रीतम जब पायो ॥
तासु पर्श महँ धीरज त्यागी। तहाँ बिलाय गई रस पागी ॥
जेहिविधिमानिनि सखीसयानी। युक्तिसहितकहिकहिमृदुबानी॥
विनतीकरिप्रीतमढिगलावहिं। तेहिकोअतिशयमानमिटावहिं॥
सर्वोत्तम प्रीतम पहँ जाई। धीरज देह दशा बिसराई ॥
सब प्रकार तेहि महँ लय होई। शंकर बुद्धि भई गति सोई ॥
जहँ सविताकर नाहिं प्रकाशा। नहिंतारा❀तति हिमकरभाशा॥
इनसब कर प्रकाश जहँ नाहीं। विद्युताग्निकेहि लेखे माहीं ॥
निज सुख रसपूरण नभ माहीं। दिविभुविकालकछूतहँनाहीं ॥
श्रुति वर्णित असजासु प्रकाशा। बुद्धिफुरनकीतहँकिमिआशा ॥
सहजानन्द रूप जल राशी। सबमायामलगतअविनाशी ॥
संत चित्त अति गुप्त स्वरूपा। परशिव तहिमाजासुअनूपा ॥
हेयादेय जहां कुछ नाहीं। मगनरहतशंकरतेहि माहीं ॥
विष्णु गात सम श्याम शरीरा। पीताम्बरसम दायिनिचीरा ॥
ऐसेहु महा सुभग जो रहेऊ। पय संग्रह मलीन ह्वै गयऊ ॥
ऐसो संग्रह जानि अभागा। होइधरणिपरकेहि न विरागा ॥

❀ पंक्ति ॥

सलिलाशयकलुषितसबभयऊ। हंसहृदय मानस महँ गयऊ॥
और भाँति आश्रय है जाहीं। केहि को मानस चिंतानाहीं॥
गगनवीथि महँ मेघ अपारा। जहाँ सुधाकर केर प्रचारा॥
घनगतविधुकरनहिंअतिभाशै। कोमलीनतट पहिरि प्रकाशै॥
बड़े तृषा जे युत चातक गन। स्वाती पै पाये हर्षित मन॥
अमृतहु चाह किये नर पावै। चातकसम घनआश लगावै॥
यहिप्रकार अतिशय जलवर्षै। पवन तमाल विटप आकर्षै॥
दो० नदी तीर अति सुभग वर रहा भूमिसुर ग्राम।
तेहिसमीपशंकर बसहिं जीतिसकल गोग्राम॥
परमपूज्य गुरुचरण सुखाकर। भक्ति सहित पूजत श्रीशंकर॥
वर्षाकी अतिशय झरि भारी। पाँच दिवस नहिंखुलेतमारी॥
शुण्डादण्ड गिरैं जल धारा। भईतहाँ अति वृष्टि अपारा॥
माखाअगमभये तेहि काला। अतिसमीरकम्पिततरुजाला॥
ग्राम भवन तट वृक्ष गिराई। बाढ़ि नर्म्मदा की बहुआई॥
प्रलयसिंधुसमचहुँदिशि धायो। घोषसहितजलभयसरसायो॥
तेहिभय व्याकुललोगपुकारा। सुनिशिवनिजमनकीन्हाविचारा॥
गुरु समाधि महँ विघ्र न होई। सुखीहोहिंजेहिविधिसबकोई॥
तुरत शोचि करवा कर लीन्हों। बहुरिताहिअभिमंत्रितकीन्हों॥
जलप्रवाह सम्मुखधरिदीन्हा। सकलवारितेहिमाभरिलीन्हा॥
जैसे घटसम्भव ऋषि सागर। मंत्रप्रभावलियोनिज करपर॥
मुनिवर जबसमाधि सों जागे। लोगन चरितकह्योप्रभुआगे॥
सुनिप्रसन्नअतिशय मुनिराई। योग सिद्धि जल्दी इन पाई॥
कुछदिनमें वारिद सब गयऊ। तबशिवसनगुरुबोलतभयऊ॥
देखहुतात विमल आकाशा। शरदपायअतिकरहिंप्रकाशा॥
विमल ब्रह्म विद्या जिमिपाई। ब्रह्म तत्त्व की छवि दरशाई॥
दो० मेघ यती जलधार वर वाणी अमृत समानि।
औषधिसेवक तृप्तिकरिजाहिंस्वरुचि अनुमानि॥

घनविमुक्त अतिशयसुखदाई। शीतरश्मि की असितछबिछाई ॥
मायावरण भयो जब नाशा। यथा तत्त्वविद्बोध प्रकाशा ॥
वारिदमाला सकल बिलानी। तब उडुगण शोभा सरसानी ॥
मत्सरादि जबदोष विनाशहिं। मैत्र्यादिकगुणआपप्रकाशहिं ॥
मत्स्य कच्छपमयी सरिभावै। हरि मूरति की उपमा पावै ॥
चक्रावर्तवती अति राजै। मनहुं सुदर्शन चक्र विराजै ॥
भुवनरूप जलगर्भ सुहाई। सदा बसै कमलिनिसुखदाई ॥
परमहंस नित सेवहिं ताही। यती हंस पुनि सेवत याही ॥
चिरसंचित धनसम जनुवारी। चपला मनहुं मनोहर नारी ॥
सबकुछत्यागिलीन्हिसंन्यासा। शरदमेघ यहि भांति प्रकासा ॥
शरदकाल वह अधिकसुहावै। यतीराज कैसी छवि पावै ॥
चंदनि जनु विभूति तनु राजै। चंद्र कमंडलु सरिस विराजै ॥
बंधुक पुष्प समूह सुहाये। काषायाम्बर सम छवि छाये ॥
निर्मल शरद सरोवर वारी। सोहत जनु तब मनछविभारी ॥

दो० परमहंस के संग सों भयो रजोगुण नाश।
तैसे सर को विरज जल हंसन पाय प्रकाश ॥

शरद वारिधर की वर पाती। सोहत भानु गगनयहिभाती ॥
चंदन कौस्तुभ सहित सुहावा। मानहुँ माधवउरछवि छावा ॥
मुनिजन हृदयादिक वरपंकज। ऊपर मुखछैराजहि गतरज ॥
योग कला छवि युत सरसाये। हरिहर रूप ध्यान बल पाये ॥
तिमि सरपंकज रविकर पाई। उद्गतविकासितछविसरसाई ॥
रेणु भस्म पल्लव पटधारी। भ्रमरमाल माला छविहारी ॥
कुडमल रूप कमंडलु सुषुमा। विटपलहै यतिकी वरउपमा ॥
धारणादि श्रवणादि उपाया। सुखसों वर्षाकाल बिताया ॥
शरदपाय यतिराज विचरहीं। पाद पद्म रज पावन करहीं ॥
तेहि कारण काशी तुम जाहू। करहु मोरि आज्ञा निर्वाहू ॥
वेदराशि उद्धव वर बानी। भव दावानल मेघ बखानी ॥

करहु तत्त्वपद्धति कर निर्णय। सारासार विभागहि वर्णय॥
वेदव्यास हमसन कहिराखा। तुमहिं सुनावहुं सो मुनिभाखा॥
एकबार हिमगिरि के ऊपर। कीन्हअत्रिमुनि*सत्रमनोहर॥
बड़ोभयो मुनि ऋषयसमाजा। आये सुरवर सह सुरराजा॥
दो० तहां पराशरसुत कियो श्रुति शिर अर्थप्रकास।
मैं तब यह बिनती करी सुनौ महामुनि व्यास॥
वेद विभाग कीन्ह बहु भाँती। भारत अरु पुराण की पाँती॥
योगशास्त्र पुनि अधिकउदारा। ब्रह्मसूत्र प्रकटे श्रुति सारा॥
शारीरक को हृदय गँभीरा। है अथाह जिमि सागरनीरा॥
कोउवादी निजमति अनुसारा। वर्णहि कल्पित अर्थपुसारा॥
आप कृपाकरि भाष्य बनावो। सकल विपर्य्ययदोष मिटावो॥
सुनि मम वचन व्यास हर्षाई। यह गाथा तब मोहिं सुनाई॥
जो तुम वचन कह्यो मोहिंपाहीं। सुरनकहै शिवसंसदि माहीं॥
तात होयगो शिष्य तुम्हारा। सब गुणयुत सर्वज्ञ उदारा॥
अतिउल्वण सरिता जलभारी। जो करिलैहै करक मँझारी॥
करि खण्डन दुर्मत दुखदाई। सोइपुनि रचिहैं भाष्य सुहाई॥
कातिकहिमकरसरिस सुहावा। तव यश सब गैहैं मन भावा॥
यह कहि मुनिवर गे कैलासा। जो हम सुनारहा मुनि पासा॥
सो सब प्रिय चरित्र तव देखा। भयो हृदय परितोष विशेखा॥
तुम पुरुषोत्तम शिव भगवाना। तुमसमानजगऔरनआना॥
जेहि विधि होय लोक उद्धारा। सोई मन में करहु विचारा॥
ब्रह्मसूत्र की भाष्य मनोहर। औरहुग्रन्थ रचहु तुमसुन्दर॥
दोषरहित अद्वैत प्रकाशा। करहु लोक अज्ञानविनाशा॥
शशिधर नगर जाहु प्रियकारी। जहँ सुरसरि सुखमावपुधारी॥
तुम्हरे ऊपर बिन श्रम सेवा। करिहि अनुग्रह शंकर देवा॥
यहि प्रकार मुनि दीनदयाला। बिदाकीन्हसमुझायकृपाला॥
सो० शंकर के उर प्रेम सदा चरण सेवन करौं।

* यज्ञ

नहीं रहा सोनेम गुरु आज्ञा सबसों अधिक ॥

पुनि पुनि करिवंदन दुखहरणा। पंकज के प्रतिभट युग चरणा ॥
गुरुवियोग दुख सहो न जाई। सो मूरति मन माहिं बसाई ॥
वाराणसी दीख पुनि जाई। विटप कदम्ब रहे बहु छाई ॥
सुरसरि तीर यज्ञ के शाला। हेमखंभ जहँ रुचिर विशाला ॥
नृपति भगीरथ कर तप भारी। तेहिकोफलसुरसरितनिहारी ॥
योगिराज लायक तटकुंजा। हरि शिर के शोभा की पुंजा ॥
विष्णुपाद निर्मल नखजाई। अथवा शंभुमौलि सों आई ॥
हिमगिरिसोंकिमिभयोप्रकासा। तेहितेफटिकसरिसजलभासा ॥
कल षटपद स्वर मानहुं गावैं। चलितकमलभुजनृत्यदिखावैं ॥
श्वेतफेन मोचित जनु हासा। भेंटति मानहु लहरि विलासा ॥
दिव्यबधू चितवनि सो श्यामा। भूषणभा* चित्रितअभिरामा ॥
कहुँ कहुँ कुचकुंकुम अरुणाई। सोह गंग बहु रंग सोहाई ॥
देवनदी जल मज्जन कीन्हा। तासुवारि सबश्रम हरिलीन्हा ॥
सुरसरि जलयुत मूरति सुन्दर। करैप्रकाशरुचिरतेहिअवसर ॥
हिमकरमणिप्रतिमा छवि छाई। श्रवत वारिकण विधुकर पाई ॥
विश्वनाथ पद कीन्ह प्रणामा। माधवादि पूजित सुखधामा ॥

दो० विश्वेश्वर को पूजिकै मन अति अधिक हुलास।
जगपावन हर क्षेत्रमहँ कीन्ह कछुक दिन वास ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यश्री ७ स्वामिराम कृष्णभारतीशिष्यमाधवानन्दविरचितेश्रीशङ्करदिग्विजये भाष्यकारसंन्यासवर्णनपरः पंचमस्सर्ग्गः ५ ॥

श्लोक॥ प्रचण्डपाखण्डतरुप्रभञ्जनः श्रुत्यर्थदीप्त्यासुरसाधुरञ्जनः।
यो बोधपाथोजदिवाकरोऽनिशं वन्दामहे तच्चरणौ मुनिप्रियौ ॥ १ ॥

अथ पद्मपादादिसंन्यास ॥

दो० श्रीशङ्कर आनन्दवन बस आनन्द समेत।
तहां एकदिन द्विजतनय आयो तेजनिकेत ॥

* दीप्ति

कमलनयननिजतनकी भासा। रविसमसबदिशिकरतप्रकासा॥
पढ़े वेद जानत श्रुति नीती। देखत शङ्कर ओर सप्रीती॥
चढ़ि गुरुकरुणातरणिअबाधा। तरयो चहै भवसिन्धु अगाधा॥
अतिविराग ब्याही नहिं दारा। तजि आयो औरहु परिवारा॥
चरणकमल महँ गा लपिटाई। त्राहि त्राहि शङ्कर सुखदाई॥
मुनिवर ताहि उठाय सप्रीती। रीझे लखि अतिप्रेम प्रतीती॥
को तुम कहां धाम क्यों आये। लक्षण तुम्हरे परम सुहाये॥
वय बालक वर बुद्धि सयानी। धीरजवान यथा बड़ ज्ञानी॥
हौ तुम एक*नैक से लागे। निर्भयफिरहुसकलभ्रमत्यागे॥
द्विजवर बोले गिरा सुहाई। वचन चतुरता अति दर्शाई॥
चोल देश महँ मोर निवासा। कावेरी जहँ करति प्रकासा॥
जे नर करहिं तासु जल पाना। लहहिंपरमहरिभक्ति सुजाना॥
महापुरुष दर्शन अनुरागी। घूमो बहुत देश गृह त्यागी॥
कोउ सत्कर्म्म इहां लै आयो। नाथ चरण दर्शन हम पायो॥

दो० भवसागर बूड़त फिरौं अतिशय भीति समेत।
पार करहु मोहिं करि दया शङ्कर कृपानिकेत॥

छं० स्वापांगसुधाप्रवाहलहरिन शोक भयहरिलीजिये।
अपनीकृपामयदृष्टिसों ममदिशिविलोकनकीजिये॥
गुणदोष मेरे यहि समय जो आपु निजउर लाइहौ।
तौ नाथ निरवधिकृपानीरधिविरुदप्रभु कब पाइहौ॥
यशराशि ह्वैहै आपुकी मोहिं दीनपर करुणा किये।
वैसो न यश उपदेश प्रभु श्रीमान समरथ कहँदिये॥
जेहिभांतिवर्षत मरुथलीजलधरपरमअस्तुतिलहै।
सौवर्ष वर्षहिं सिन्धुमहँ कीरतिगिरा नहिं कोउ कहै॥

सो० तव सुख शारदसार सुधा सरस निर्मल सुखद।
तहँ सारस अनुसार ममभति प्रभु विहरहु सदा॥

तथा करहिं यह विमलविचारा। कामादिक वश सब संसारा॥

---

* अनेक॥

पंचबाण कृत हृदय मलीना। आतमज्ञानरहित सब दीना॥
सूरधाम पुनि हिमकर मन्दिर। नहिं चाहत सो नगर पुरन्दर॥
धनदभवन अरु पावक वासा। पवनलोक की नहिं मन आसा॥
सबसों अधिक ब्रह्म को धामा। बरणत जाहि बहुतअभिरामा॥
सो० बढ़ो विराग प्रकाश तव वाणी की प्रीति सों।
तेहिको करै विनाश लोकवासना मलिन अति॥
सकललोक तव किंकर के उर। नहिं कौतुक उपजावहिं शङ्कर॥
पृथिवी के वनितादि मनोहर। विष वल्ली फलसम ते सुन्दर॥
लौकिक विषयन की यहशोभा। कबहूं नहिं मेरो मन लोभा॥
रम्भाकुच परिरम्भ विधाता। इन्द्रलोक नहिं कौतुकदाता॥
ब्रह्मलोक सब गुण जेहि माहीं। हम कहँ आदर पदसों नाहीं॥
तव नवीन वाणी गुणखानी। चन्द्र अमृतके धार समानी॥
मन चकोर चाहै नित ताही। दूजी बात न ताहि सोहाही॥
स्वर्ग भूमि कहँ जो सुखकारी। सकल सुमंगलप्रद दुखहारी॥
दीनन को धन सो घर भरई। भव निर्मूल नाश जो करई॥
असगुन मन्दिरभजन तुम्हारा। तहँ उत्कण्ठित चित्त हमारा॥
सदा रहहु दूसरि नहिं आसा। भजनसदामनकरहिनिवासा॥
दो० भव व्याधिन के वैद्यवर शिव लीन्हों अवतार।
यहि सुनि आयों शरण मैं मेटनहित दुखभार॥
भवबन्धन यह रोग अपारा। हरहु नाथ भवरुज परिवारा॥
मोर परम दुख मेटनहारा। तुमसमान नहिं कोउ संसारा॥
यहिविधिसुनिअतिविनयविलासा। दीन्हकृपानिधितेहिसंन्यासा॥
प्रथमशिष्य शङ्कर गुणधामा। वरणत सन्त सनन्दन नामा॥
यह संसार समुद्र अपारा। गयोचहै द्विज बालक पारा॥
दृढ़ नौका संन्यास स्वरूपा। भयो कृपा रस दण्ड अनूपा॥
ऐसी तरणि चढ़ाय उदारा। करिदीन्हों भवसागर पारा॥
जे औरहु देवन के अंसा। सेवन हेतु चन्द्र अवतंसा॥

भूसुर कुल महँ प्रकटे आई। सहितविराग शम्भुपहँजाई॥
पहिलेहु सेवक सुर समुदाई। अबहूं शिष्य भये हर्षाई॥
गिरि कैलास शिखर श्रुतिगावा। अतिसुन्दर वटवृक्ष सोहावा॥

दो० तेहितर बैठे मौन गहि शङ्कर परम सुजान।
तरुणमनोहर रूप हर जगगुरु कृपानिधान॥

तिनसमीप सुर मुनिऋषिवृद्धा। वामदेव सनकादिक सिद्धा॥
तेऊ सकल मौन ह्वै जाहीं। जेहिकारणकुछसंशय नाहीं॥
जग पावन वर चरित घनेरे। ये ऐसे सेवक हर केरे॥
जग उद्धार हेतु शिव आये। तिन सबहुन भूसुरतन पाये॥
सेवहिं श्रीशङ्कर के चरणा। तिनकोसुकृतजायनहिंवरणा॥

छं० श्रीशेष अपने साधु शब्दन लोग संतोषित करैं।
कविराज मुनिवरबालमीकहुकल्पितास्वर चितहरैं॥
मुनिव्यास वर्णित सूत्र देवहिं काल पीछे अर्थ को।
तत्क्षणकृतारथ करत शंकर तिन समान समर्थ को॥

दो० चक्र तुल्य महिमा सुभग शंकर सेवहिं लोक।
वक्र पंथगत बुद्धिनिज कीन्हीं विमल विशोक॥

जिमिकिरणनसविताछविपावा। नयनसमूह सुरेश सोहावा॥
कल्पविटप पुष्पन सों राजहिं। शिष्यनसोंतिमिशंभुविराजहिं॥

अथ शंकर विश्वनाथ संवादः॥

कुछ दिन गत ग्रीषमऋतुआई। भई सो काशी पाय सोहाई॥
मध्यदिवस अति आतप छावा। जनुशिवतीसरनयनदेखावा॥
दिनकरकी किरणैंअतिचमकैं। तिनहिंपाय*सवितामणिदमकैं॥
मणिभूमी जहँरुचिरसँवारी। तरणिकिरणितहँअतिशयप्यारी॥
कहुँ सामुद्र पूर सम भासै। मोरपंख छवि कतहुं प्रकासै॥
दिनमणि जनु मायावी आयो। बहुत भांति को रंग देखायो॥
कमलखण्डगतविमलसराला। अरु शकुन्ततरुजम्बु रसाला॥
गिरि कन्दर महँ मोर अदीना। जल अथाहगतसुस्थिरमीना॥

* सूर्यकांति॥

शंकर जानि समय मध्याना। चले करन सुरसरि अस्नाना॥
शिष्य मध्य सोहैं प्रभु कैसे। उडुगण बीच सुधाकर जैसे॥

दो० शंकर देख्यो निकट तर आयो एक चंडाल।
लीन्हें अपने संग महँ चारि श्वान विकराल॥

जाहि दूर तेहि सन शिव बोले। तेहू उतर दिये अनमोले॥
अद्वितीयमनवद्यमसंगं * । सत्यबोध सुखरूपमखण्डं*॥
श्रुतिकहैं आतम परम पवित्रं। तहां भेद कल्पत तव चित्रं॥
दहिने कर महँ दण्ड विराजै। बांयें हाथ कमण्डलु राजे॥
वसन कषाय महाछवि देहीं। बोलत वचन चित्त हरि लेहीं॥
ज्ञान गंध आई नहिं ढिगहीं। वेष बनाय गृही जन ठगहीं॥
दूरि करौ केहिको यतिराजा। देह किधौं जो देह विराजा॥

छं० यहि अन्नमय ते अन्नमय को भेद कहु कौने लह्यो।
तिमि भेदसाक्षी साक्षिकर नहिं जात काहूपर कह्यो॥
द्विजवर श्वपच को भेद प्रत्यगआत्मामों नहिं बने।
यतिराज यह मेरी गिरा मनमें विचारो आपने॥

सो० दिनकर बिम्ब उदार पड़ो देवसरि धार में।
सोई सुरा मँझार उभय मध्य अन्तर कवन॥

जो बहु सब में आप विराजै। सकलशरीर जासुछवि छाजै॥
एक पुराण पुरुष श्रुति भावा। ताहिछोड़ि तवमन हठभावा॥
हैं हम भूसुर परम पुनीता। श्वपचदूरि हमसों अपुनीता॥
विमल अचिन्त्य अनादि अरूपा। अज अव्यक्त अनन्त अनूपा॥
निजस्वरूप अनभूलिसोहावन। गहो देह अभिमान अपावन॥
करिकर सम चंचल यह देहा। आपु मानि बढ़िगये सनेहा॥
मुक्तिपदी पाई शुभ विद्या। संग न छोड़ा तबहुं अविद्या॥
त्यागि दियो सब सुखसमुदाई। जन संग्रह तबहूं दुखदाई॥
मायानाथ केर यहु जाला। इन्द्रजालते अधिकविशाला॥
बूड़हिं तुमसे ज्ञाननिधाना। अहो मोहमहिमा बलवाना॥

दो० यह सुनि अन्त्यजकी गिरा शंकर कीन्ह विचार।
श्वपच न होय देव कोउ बोलत वचन उदार॥

अत्युदार चरितामृत धारा। शंकर कही गिरा सुखसारा॥
आपु कहैं सब सांचे वयना। पुरुषप्रवरतुमसबगुणअयना॥
यहु अन्त्यज ऐसी मतित्यागौं। तुम्हरे बोध वचन अनुरागौं॥
भेद शून्य दुर्ल्लभ जग माहीं। उपालम्भ करिये केहि पाहीं॥
श्रुतिशिरमुनिआतमसबजानहिं।इन्द्रियवर्गविजयकरि *मानहिं
ध्यानहुं करहिं सदा मन लाई। भेदबुद्धि तबहूं नहिं जाई॥
आतमरूप सकल जग जाही। करौं प्रणाम सदा मैं ताही॥
श्वपच होहु द्विजवर वा होहू। हमरे मन माहीं संदेहू॥
जो चैतन्य शक्ति हरि पाहीं। सोई कीट पतंगहु माहीं॥
सो त्रिकाल मैं हौं अविनाशी। मैं न दृश्य जो भ्रान्ति प्रकाशी॥
ऐसी जेहि की बुद्धि उदारा। कोऊ होहु सो गुरू हमारा॥
घटपटादि जहँ उपजै ज्ञाना। तजि उपाधिश्रुतियुक्तिप्रमाना॥
ज्ञानमात्र हौं आनँद रूपा। जेहिकी ऐसी बुद्धि अनूपा॥
पावन होहु अपावन देहा। सो नर मम गुरु नहिं संदेहा॥
यहिविधिकहतवचनश्रीशंकर। नहिं तहँ अन्त्यजश्वानभयंकर॥
चन्द्रकलाधर आगे पाये। मूर्त्तिमान सँग वेद सोहाये॥
भयधृति विस्मय हर्ष सहीता। भक्तिसहितअस्तुति सुपुनीता॥
करनलगे श्रीशिव कहँ देखी। भयो मोद परितोष विशेखी॥

दो० देहदृष्टि तव दास हौं जीवदृष्टि तव अंस।
आत्मदृष्टि तव रूप हौं सुनहु चन्द्र अवतंस॥

शंकर सर्वातम जगदीशा। यह मम निश्चयहै गौरीशा॥
लौकिक मणिमहँ होत प्रकाशा। जहां रहै भासै निज भाशा॥
खोदी जान शान पर चढ़ई। मणि मंजूषा भीतर रहई॥
परमहंस तहँ मन नहिं धरहीं। छुइबे की इच्छा नहिं करहीं॥
असिमणितेगुणकोटिप्रभाशा। भीतर बाहेर करहि प्रकाशा॥

* मनन करते हैं॥

त्रिभुवन मंजूषा जेहि नाहीं। सबसों पड़समाय केहिमाहीं॥
चहिअजाहिनहिंखनीनशाना। यतीकरहिंजेहिकरनितध्याना॥
सदा चाह राखैं जेहि केरी। यतन करैं मन प्रीति घनेरी॥
प्रणवहु तत्पदलक्ष्यस्वरूपहि। त्वंपदलक्ष्य अभिन्नअनूपहि॥
सबकर परम प्रकाशक जोई। निगम शिरोभूषणमणि सोई॥

छं० है शास्त्र जगमहँ धन्य तुम पर तत्त्व जो बोधन करै।
का लाभ दीन्हों शास्त्र नहिं जो गुरुकृपा उरमें धरै॥
नहिं भयो पूरण बोध जो तौ गुरुकृपा कह फलदियो।
पुनि बोधसों का लाभ जो अवलम्ब ममनाहीं कियो॥

सो० जासु ज्ञान पर्यन्त सब अचरज यहि जगत महँ।
प्रणमों ताहि अनन्त निज स्वरूप भूतार्थ जो॥

यहिविधि शंकर अस्तुति करहीं। अश्रुबिन्द नयननसों गिरहीं॥
बहु प्रकार तव करि सन्माना। बोले शंकर कृपानिधाना॥
विधि हरि हर पदवी तुम पाई। निज स्वरूप निष्ठा सरसाई॥
व्यास तुल्य ह्वैहौ जग माहीं। ममप्रिय तुमसम दूसर नाहीं॥
वरदायक सब के संसारा। ह्वैहैं तव यश धरणि अपारा॥
वेदव्यास करि वेद विभागा। ब्रह्मसूत्र पुनि रचे सुभागा॥
सूचन करहिं ब्रह्म कहँ जोई। तेहिते ब्रह्मसूत्र भे सोई॥
जहँ कणादि सांख्यादि अनेका। खण्डे सब मत सहित विवेका॥
मूढ़न तिनकी भाष्य बनाई। दुइ वा तीनि वाक्यबल पाई॥
अपनी जानि बहुत कछु जाना। कलि के दोष बड़ो अज्ञाना॥
भयो अर्थ उनको अयथारथ। तुम समर्थ हौ करहु यथारथ॥
श्रुतिशिरअभिप्राय तुम जाना। दुर्मत खण्डहु सहित प्रमाना॥
सूत्रभाष्य अब करहु सोहाई। भलीभांति श्रुतियुक्ति घटाई॥
ह्वैहै तुम्हरो भाष्य उदारा। बड़ आदर करिहै संसारा॥
दोषरहित इन्द्रादिक देखी। करिहैं आदर तासु विशेखी॥

दो० कमलासन की सभामहँ पुनि ह्वैहै सत्कार॥

यहिविधि राउर भाष्य की अति महिमा विस्तार॥
भास्कर भेदाभेद बतावै। अभिनवगुप्त शक्तिगुण गावै॥
नीलकण्ठ है मम आराधक। अहै परन्तु भेदकर साधक॥
मण्डन मिश्र प्रभाकर सोऊ। केवल कर्म्म परायण दोऊ॥
मण्डन मुखिया है सब माहीं। तेहि समान कोउ दूसर नाहीं॥
सबन जीति अद्वैत सोहावा। थापहु जगमहँ सब श्रुति गावा॥
मोहनिशा तम खोवनहारे। रवि समान हैं शिष्य तुम्हारे॥
परम तत्त्वपथ पालनकारण। तहँ तहँ बैठारहु जगतारण॥
ह्वै कृतकृत्य लोक सुखदाई। तव मूरति मो महँ मिलि जाई॥
दो० यहिविधि करि अतिशय कृपा वेदनसहित महेश।
तब अन्तरहित ह्वै गये करि शंकर उपदेश॥
विस्मित शिष्य सहित हर्षाई। स्नान कीन्ह सुरसरिमहँ जाई॥
मज्जन विधि करि ध्यान लगावा। तब शिवके मनमहँ यहु आवा॥
अब विलम्बकर अवसर नाहीं। जग उपकार होय जेहिमाहीं॥
भाष्यादिक बहुग्रन्थ बनावों। जो शिव कह्यो सो करि दर्शावों॥
चंचरीक जिमि कमल विहाई। यथा हंस मानस तजि जाई॥
यहिविधि विश्वनाथ वर पाई। कुछ दिन रहे चले मुनिराई॥
जे अद्वैताचार्य्य विराजा। तिन सब के श्रीशंकर राजा॥
श्रीहिमगिरिकहँ कीन्ह पयाना। चन्द्रबिम्ब जनु छत्र समाना॥
दो० सन्मुखगामि प्रकाश मिष निर्मल सुखद सुचारु।
मानहुँ दिग्ललना सुभग रुचिर चमर शिर हारु॥
सुरनर शान्तिजनक सुखकारी। उत्तरदिशि लागी अतिप्यारी॥
तहँ तहँ तीरथ सेवन कीन्हें। चले जाहिं बदरी मन दीन्हें॥
कहुँ शीतल कहुँ उष्ण उबीधो। कहुं कुटिल मारग कहुँ सीधो॥
कहुँ नहिं कहुँ कण्टकमग माहीं। यथा मूढ़मन एकरस नाहीं॥
देखहिं आतम अज अविनाशी। तद्यपि लौकिकरीतिप्रकाशी॥
कहुँ कहुँ सरस मधुरफल खाहीं। तोय पानकरि कहुँ रहिजाहीं॥

सोवत बैठत उठत बहोरी। शिष्यसंग शोभा नहिं थोरी ॥
यहिविधि करि मारग उल्लङ्घन। क्षेमसहित पहुँचे बदरीवन ॥
जहँ गिरि गौरीतात सुहावा। जहँ तहँ गंगधार छविपावा ॥
जासु दरी खेलहिं सुरनारी। करहिं गात शोभा उजियारी ॥
जे समाधिरत गत अभिमाना। ⊛ षष्ठ सप्त नव विगतसुजाना॥
तिन ब्रह्मर्षिन साथ उदारा। कर श्रुति शिर विचार बहुबारा॥
बरहीं वर्ष लोक सुखदाई। ब्रह्मसूत्र कर भाष्य सुहाई ॥
अधिकभव्य अरु मधुर गँभीरा। रचत भये शंकर मतिधीरा ॥
आत्मतत्त्व कर बदर समाना। दूर कियो सब मोह निदाना ॥
जे उपनिषद् मुख्य दश गाये। सबके सुन्दर भाष्य बनाये ॥
भारत सारभूत पुनि गीता। सनत्सुजात संहिता पुनीता ॥
बहुरि नृसिंह तापनी सुहाई। इनसबकी वर भाष्य बनाई ॥

दो० पुनि उपदेश सहस्रिका शंकर रची सवाँरि।
औरहु ग्रन्थ अनेक प्रभु रचे सुभग मनहारि॥

छं० दुर्वाद व्याख्यारूप तम श्रुतिसूत्र महँ पहिले रह्यो।
श्री भाष्यकार उदार रवि के उदयसो क्षण में मह्यो॥
जे वादि रवि कर युक्तिसों सरिनाथ सम सूखे नहीं।
ते भाष्यवर निज शिष्य लोगन कहँ पढ़ावत सोहहीं॥

दो० शिष्य हृदय पाथोज कहँ शंकर भानु समान।
शम दमादिगुणसहितसब सेवहिं कृपानिधान ॥

तिन सबमहँ जे अति गुणवाना। भये सनन्दन आदि प्रधाना ॥
सो सब वेद पढ़ो सब जानहिं। गहनब्रह्मविद्याअतिमानहिं ॥
यहि ते अद्भुत नेम सहीता। पुनिपढ़िबे की रुचिसुपुनीता ॥
निजपदकमलमाहिं अतिप्रीती। प्रभु हर्षे लखि प्रेम प्रतीती ॥
उरमों अधिक दया सरसाई। तीनि बेर करि आपु पढ़ाई ॥
वेदसार निधि की शुभ खानी। सकल ग्रन्थरूपा निजबानी ॥
देखि सनन्दन कर सन्माना। औरन मनमहँ मत्सरआना ॥

⊛ षडूर्मयः सप्तधातवः ५ पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि ४ अन्तःकरणसहित नव ६॥

सो सब जाना श्रीवृषकेतू। अनुपम भक्ति दिखावन हेतू॥
एकदिन तटपर शंभु उदारा। रहे सनन्दन सुरसरि पारा॥
दै संबोधन शंभु पुकारा। तुरत सनन्दन कीन्ह विचारा॥
सो० जो गुरुभक्ति उदार तारहिं भवसारग महा।
क्यों न करैंगी पार सो हमको यहि सरितसों॥
यहविचारितजिसकलअँदेशा। सुखसों जलमहँ कीन्ह प्रवेशा॥
जहँ जहँ प्रीति सहित पगु धारा। तहँ तहँ सुरसरि पद्म उभारा॥
धरि कमलन पर चरण उदारा। प्रभुसमीप पहुँचो गुरु प्यारा॥
शिवकहँ विस्मय हर्ष अपारा। हृदय लगायो बारहिं बारा॥
अद्भुत देखि तासु गुणग्रामा। पद्मपाद धरि दीन्हों नामा॥
ज्ञान विटप के दाव समाना। कुमतपाशुपतकरअभिमाना॥
पाठ होत बेरा दुइ चारी। आप कह्यो पशुपत मतधारी॥
दो० कारज कारण योग विधि दुःख नाश ये पांच।
कहे पदारथ मुक्तिहित श्रीपशुपति प्रभु सांच॥
कारज कारण महत प्रधाना। योगसमाधी विधि अस्थाना॥
सब दुख नाश मुक्ति के पाये। पांच पदारथ पशुपति गाये॥
उभय भेद कारणमहँ जानहुँ। उपादान प्रकृती कहँ मानहुँ॥
अरु निमित्तकारणश्रीपशुपति। लोकहि और नाहिं दूजीगति॥
जैसे जग देखिय साकारा। तैसे पशुपति सहित अकारा॥
तुम जो ब्रह्मकहँ कारण मानहु। मुक्ति कौनविधि की उरआनहु॥
निराकार बहु जग सुखरूपा। सो सुखमय जग है दुखरूपा॥
प्रलयकाल जब जग लय होई। तासु दोष दोषी पुनि सोई॥
इत्यादिक बहु संशय कीन्हे। शंकर सब खण्डन करिदीन्हे॥
कारण सम सब कारज होई। ऐसो नेम दीख नहिं कोई॥
गोबर सों वृश्चिक भव होई। गोमयसमता लहहिं कि सोई॥
नख अरु केश देह सन जाये। तनसम कबहूं नहिं लखिपाये॥
घट शराव जब धरणि समाहीं। तिनको नहिं विकार महिमाहीं॥

टेढ़ी गोल भूमि नहिं होई । निज स्वरूप स्थिर सम सोई ॥
अरु मरीच सों थलहि न दोषा । ब्रह्म सदा तिमि रहहिं अदोषा ॥
जब कछु गर्व लखो वन केरा । कीन्हों मत खण्डन तिनकेरा ॥
पशुपति प्रकृतियोगनहिंलहई । चितजड़संगतिकिमिनिर्बहई ॥
उत्तम मध्यम हीन बनाये । दुखी सुखी जन जग उपजाये ॥
दो० ऐसे राग द्वेष को पशुपति लहहिं प्रसंग ।
यहि विधि तब अभिमत जगत कारण कै गो भंग ॥
ईश्वर समता मुक्ति जो भेद रहे क्यों होय ।
ध्यान जनित मानौ जोपै है मत ठीक न सोय ॥
जो उपजो नश्वर है सोई । जनितानित्यता केहिविधि होई ॥
पशुनमाहिं ईश्वर गुण आवहिं । मुक्तिसमय ऐसो जो गावहिं ॥
अंगहीनगुणकेहिविधिआवहिं। अंगविनाकोउ चलै न पावहिं ॥
पद्मगन्ध मारुत जिमि लावैं ।तिमिपशुपहँपशुपतिगुणआवैं॥
ऐसे जनि मानहु मन माहीं । उपमा को समुझै तुम नाहीं ॥
पंकज गन्ध सूक्ष्म परमानू । जात पवनसँग निश्चय जानू ॥
एक प्रश्न हमरी यह कहहू । अपने मनमें हठ नहिं गहहू ॥
मुक्तन महँ थोरे गुण आवैं । अथवा सब गुण आय समावैं॥
प्रथमपक्षनहिं बनहि तुम्हारा। दूजे आवहि दोष अपारा ॥
सबगुण जो पशुमहि चलिआये । ईशअबोधादिक गुण पाये ॥
छं० यहिभांति कर्कश तर्कसों निजपक्ष जब खण्डनभये ।
जे रहे विद्या गर्व पूरण मान सब तिनके गये ॥
जिमि गरुड़पंखसवेगहतफणसकलसर्प विमोहहीं ।
सबछोड़िविषज्वालातथा पशुनाथ सेवक सोहहीं ॥
व्याख्यासुशोभितचातुरी शिवशेषनयन नवावहीं ।
निजशिष्यमण्डलहृदयपद्म दिनेशभावदिखावहीं ॥
उल्लंघिदिक्पर्यन्त यश कुसुमन जगत बहु सोहहीं ।
मृगवादिमण्डल सिंहक्रीड़ा करत जनमन मोहहीं ॥

सो० वन वेदान्त विहार तीक्ष्ण तर्क नख दाढ़ सम।
शंकर सिंह उदार भयप्रद वादि गयन्द कहि॥
देखि अमानुष चरित सुहायो। लघुवयबड़ प्रभावप्रभुपायो॥
विस्मितमनअतिशयहर्षितउर। कहनलगे काशी के द्विजवर॥
सर्वशास्त्र द्योतित इन कीन्हें। विदुषहृदयभयसोंभरिदीन्हे॥
गुरू भास्कर गुप्त मुरारी। पायो सबन पराभव भारी॥
इन की निष्ठा सो हर्षाने। दर्शन देय शम्भु सन्माने॥
सूत्र भाष्य की रचना हेतू। प्रेरन कीन्ह आप वृषकेतू॥
दो० कुमत पंकमहँ मग्न जो रही पुरातन गाय।
व्यास उधारी धेनु सो बुधजन हित मनलाय॥
भाष्य मनोहर अमृतजल धोयकरी निष्पंक।
युक्तिसहितभूषितकियो सबविधि मेटि कलंक॥
तीनिलोक जेहिको पयपावन। पियतक्रियाफलरूपसुहावन॥
विधिस्वरूप द्विजवर गृहवासा। ताहिधेनुकहँ विगतप्रयासा॥
घोरखरन डारी गहि कूपा। पंकिलअधिककुतर्कस्वरूपा॥
भाष्य सिन्धु वचनामृत धारा। अंग धोय सब पंकनिवारा॥
श्रुतिशिर मिथ्या वचन सुनावैं। जीव ब्रह्म एकहि करि गावैं॥
यहविचारिअतिकरहि अनादर। एकन फेंकि दिये घर बाहर॥
कर्मिन यह कीन्हों अनुमाना। कहँ यजमानकेर गुणगाना॥
नैयायक पुनि औरहु वादी। श्रुतिशिरको जो भाव अनादी॥
वंचन करि तिन अर्थको रायो। और रह्यो औरहि दर्शायो॥
जेहिविधि तत्त्वमसी करभावा। सो तू है यह वेद बतावा॥
तेहिको तू है तेहिते जायो। यहिविधिबहुप्रकारउलटायो॥
अशरण सो उपनिषद सुहाई। श्रीशंकर शरणागत आई॥
मोद मान सब दुःख विहाई। राजहि श्रुतिआनँद सरसाई॥
छं० धायो हननहित जीवके जो शून्यमतवादी रहो।
पुनि जीवने काणाद सो कछु लाभ थोरो सो गहो॥

श्रीभट्ट पादादिकनसों निजपद गमन मारग लहा ।
कियोसांख्यकुछदुखदूरि प्राणायामपातञ्जलि कहा ॥
दो० तेहिसे भै कछु पूज्यता करि सब दूरि कलेश ।
श्रीशंकर यह जीव को करि दीन्हों परमेश ॥

भूत*ग्रसित आतम नहिं देखा । चार्वाक कहँ मोह विशेखा ॥
यद्यपि देख्यो योगाचारा । तदपिक्षणकतेहिकीन्हविचारा ॥
तार्किक मीमांसक पुनि देखा । भूतरहित निज उरमहँ लेखा ॥
सांख्यकृती कछु मानो नाहीं । भूतनगुण कछु आतम माहीं ॥
भूत असत्त्व काहु नहिं माना । तेहिते जीवरहा भय साना ॥
भूतसत्त्व सब दूरि बहाई । जीव अभय कीन्हों सुरसाई ॥
भयो न कछु अचरज व्यवहारा । ज्ञानधाम शंकर अवतारा ॥

दो० चार्वाक अपलाप करि डारो जीवहि घालि ।
ज्ञानगुणादिक भेंट दै कछु कणाद लियो पालि ॥
तिनसों कर्षिन छीनकै जीव कियो सुरदास ।
यज्ञादिक कीन्हों करै सदा स्वर्ग की आस ॥
तिनहुनसों पुनि खैंचिकै करिदीन्हों मन हीन ।
सांख्यन राख्योजीवको एक प्रकृति आधीन ॥
देखि परातमरूप सो सर्वेश्वर करि दीन्ह ।
श्रीशंकर अवतार जिन यही हेतु महि लीन्ह ॥

अथ भाष्यवर्णनम् ॥

कल्पलता सम शंकर बानी । सुमननकहँअभिमतफलखानी ॥
जिन देखी यह मधुरस सानी । औरभाष्यातिनमननहिंआनी ॥
श्री शारद सौभाग्य विहीना । तथा दुरन्वय सब गुणहीना ॥
वैबानी प्रिय लागहिं कैसे । सुरसरित्यागि कूपजल जैसे ॥
काम किरात शरासन बाना । विदलितउरधीरजनहिं जाना ॥
तिनकी बुद्धि रचित जे ग्रन्था । रस विहीन संसृति के पन्था ॥
शंकर ग्रन्थन अनुसर सोई । धीरजवान पुरुष जो होई ॥

---

* पंचभूत ॥

जेहिकर निर्मल मन अभिरामा। वर्जित भेद लह्यो विश्रामा॥
सुधासार अहमिति की हरणी। भगवत्पाद गिरा भवतरणी॥
कोउ कह तासु समान सोहाये। औरनहूं जो ग्रन्थ बनाये॥
जेहि के मन शंका असि ऐहै। सोई यह उपमा मन लैहै॥
कृत्रिम नहरि कुग्राम बनाई। देवनदी सम सहज सोहाई॥
यथा रुचिर शंकर शिर धारा। तैसोई है नहरि प्रचारा॥
दो० जेहि वाणी के स्वाद सों मधुरिपु वधू उदार।
कनक वृष्टिसों भरिदियो द्विजवर को घर द्वार॥
जौनि गिरा सुनि उमा भवानी। सौंदर्य्य लहरी हर्षानी॥
महाभयानक विषधर जेऊ। जाहि सुने भय देहिं न तेऊ॥
साबर मन्त्ररूप प्रभु बानी। तुलसिहुमहिमा जासु बखानी॥
अनमिल आखर अर्थ न जापू। प्रकट प्रसिद्ध महेश प्रतापू॥
श्री शंकर वचनामृत धारा। काहि देहि नहिं मोद अपारा॥
यतीराज वर गिरा उदारा। जनु सुरतरु कुसुमनकी धारा॥
अर्थ पंक्ति चिंतामणि नारी। वेणी नृत्य मनहुं मुदकारी॥
व्यंग्य समूह मनहुँ सुखदाई। कामधेनु पय लहरि सुहाई॥
ऐसे सुखद प्रबन्ध बनाये। सकलस्वर्ग सुख महि दर्शाये॥
कदली सरिस वचन मधुराई। श्रम अपहरनि अर्थ चतुराई॥
काव्य सकल गोक्षीर समाना। मानहुँसर्पिव्यंग्यध्वनि नाना॥
यतिवर गिरासकलगुणखानी। बुधलोगन अतिधन्यबखानी॥
जिनमहँ कर एकहु श्लोका। प्रमुदितकरहिसदाकविलोका॥
गिरागुम्फअतिशयगुणवाना। मुस्तनवांकुर सरिस बखाना॥
अर्थ सुभग पंकज मकरन्दा। उज्ज्वलअतिशयदेहिअनन्दा॥
सुरतरु सुमन सुगन्ध सुहाई। व्यंग मनहुँ गर्भित करिलाई॥
सो० यहिविधि परमउदार काव्यपंक्ति यतिराजकी।
विधि गृहणी शृंगार काहि देत आनन्द नहिं॥
असमहिमाजेहिकीअतिवरनी। सो भवसागर की वरवरनी॥

श्रुतिशिर भाष्यसुनी जबकाना । केते द्विजवर तर्क प्रधाना ॥
*अक्षपाद मत ज्ञान गुमाना । गंग तीर वासी गुणवाना ॥
तिन खण्डन का कीन्ह प्रसंगा । पावकद्वेषी यथा पतंगा ॥
तापन घर्षन छेदन द्वारा । लहै हेम जिमि वरण उदारा ॥
पाय वादिगन मथन प्रयासा । भाष्यतेजअतिकीन्हप्रकासा ॥
भाष्यमनहुँ द्विजराज सुहायो । शंकर क्षीरसिंधु सन जायो ॥
मुक्ति सुधा बुधजन कहँ देही । कुमत रूप सब तमहरिलेही ॥
विमलगिरासोइकिरणसमाना । प्रमुदितद्विजचकोरगणनाना ॥

सो० वेद पयोधि अपार मथिकरि काढ़ौ सुधासम ।
शंकर भाष्य उदार अजर अमर करि देहि जो ॥

अंतर वैर काम अरु क्रोधा । बाहेर के वादी गण योधा ॥
जिन जीते रिपुगण दुखदाई । तिनके सेवन योग सुहाई ॥
शंकर दिनकर परम सुजाना । भाष्य विशदरविप्रभासमाना ॥
सज्जनहृदयकमल विकसाने । तब अज्ञान स्वरूप नशाने ॥
शंकर गिरा प्रताप नशाने । प्रतिवादी उलूक प्रविलाने ॥
श्रुतिसमूह मय सिन्धुअगाधा । व्यास न्याय मन्दरगत बाधा ॥
शंकर जबहिं मथो विधिनाना । भाष्य भई तब सुधा समाना ॥
जीवत अजर अमर करिलेही । सुनतहि बुधन अमरपददेही ॥

दो० पद्मनाभ के पाद सों सुरसरि भई अनूप ।
श्रीशंकर मुखसों विमल भाष्य गिरासुस्वरूप ॥
पहिली में प्रारब्ध वश बूड़ि जात हैं लोक ।
मग्न उधारै दूसरी करि सबभांति विशोक ॥

न्याय समूह सूत्र शुभ गुंफित । रत्नमयी माला सी शोभित ॥
वेदव्यास प्रकट तेहिकीन्हा । अर्थविना काहू नहिं लीन्हा ॥
यतिपति जबहिं अर्थ दैदीन्हा । सुलभहोतसबबुधजनलीन्हा ॥
पण्डित आभूषित उर दर्शैं । व्यास कृतारथ मन में हर्शैं ॥
असि उदारता शंकर केरी । लखि लोगन विस्मय बहुतेरी ॥

* गौतम ॥

छं० विद्वान मण्डल परम तप केरी मनहुँ फलरूपहैं ।
श्रुतिरूप वनिताकेश मालतिमाल के अनुरूपहैं ॥
श्रीव्यास सूत्र पवित्र सुन्दर मित्र पुण्योदय भई ।
वाग्देवि के बड़ भाग वैभव की मलौ शाला नई ॥
दो० ऐसी शङ्कर भाष्य ते करि हैं सदा विचार ।
बहुरि न सम्भव होयगो जिनको यहि संसार ॥
श्रुतिकदम्ब पयसागर सुन्दर । गिरा सुमन्थन शैल धुरन्धर ॥
जे जग अहहिं परावर ज्ञाता । तिनकहँ अतिआनन्दविधाता॥
कुमतरूपचखतिमिरविनाशिनि।सुक्तिकिरणशुभग्रंथप्रकाशिनि।
यतिनृप ग्रन्थसूक्ति मुदखानी । करति प्रकाश परम सरसानी॥
परब्रह्म विद्या सुखराशी । यहिप्रकार सब और प्रकाशी॥
दक्षिण रामेश्वर पर्यन्ता । उत्तर जहँ सुमेरु को अन्ता ॥
प्राची दिशि उदयाचल ताईं । पश्चिम अस्त शैल लौ छाईं ॥
सो० द्वैतरहित गुण खानि जग बन्धन*करबालसी ।
मुक्ति करति सुखदानि आतम विद्या परमहित ॥
प्रकटी श्रीपतिराज शंकर करुणाकर सुखद ।
सर्वोपरि सो विराज अति उत्कर्ष न जाय कहि ॥
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यश्री ७ स्वामिरामकृष्ण
भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेश्रीशङ्करदि-
ग्विजयेब्रह्मविद्याप्रस्थापनपरःषष्ठस्सर्गः ६ ॥

श्लो० ॥ शिवं शिवार्द्धावयवं शिवंकरं हरं महामोहहरं हरिप्रियम् ॥
गौरं गुरुं गङ्गतरङ्गसंगमं भवं भवाभावकरं भजाम्यहम् ॥ १ ॥

अथ व्याससमागमम् ॥

दो० एकसमय सुर सिन्धुतट पाठदेत सुखधाम ।
शारीरक की भाष्य को दिवस गयो दुइ याम ॥
शंका शिष्य वर्ग जो करहीं । समाधान करि संशय हरहीं ॥

* खड्ग

यहि कारण लागी अतिबारा । उठिबे को जब कीन्ह विचारा ॥
द्विजवर वृद्ध एक तहँ आयो । श्री शङ्कर को वचन सुनायो ॥
को तुम काह पढ़ावहु ताता । हमहुँ सुनहिं कछु तवमुख बाता ॥
शिष्य कहैं ये गुरू हमारे । भेद वाद सब दूरि निवारे ॥
शारीरक वर भाष्य बनाई । सो हम कहँ पढ़ाव द्विजराई ॥
यह सुनि श्री शङ्कर सों बोले । द्विजवर निर्भय वचन अमोले ॥
राउर शिष्य जिते ये अहहीं । भाष्यकार तुमकहँ सब कहहीं ॥
है यद्यपि यह अद्भुत बाता । होहु हमैं कह जान विधाता ॥
मुनिवर सूत्र अर्थ जो जानहु । भाष्यकार अपने को मानहु ॥
तौ मेरो पूंछो तुम कहहू । एकसूत्र बहु क्लेश न लहहू ॥
भाष्यकार बोले सह प्रीती । सुनहु विप्रवर हमरी रीती ॥
सूत्र अर्थ जे गुरुवर जानैं । तिनहिं प्रणाम करैं हम मानैं ॥
सूत्रज्ञान अहमिति मोहिं नाहीं । जो पूंछो कहिहौं तुम पाहीं ॥
सो० तीसर जो अध्याय आदि सूत्र आरम्भ को ।
द्विज प्रतीक दर्शाय शङ्कर सों पूछत भये ॥
तदनन्तर प्रत्यादि मैं पूछौं यतिराजवर ।
होय तुम्हैं जो यादि अर्थकहौ यह सूत्र को ॥
तब यह दीन्ह उत्तर श्री शङ्कर । जीव शरीर त्याग के अवसर ॥
सूक्षम भूत घिरो नित जावहि । जिनसों दूसरि काया पावहि ॥
गौतम जैमिनि को प्रश्नोत्तर । तांडि श्रुती महँ आवत सुन्दर ॥
प्रकट अर्थ यह तहां सुहावा । औरहु पूछो जो मन भावा ॥
द्विजवर सो विकल्प दर्शाई । कीन्हो खण्डन बाद बढ़ाई ॥
देहहेतु को लाभ कौनि विधि । होत जीवकहँ कहहु कृपानिधि ॥
कर्म वेगकै आपुहि आपा । देह हेतु मानहु तुम व्यापा ॥
सब इन्द्रिन युत जीवहि मानहु । अथवा केवल मनयुत जानहु ॥
अथवा जीव आपु चलि जाई । तरुते तरुपर शुककी नाई ॥
सूक्षम भूत जीव सँग जाहीं । श्रुति अनुकूल कहत तुम नाहीं ॥

देह वियोग समय यतिरावा। गो*गण निजकारण लयपावा ॥
लय ह्वैगे पुनि कैसे जाहीं। समुझि कहौ यतिवर मोहिंपाहीं॥
जीवगमन नहिं बनहिं बनावा। सो न कहहु जो श्रुतिन सुनावा ॥
पण्डित कुंजर जुरी समाजा। सुनिविस्मितउरचकित विराजा॥

दो० सब विकल्पअनुवाद करि पुनि उत्तर मनदीन्ह।
सहस भांति द्विज प्रश्नको शङ्कर खण्डनकीन्ह ॥

जीवजात लखि प्राण सिधारहिं। तेहिके सँग इंद्री अनुसारहिं ॥
प्राण साथ सब इन्द्री जाहीं। यह श्रुति आपु लखी धौं नाहीं॥
आश्रयरहित प्राण नहिं जाई। जीवत हूं यह युक्ति सुहाई ॥
और शरीरन मो विन प्राना। जीव गमनकर नहिं अनुमाना॥
लयप्रकार द्विजवर जो वरणा। तासु उतरु यह संशयहरणा॥
पावकादि महँ गोवा गादी। लय वरणी जो वेद अनादी॥
अग्न्यादिक कर जो उपकारा। रहै न गो महँ मरती बारा ॥
यह उपचार श्रुती उर आनी। पावकादिमहँ विलय बखानी ॥
सुरगुरु शेषसरिस गिरिधारी। भयो विवाद आठदिन भारी ॥
उत्तर प्रतिउत्तर द्वौ कहहीं। श्रुतिवर पक्ष उभय दृग गहहीं॥
यहिविधि दूनहुं वाद कराहीं। पद्मपाद जान्यो मनमाहीं ॥

दो० ये द्विजवर नहिं सुनहुप्रभु बिनती मोरि यतीश।
हैं वेदान्त रहस्य के ज्ञाता व्याससमुनीश ॥
साक्षात श्री शम्भु तुम श्री नारायण व्यास।
उभय विवाद देखि अति किंकर लहै प्रयास ॥

उभय देव अब कृपा करीजै। मोकहँ उचित सिखावन दीजै ॥
जो ये वचन शम्भु सुनि पाये। दर्शनलागि नयन ललचाये ॥
हाथ जोरि पुनि मधुरी वानी। यहिविधि शङ्कर अस्तुति ठानी॥
दामिनि द्युतिवर जटाकलापा। सजल मेघ मूरति हरु पापा ॥
चन्द्र किरण उपवीत विराजा। कृष्णचर्मधर श्री मुनिराजा ॥
कृष्णचन्द्र तुम कलिमलहारी। सुनहु नाथ अज्ञान तमारी ॥

* इंद्रिय ॥

छं० तवसूत्रपर अद्वैत भाष्य जो नाथ मैं निर्मितकरी ।
जहँ सगुण निर्गुण ब्रह्म की निर्णय कियोहै श्रीहरी ॥
जो भाष्य सम्मत आपु कहँ तौ कृपा मोपर कीजिये ।
अपराध सब क्षमिकर हमारो कृष्ण दर्शन दीजिये ॥
दो० यहिविधि अस्तुति करतहीं प्रकटभये श्रीव्यास ।
जटा मुकुट थिर तड़ित सम मानहुं करैं प्रकास ॥
सजल मेघ सम रुचिर शरीरा । मुद्रा ज्ञान धरे गम्भीरा ॥
चन्द्रकान्ति मणि करक सुहावन । सोहैं हाथ लिये श्रुतिभावन ॥
श्याम शरीर प्रभा छवि छावा । करक मनोहर उपमा पावा ॥
जनुअनुराग भरी निशि पावनि । भेंटति शरद चन्द्र मनभावनि ॥
अक्षमाल सोहति उर पाहीं । सप्तविंश गजमणि जेहिमाहीं ॥
जनु तारावलि मिलि सँगमाहीं । प्रीतम चन्द्र मनावन जाहीं ॥
सिंह चर्म नित धारण करहीं । भस्म जटावर शिरपर धरहीं ॥
अक्ष वलय करमहँ प्रियलागी । शङ्कर अर्द्धासन के भागी ॥
सो० अहमिति अति बरिआर कुंजरेन्द्र जिन वशकियो ।
आंकुश तीखी धार आतम विद्या रूप शुभ ॥
खम्भ मनहुं वेदान्त सूत्र जाल की दामसो ।
श्रुतिसहस्र सिद्धान्त बांधी धेनु समान जिन ॥
जैमिनादि बड़ कीरतिधारी । संग शिष्यमण्डलि अतिभारी ॥
सुधा सजीवनि मूरि सोहाई । मुनि चितवनि अतिशयसुखदाई ॥
यतिवर मुनिवर कहँ जब देखा । बाढ़ो विस्मय हर्ष विशेखा ॥
शिष्यसहित आगे उठि लीन्हा । करि प्रणाम पूजन बहु कीन्हा ॥
विनय सहित आसन बैठारे । प्रेम भरे पुनि वचन उचारे ॥
द्वैपायन मुनि स्वागत तुमको । सबविधिकियो कृतारथ हमको ॥
राउर कहँ यह अचरज नाहीं । पर उपकार सदा मनमाहीं ॥
जगकेहित नित प्रति श्रमकरहू । निजवाणी सबकर तम हरहू ॥
छं० शिव विष्णु नारद लिङ्ग गारुड़ ब्रह्मपद्म सोहावनी ।

वामन वराह स्कन्द कूरम भागवत जग पावनी ॥
पुनि मार्कण्डे ब्रह्म वैव्रत मत्स्य अग्नि भविष्य जो।
ब्रह्माण्ड अष्टादश पुराणन आपुविन जग करत को ॥
दो० नारी चौथे वरण को लिखो न श्रुति अधिकार।
तिन सब के उद्धार हित किय पुराण विस्तार ॥
परम पुनीत पुराण बनाये। श्रुती अर्थ गुम्फित मन भाये ॥
अर्थ सुसंगत दुइ अश्लोका। रचिबो कठिन अहै यहिलोका ॥
वेद समुद्र मिलो जो रहेऊ। चारि विभाग तासु वरभयऊ ॥
प्रथमहिं ऋगश्रुतिदुसरोयजुगण। तीजो साम चतुर्थ अथर्वण ॥
बहुरि विचारि कियो मुनिराई। कलिमहँ द्विज प्रकटैंगे आई ॥
निज वेदहु महँ आलस करिहैं। अल्पबुद्धि विषयनअनुसरिहैं ॥
तिन के हित कारण चितदीन्हें। शाखाभेद आपु बहु कीन्हें ॥
वर्त्तमान भावी भूतारथ। तुमसब जानहु नाथ यथारथ ॥
नतरु भूत भावी सब गाथा। कैसे रचे जात मुनिनाथा ॥
नाथ सिन्धु गम्भीर अपारा। प्रकटो भारत चन्द्र उदारा ॥
बाहर भीतर को तम नाशै। कारणकारज सकल प्रकाशै ॥
वेद षडंग शास्त्र समुदाया। भारत तथा पुराण निकाया ॥
तीन लोकमहँ राउर वानी। करति प्रकाश सकल गुणखानी ॥
दो० सत्य धाम परब्रह्म तरु कीन्हे द्वीप प्रकास।
श्रुतिशाखा सहस्रशुक सेवित सम न प्रयास ॥
सोहत सुरतरु विटप समाना। सोपासकन देत फल नाना ॥
हौ तुम द्वैपायन यहि हेतू। मुनिवर तिलक ऋषिनमहँ केतू ॥
कृष्ण भये गोवर्द्धनधारी। गो गोपन की त्रास निवारी ॥
निज उर तुम गिरीश कहँ धरहू। सबजग की आरति पुनिहरहू ॥
नूतन गोपालन तिन कीन्हा। नरकासुरको*असुहरिलीन्हा ॥
आपु पुरातन श्रुति गो रूपा। पालहु नित मन प्रग अनूपा ॥
नरकहि दयादृष्टि सो हरहू। युद्ध परिश्रम नहिं कछुकरहू ॥

* प्राण ॥

अद्भुत कृष्णमूर्ति तव अहही। को जग जो राउर गुण कहही॥
वेद जासु महिमा नित गावैं। सदसद्भिन्न रूप दरशावैं॥
सो सत चिद्घन आनँद रासी। पुरुष पुरातन सब उरवासी॥
परमातम नारायण रूपा। तव महिमा किमि कहहुं अनूपा॥
यहिविधिजबअतिविनयबखानी। द्वैपायन बोले सन्मानी॥
अस्मदादि पदवी तुमपाई। जानहुँ तव महिमा अधिकाई॥
तुम मोहिं प्रियशुकदेव समाना॥ किमिसम्मुखगुणकरहुँबखाना॥
वाद हेतु नहिं आयो पतिवर। यथाप्रथम भ्रमकरहु न शङ्कर॥
कणे सिद्ध ने वचन सुहावा। शंभु सभामहँ मोहिं सुनावा॥
दो० विरची तुम ने भाष्यवर जब मैं सुनी सुजान।
दर्शन कहँ अति मोरमन तबहींसों ललचान॥
शम्भुसभा सो तव ढिग आयो। दर्शनपाय परम सुख पायो॥
व्यास वचनसुनि आनँद बाढ़े। पुलकित गात रोम भे ठाढ़े॥
शुकमत सिन्धु चन्द्र श्री शङ्कर। विनयसहितदीन्हों यह उत्तर॥
पैल सुमंतु आदि मुनिनायक। राउर शिष्य लोक सुखदायक॥
तृण ते लघु का गनती मेरी। दीन जान तव कृपा घनेरी॥
सकल प्रकाशक सूत्र तुम्हारे। सहसकिरणसमजगउजियारे॥
भाष्यदीप मैं तिनहिं दिखायो। अधिकढीठनहिंमोहिं लजायो॥
यद्यपि साहस मोर कृपाला। शिष्यजानिप्रभुक्षमहुदयाला॥
कृपासहित अब देखि विचारी। भूल चूक मम देहु सुधारी॥
इमि कहि शम्भु रहे अरगाई। व्यास लीन्हि पुस्तक गुणछाई॥
गुण प्रसाद गम्भीर सुहावा। मुनिवर सकलग्रन्थ महँ पावा॥
दो० सूत्र अनुहरित वाक्य सों अर्थ निवेदन रूप।
पूर्वपक्ष सब दूरिकरि निज सिद्धान्त स्वरूप॥
युक्तिसहित थापन कियो ऐसी भाष्य अनूप।
हर्षित शङ्कर सन वचन बोले श्रीमुनि भूप॥
सबप्रकार तुम शिक्षा पाई। अधिकरुचिरयहुभाष्यबनाई॥

यहि मों साहस कछु न तुम्हारा । साहस को यह वचन उचारा ॥
शोधनहेतु मोहिं जो कहहू । यह कहिबे को तुम नहिं लहहू ॥
शब्द शास्त्र तुम नीके जानहु । भट्टपाद मतवर पहिचानहु ॥
श्रीगोविंद मुनि गुरू तुम्हारे । सब जानैं तिहुँपुर उजियारे ॥
तवमुख तात असंगतवयना । किमिनिकसैंतुमसबगुणअयना ॥
सुनहु तात प्राकृत तुम नाहीं । तवप्रभावगुणकहि न सिराहीं ॥
महानुभाव पुरुष तुम सोई । जेहि समान सर्वज्ञ न कोई ॥
दिनकर सरिस पर्य्यटन करहू । ब्रह्मचर्य शिशुपन सो धरहू ॥
बाल वयसि लीन्हों संन्यासा । ऐसो राउर ज्ञानप्रकासा ॥
आखर बहुत सूत्र महँ नाहीं । अर्थ परमगर्भित जिन माहीं ॥
गूढ़ भाव जानो नहिं जाई । जिनकर जानब अतिकठिनाई ॥
तुमहिं छांड़ि दूसर कोउ नाहीं । होय शक्ति जेहि विवरणमाहीं ॥
विवरण की को कहहि यतीशा । समुझब उनको कठिन व्रतीशा ॥
तिनके करतहि जौन प्रयासा । वरणो तेहि जेहि अर्थप्रकासा ॥
विबुधकहहिं असि महिमा जेहिकी । किमिकहियेदुर्घटतातेहिकी ॥
सो० मेरे उर को भाव जो जाने अस को भयो ।
विवरणतासु बनाव तुमहिं विना को लोकमें ॥
शिवविनकोउसमरथअसनाहीं । सोइ तुम प्रकटे हौ जगमाहीं ॥
सांख्यादिक मत की परिछाहीं । श्रुतिमारग बिगरो महिमाहीं ॥
बहुरहु ताहि सँभारन हेतू । प्रकट भये हौ तुम वृषकेतू ॥
वे शिव कबहुँ रोष करिजाहीं । तासु योग सपनेहुं तव नाहीं ॥
विधु की कला एक तिन पाहीं । सकल*कलातुम्हरे मनमाहीं ॥
अर्ध अंग गिरिसुता निवासा । तव ढिग पूरण करहि प्रकासा ॥
उमा ब्रह्म विद्या जो गाई । तुम अद्भुत शङ्कर सुखदाई ॥
कविनप्रथमविवरण बहुकीन्हा । मतिअनुसार अर्थ करिदीन्हा ॥
आगेहु करि हैं और घनेरे । विवरण प्रभु माया के प्रेरे ॥
हमरो हृदय तुम्हारि समाना । नहिं जनिहैंअबहूँ नहिं जाना ॥

* विद्या

श्रुतिशिर विवरण करहु बहोरी । भेद वादि जीतहु बरजोरी ॥
प्रकटहु जे निज ग्रन्थ बनाये । जाहुँ सुखेन पन्थ मन भाये ॥
यहसुनि शम्भुव्याससनकहेऊ । नाथसकलविवरण ह्वैगयऊ ॥
निज शिष्यन कहँ सकल पढ़ाये । भेद वाद सब दूरि बहाये ॥
रहो शेष करिबो कछु नाहीं । दुइ घटिका ठहरो मोहिंपाहीं ॥
त्यागा चहहुँ शरीर गोसाँई । तवढिगअतिशयलाभभलाई ॥
मणिकर्णिका पुनीत सोहाई । निगमागम पुराणमहँ गाई ॥
यहि महँ जौलौं तजहुँ शरीरा । करौ कृपा तौलौं मतिधीरा ॥

दो० सुनि ऐसे शङ्करवचन कहनलगे मुनि व्यास ।
भली भाँति अद्वैत पथ कीन्हों नहीं प्रकास ॥

बहुत विदुष जीते तुम नाहीं । अतिउदार विद्या जिनमाहीं ॥
तिनके जयकारण क्षितिमाहीं । कछुदिनरहौ तजहु वपुनाहीं ॥
नतरु मुमुक्षा यहि संसारा । दुर्लभ जानहु शम्भु उदारा ॥
मातुहीन शिशु जीवन जैसे । ह्वै जैहै दुर्लभ वह तैसे ॥
अति प्रसन्न गम्भीर तुम्हारे । ग्रन्थ देखि मन हर्ष हमारे ॥
यह उत्साह होय मन मेरे । दीजे वर जीवन हित रउरे ॥
षोड़श वर्ष आपु तव रहेऊ । षोड़श को पुनि वर हम दयऊ ॥
बत्तिस संवत वयासि तुम्हारी । ह्वैहै शम्भु कृपा अनुसारी ॥

दो० जौलौं रवि शशि को बनो जगमें यह उल्लास ।
भाष्य तुम्हारे करहिंगे तौलौं धरणि प्रकास ॥

षोड़श संवत वय तुम पाई । करहु तात दिग्विजय सुहाई ॥
भेदवादि नाशक सब पक्षा । गर्वांकुर उन्मूलन दक्षा ॥
ऐसे वचनन सों करिदूरी । भेदबुद्धि लोगन की भूरी ॥
यहिविधि सब परपन्थ मिटाई । थापहु श्रुति मारग सुखदाई ॥
सुनि ऐसे मुनिवर के वयना । बोले शङ्कर करुणा अयना ॥
राउर सूत्र समागम पाई । भाष्य प्रचार लहै शुभदाई ॥
असकहि मुनिपदवन्दनकीन्हा । आशिषवरमुनिवरपुनिदीन्हा ॥

अन्तर्हित ह्वै गये मुनीशा। विरहताप अतिलहो गिरीशा॥
यद्यपि ज्ञानभवन सुखराशी। शंकर दुखभंजन अविनाशी॥
तापहारि निरुपाधि कृपारस। पूरण भरो अमृतसागर जस॥
व्यास विरह कैसे सहिजाई। तदपि सहो श्रीपद उर लाई॥
गुरुवर की आज्ञा अनुसारा। कियो दिग्विजय केर विचारा॥
दक्षिणदिशिकहँकीन्ह पयाना। यह मनमहँ करिकै अनुमाना॥
भट्टपाद समरथ जग माहीं। तेहिसम कोऊ पण्डित नाहीं॥
हमरी भाष्य बहुत गंभीरा। तासु वार्तिक सो मतिधीरा॥
करि पैहैं सो बिगत विषादा। ताहिजीतिहौं करि प्रतिवादा॥
यहमन कियेसहित अनुरागा। पहुँचे तीरथराज प्रयागा॥
गंग यमुन की संगम धारा। श्वेतश्यामलखिपरहिंप्रचारा॥
दो० उभय धार सूचन करै हर हरिरूप उदार।
बिन प्रयास ते पाइ हैं जे मज्जहिं यहि धार॥
यथा अपरचित पाय सहेली। प्रथम मिलन की लाजनवेली॥
तिमि सोहै यमुना की धारा। गंग प्रवाह रुद्ध परिचारा॥
जलनिर्मलअतिरुचिर निहारी। हंसशिष्य मण्डलि जनुप्यारी॥
सो गुण सीखन हेतु निवासा। करहिं मराल मनहुँ जलपासा॥
कहुँकहुँ चक्रवाक परिचरहीं। ऐसो मनहुँ मनोरथ करहीं॥
यह मेटहि सबकर दुख पापा। हरिहैं निशि वियोग संतापा॥
पुनि प्रयागमहिमा श्रुति गावै। इहाँजीव मज्जन करि पावै॥
तेहिको होय स्वर्गमहँ वासा। जौलोंरविशशिकरहिंप्रकासा॥
भोगहिं अमरावति के भोगा। सदा सुखी कौनौ नहिं रोगा॥
संभव तिरोधान नहिं जाना। रूपासितासित कीन्ह बखाना॥
ये प्रभाव श्रुति जासु बखाने। शंकर सुरसरि जाय नहाने॥
हर्षित मुनिवर मधुरी बानी। व्याजस्तुति सुरसरिकी ठानी॥
छं० त्रिपुरारि जो निज जटा बाँधो क्रोध बड़ तुमको भयो॥
शिव सरिस मैं करिहौं घनेरे नेम यह तुमने लयो॥

बहु बन्धु तव ह्वै हैं न जब वे जटाजूट सँभारहीं ।
नहिंलाग तुम्हरी जड़ कबौं नहिं होनिहार विचारहीं ॥
सन्मार्ग वर्तकि यदपि सुरसरि दोष यह तेरो महा ।
सब देश के नर हाड़ लेकरि करोगी इनको कहा ॥
जानौ हृदय तौ मातु हम जे पाप निज तुहिमों धरैं ।
शृंगार के हित धरहु तिनके आय मज्जन जे करैं ॥
भवनींद जड़ता भरे जे जन नींद तिन की खोवहू ।
विषय को जो राग मनमहँ तुरत उरसो धोवहू ॥
करिकै दिगम्बर दै बघम्बर मुण्डमाल सँवारहू ।
धुर्तावतंस बनाय कै यह कौन राह निकारहू ॥

दो० ऐसी स्तुति करत प्रभु सुरसरि कीन्ह प्रवेश ।
दूनौ कर महँ दण्ड लै वस्त्र सहित कटिदेश ॥

अघमर्षन विधि मज्जनकीन्हा । पूरणआयुसबहिंसिखदीन्हा ॥
कियो मातु सुमिरन जेहिपोषा । गर्भ धरो कीन्हों परितोषा ॥
नित्यनेम करि शिष्य सहीता । सुरसरितट शीतलसुपुनीता ॥
तरु तमाल छाया विश्रामा । कीन्हों श्रीशंकर सुख धामा ॥
लोक वार्ता तहँ सुनि पाई । भट्टपाद सम्बन्ध सुहाई ॥
जे मुनिवर पर्वत पर जाई । कूदि परे महि श्रुति मनलाई ॥
यहिविधि वेद प्रमाण दृढ़ाई । श्रौतपन्थ पुनि दीन्हचलाई ॥
जिनकी कृपा देव मखभागा । पाये होन लगे सब यागा ॥
गुरुमन्थन पातक जो लागा । दूरि करो चाहत बड़भागा ॥
वेद अर्थ सब जानहिं मानहिं । देहत्याग शंका नहिं आनहिं ॥
तेहि अपराध केर परिहारा । तुष पावक चाहत तनजारा ॥
वेद मन्त्र सबरे जिन पाये । तन्त्र नदी मह मनहु नहाये ॥
दुष्ट तन्त्र सब दूरि करावा । कीर्तियन्त्र त्रयलोक फिरावा ॥
सुनि शंकर तत्काल सिधाये । तुष पावक महँ बैठे पाये ॥
प्रभाकरादिक शिष्य घनेरे । अश्रु वदन बैठे सब घेरे ॥

धूमसहित तेहि पावक माहीं। मुनिवर अंग जरत सब जाहीं॥
अग्नि ताप मुख सोहत ऐसो। उषमा व्यापित पंकज जैसो॥

दो० जिनके दर्शन जाय अघ जग गुरु आये जानि।
शिष्यन को आज्ञा दई ते लाये सन्मानि॥

प्रथम रही नहिं कछु पहिचाना। सुनत रहे प्रभु यश जगजाना॥
भट्टपाद हर दर्शन पाई। हर्षित सब पूजा करवाई॥
करि भिक्षा बैठे सुख पाई। तिनहिं भाष्य अपनी दर्शाई॥
जे प्रबन्ध सत्पुरुष निहारा। भलीभांति ते लहहिं प्रचारा॥
भाष्य देखि अतिशय हर्षाने। अति अनन्द नहिं हृदय समाने॥
ये गुणज्ञ सर्वज्ञ सयाने। तिनके मत्सर नहिं नियराने॥
उत्तमभणित देखि सुखपावहिं। वैर विहाय तासु गुणगावहिं॥
पुनि शिवसन बोले मुनिराया। शारीरिक पहिलो अध्याया॥

सो० भानहोहिं मोहिं आठ सहस वार्तिक तासु महँ।
है पुनि यही उपाठ दाह दीक्षा लै चुको॥

नाहीं तौ रचना हम करते। सकल त्यागयहिमेंमनधरते॥
तव दर्शन दुर्ल्लभ संसारा। तासु लाभ पुनि मरतीबारा॥
उदय भयो अति सुकृत हमारो। पायो दर्शन नाथ तुम्हारो॥
बूड़ि रहे भवसिन्धु अपारा। तिनके मुक्ति होनकर द्वारा॥
तुम ऐसेन की संगति गाई। दूजो और न सुगम उपाई॥
बहुत काल सों दर्शन आशा। रही सो पूजी नाथ प्रकाशा॥
अभिमत पूरण करिबे माहीं। यहिजगमेंस्वतन्त्रकोउनाहीं॥
कबहुँ होय प्रिय को संयोगा। कबहुं तासु ह्वैजाइ वियोगा॥
तथा भोग सुखदुख अरु रोगा। काल पाय सबकर संयोगा॥

दो० करि प्रबन्ध निर्णय कियो कर्मपन्थ विस्तार।
नैयायिक मतयुक्ति को भलीभांति परिहार॥
विषयन के सुख दुःख सब भोगे भले प्रकार।
काल वंचनाशक्ति मोहिं नहिं दीन्हीं करतार॥

दुइ पातक बनि आये हमसों । कारणसहितकहतहौंतुमसों ॥
जेहिबिन काहुहि सुख नहिं होई । लोक वेद वन्दित प्रभु सोई ॥
तेहि ईश्वरकरखण्डनकीन्हा । सबविधिसुखदकर्मकहिदीन्हा ॥
दूसर दोष कहौं अब गाई । रही धरणि जैमिनि सोंछाई ॥
प्रजा वेद मारग सब त्यागा । ममहमनउपजो यह अनुरागा ॥
जीतों सकल जैन मत धारी । करों वेद पथ की रखवारी ॥
राजनको तिन वशकरि लीन्हा । सकलप्रजाकोआयसुदीन्हा ॥
नरपति सब हमरे अनुसारी । देश भयो सब आज्ञाकारी ॥
आदर करहु जैन मत माहीं । वेदन की प्रमाण कछु नाहीं ॥
यहिविधि बकतफिरैं जगमाहीं । तासु विनाशयत्न कछु नाहीं ॥
वाद कीन्ह तिनसों बहु बारा । नहीं भयो कछुलाभ हमारा ॥
मत खण्डन तबहीं बन आवै । जब सिद्धान्त तासुलखिपावै ॥
तिनकी शरण गही मैं जाई । मान वेष सब दूरि बहाई ॥
रहन लगो मैं तिनके साथा । पढ़ोसुनो सब तिनकी गाथा ॥
दो० एकसमय तिन वेद की निन्दा बहुविधि कीन्ह ।
मम नयनन आंसू बहे लियो तबहिं उन चीन्ह ॥
तेहि क्षणते शंका मन व्यापी । कहहिंपरस्परयहिविधिपापी ॥
शिष्य नहीं यह शत्रु हमारा । लियो चहै मत हृदयउदारा ॥
काहू विधि उच्चाटन कीजै । ऐसे को विद्या नहिं दीजै ॥
करिसम्मत मोहिंदियो निकारी । तबहूं घटो वैर नहिं भारी ॥
ऊंचे पर्व्वत मोहिं चढ़ायो । तासु शिखरते भूमि गिरायो ॥
पतन समय हम कीन्ह पुकारा । होहि सत्य जो वेद हमारा ॥
संशय उक्ति वेद महँ कीन्हीं । छलसों पुनिविद्याहमलीन्हीं ॥
जो कोउ अक्षर एकबतावै । सोऊ जगमहँ गुरू कहावै ॥
सोकिमिकहियजोशास्त्रपढ़ावा । तिनजैनन हमसों दुखपावा ॥
दो० यहिविधिजिनसोंहमपढ़ो तिनको सकुल विनाश ।
करवायों अरु कियो हम ईश्वर पक्ष निराश ॥

जैमिनि पक्षपात मन दीन्हा। ईश्वरकर खण्डन हम कीन्हा ॥
प्रायश्चित्त उभयअघ मुनिवर। तुषपावक विचारि सुन्दरतर ॥
कियो प्रवेश तुषानल जबहीं। श्रीपददरशभयोमोहिं तबहीं ॥
अब अघनिःकृत भई सुहाई। प्रायश्चित्त गयो दुगुनाई ॥
सुनत रह्यो प्रभु भाष्य बनाई। मन में यह तरंग बहुआई ॥
वृत्ती तासु मनोहर कीजै। यह उत्तमयश जगमहँ लीजै ॥
तासु कहेकर कछु फल नाहीं। जो न आश पूजी जगमाहीं ॥
मैं जानौं तुम शिव अवतारा। ज्ञान प्रकाशन हित वपु धारा ॥
रहौ सदा निज जन अनुरागी। करन हेतु उनको बड़भागी ॥
पहिले होतो दरश तुम्हारा। ह्वै जातो पातक उद्धारा ॥
अग्नि प्रवेश नहीं मैं करतो। नाथ पाद सेवा चित धरतो ॥

दो० करि लीन्हों संकल्प अब ह्वैगो अग्नि प्रवेश।
उभय प्रभाव पाप की निष्कृति भई विशेश ॥
शावरभाष्यकी वृत्तिहम जेहिविधिरचनाकीन्हि।
तिमि राउरके भाष्यपर कालहोन नहिंदीन्हि ॥

यह यश योग न भाग हमारा। यह सुनि बोले शम्भु उदारा ॥
जैन घात हित शम्भु कुमारा। श्रुतिपथपालनहितअवतारा ॥
पाप गन्ध संबन्ध न तोहीं। तुम्हरोचरितविदितसबमोहीं ॥
प्रायश्चित्त लोक सिख हेतू। मुनिवरकरहु पालिश्रुतिसेतू ॥
कहहु जियावहुँ तुमकहँ ताता। करकतोयप्रोक्षण करि गाता ॥
सावधान ह्वै वृत्ति बनावो। जगमोनिजअभिमंतयशपावो ॥
सुनिकैविबुधशिरोमणिबयना। कहहिं सप्रेमसजलह्वौनयना ॥
लोक विरुद्ध शुद्ध किन होई। सुरवरमोहिं करिजायनसोई ॥
मोरी जो तुम कीन्ह बड़ाई। महाजनन की रीति सुहाई ॥
कैसेहु कुटिल लोक दुखदाई। साधु देहिं गुण ताहि लगाई ॥

दो० प्रकृतिवक्राजिमि धनुष महँ शूरकरहिंगुणदान।
तैसेहि पामर कुटिल कर साधु करहिं सन्मान ॥

बहुत काल कर मरो जो होई । कृपादृष्टि तब जीवहि सोई ॥
सबप्रकार समरथ भगवाना । है परन्तु मम यह अनुमाना ॥
वेदविदित व्रत कीन्ह अरंभा । छांड़त लोगन होय अचंभा ॥
निन्दा किमि ह्वैहै जग नाहीं । बुधवर करु विचार मनमाहीं ॥
प्रलयसमय सब सृष्टि पसारा । निजस्वरूप लयकरहु अपारा ॥
पुनि वैसहि जग रचहु सुहावा । अनुपम जानहु नाथ प्रभावा ॥
अचरजकौनजोमोहिंजियावहु । तदपि न यहव्रत भंग करावहु ॥
अब ऐसी करुणा दर्शावो । निर्मल तारक मन्त्र सुनावो ॥
परब्रह्म कर मोहिं उपदेशा । देव कृतारथ करहु सुरेशा ॥
करन चहौं अद्वैत प्रकाशा । और दिग्विजयकी है आशा ॥
तो उपाय मैं कहहुँ दयाला । उचित होय सो करब कृपाला ॥
सुधीशिरोमणि मण्डन नामा । भूसुरराज सकल गुणधामा ॥
है दिगन्त व्यापी जेहि केरा । यश अरु धनगुणमानघनेरा ॥
बड़दानी कर्मी जग माहीं । महागृही तेहिसम कोउ नाहीं ॥
मण्डनसँग जो तुम जय पाई । भई लोक दिग्विजय सुहाई ॥
है प्रवृत्ति महँ अति विश्वासू । नहिं निवृत्तिमहँ आदरतासू ॥
ऐसो कछु उपाय प्रभु कीजै । तेहिको अपने वशकरिलीजै ॥

दो० वशवर्त्ती मण्डन जबहि गयो मनोरथ पूरि ।
देर करहु नाहिं जाहु तहँ नहीं बहुत कछुदूरि ॥

तासु नारि शारद अवतारा । मुनिवर शाप नहीं पगुधारा ॥
उभय भारती नाम उदारा । जासु नाहिं विद्या कर पारा ॥
विश्वरूप मम शिष्य पियारा । मम समान सो परम उदारा ॥
करि मध्यस्थ प्रिया तेहिकेरी । वाद कथा पुनि करहु घनेरी ॥
यहिविधि विश्वरूप वशकीजै । तेहि को पुनिअनुशासनदीजै ॥
सब ग्रन्थनकी वृत्ति बनै हैं । जब राउर वश में ह्वै जैहैं ॥
विश्वनाथ सम मोहिं सुनावो । तारक भवनिधि पार लगावो ॥
मैं जौलौं तनु त्यागहुं शंकर । यहां रहो तौलौं करुणाकर ॥

योगीश्वर जेहिध्यानलगावहिं । ध्यानहुंमें दर्शन कोउ पावहिं ॥
सो लोचन गोचर सुखदाता । देखत चरण तजहुं सङ्काता ॥

छं० सुनि मुनि गिरा पुनि धर्ममय शंकर हृदय हर्षित भयो ।
जो ब्रह्म पूरण बोधसुखमय तासुप्रभु बोधन कियो ॥
तिन मौनधरि निजरूपमहँ लयकीन्ह परिपूरणहियो ।
यहिभांतिद्विजवरको कृपाकरि ब्रह्मपदसुखमयदियो ॥

दो० भट्टपाद द्विजराज को यहिविधि करि उद्धार ।
मण्डनके गृहगमनको पुनि प्रभु कीन्ह विचार ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य श्री ७ स्वामिराम
कृष्णभारतीशिष्य माधवानन्दभारतीविरचिते
श्रीशङ्करदिग्विजये श्रीव्यासाचार्य्यदर्शन
वर्णनपरः सप्तमस्सर्गः ७ ॥

श्लो० ॥ शङ्करं सुखदं शान्तं सोमं सोमार्द्धशेखरम् । स्वभक्तकल्पवृक्षाभमष्टमूर्तिं सदा भजे ॥ १ ॥ ईशानः सर्वविद्यानां श्रुतौ सम्यक्प्रकीर्त्तितः । सोमेशः सर्वदास्माकमस्तु सर्वार्थसाधकः ॥ २ ॥

दो० भट्टपाद अभिलाष सब करि पूरी यतिराज ।
मण्डन को जीतन चले छोड़ो तीरथराज ॥

गहौ व्योम मारग हर्षाई । माहिष्मती पुरी नियराई ॥
पुरशोभा अतिअधिक निहारी । रत्नजटितगृह रुचिरअटारी ॥
पुरसमीप उपवन महँ जाई । व्योमपन्थ छोड़ा सुखदाई ॥
महि मारग रेवा तट आये । शालवृक्ष जहँ सघनसुहाये ॥
शीतल वन राजीव विहारी । बहै बयारि जहां श्रमहारी ॥
करि विश्राम तहां कछु काला । मध्यमदिवस नेमप्रतिपाला ॥
नित्य नेम करि मण्डन धामा । तुरतहिंचलेजगतअभिरामा ॥
देखी मारग मण्डन दासी । दिव्यवसनवररूप प्रकासी ॥

चली जाहि जल आनन काजा । तिनसनप्रश्नकियोयतिराजा ॥
मण्डन पण्डित भवन बतावो । तिनाशिवदरशपरमसुखपावो॥
हर्षित मण्डन भवन बतावा । युक्तिसहितगृहचिह्नलखावा ॥
छं० है वेद आपु प्रमान । किमु अहैं परते मान ।
है कर्मको फल जौन । तेहि देत हैगो कौन ॥
है कर्म फलप्रद आप । किमईशप्रभुनिष्पाप ।
यह सकलजगहै नित्य । किमुअहै विश्व अनित्य ॥
शुकनारि वचन उचार । यहिभांतिकरैं विचार ।
जेहि द्वारपर असहोय । है भवनमण्डन सोय ॥
जब सुने ऐसे बयन । सुखपायगेगुणअयन ।
देखा सो तैसोइ द्वार । लागे परन्तु किवार ॥
दो० मनमें शोच विचारिकै व्योम पंथ पुनि लीन्ह ।
उपरहि ऊपर भवनमें सुख प्रवेश प्रभुकीन्ह ॥
इन्द्रभवन सम सो गृह सोहा । ध्वजपताकयुतमुनिमनमोहा ॥
भूतल मण्डन मण्डन धामा । सब देखा शंकर अभिरामा ॥
सो शाला सबभांति मनोहर । बैठे जहँ नित विज्ञ धुरंधर ॥
तहां जाय प्रभु मण्डन देखा । निजयशभूषित तेजविशेखा ॥
पद्मासन सम जासु प्रभावा । जेहिकीविद्या कर यशछावा ॥
जैमिनि व्यास निमन्त्रणदीन्हा । विधिवतश्राद्धचहैसोकीन्हा ॥
उभय मुनीश्वर चरण पखारहिं । चरणोदक निजमाथेधारहिं ॥
युगल मुनिन शंकर कहँ देखी । कीन्हीं अभिवन्दना विशेखी ॥
मण्डनहू देखे श्री यतिवर । पाटल वसन रूप अद्भुततर ॥
बैठे जैमिनि व्यास समाजा । ज्ञानशिखा उपवीत विराजा ॥
वेष देखि संन्यासी जाना । मण्डनहृदय क्रोध प्रकटाना ॥
यद्यपि मन्यु समय सो नाहीं । तदपि भयो तामस उरमाहीं ॥
विश्वरूप उर तामस भारी । शंकर तेहिक्षण कौतुकधारी ॥
दो० गृहवर शंकर परस्पर प्रश्न उतरु की माल ।

क्रमसोंयहिविधिह्वैचली गुम्फितरुचिरविशाल ॥
कुतो मुण्डि तव मण्डन कहेऊ। तव आगमन कहांसों भयेऊ ॥
अर्थ फेरि तव शंकर कहहीं। आगलात मुण्डी हम अहहीं॥
गल पर्यन्त भयो है मुण्डन। ऐसो हमैं जानु तू मण्डन ॥
प्र० पन्था मैं पूंछत हौं ताता। उ०पंथाकौनिकहौतोहिंबाता ॥
प्र०त्वन्माता मुण्डा यह कहेऊ। उ०भलोउतरुपन्थातोहिंदयऊ॥
पन्था सन पूछी तुम बाता। पन्थ कहो मुण्डा तव माता ॥
तुम पूछा तुम उत्तर पावा। त्वन्माता कहि तुमहिं सुनावा ॥
हम सन पन्था कहि हैं नाहीं। हमरी प्रश्न नहीं तेहिंपाहीं ॥
करिबहुक्रोध कह्यो द्विजराजा। मदिरा पीता भो यतिराजा ॥
शंकर कहा पीत नहिं होई। मदिरा श्वेत कहै सब कोई ॥
यतीराज! सो रंग तुम जानों। मैं रंग तुम स्वादहुपहिचानों ॥
रंग जाने कछु पाप न होई। रस चाखै अघभागी सोई ॥
मं० मत्तोजात भयो मतवारा। अरुकलंज* आशीव्यवहारा ॥
सबविपरीतवचनअतिभाषत। बोलनमें सँभार नहिं राखत ॥
निज भाषा मण्डन यह कहेऊ। तुम अतिशय मतवारेभयऊ ॥
भक्षाभक्ष खात तुम डोलहु। अरुविपरीतवचनसब बोलहु ॥
मत्तो जातो हम सन भयऊ। ऐसो अर्थ फेरि प्रभु कहेऊ ॥
दो० सत्य कही द्विज तोहि सम तव सुत को व्यवहार।
भक्षाभक्ष विचार नहिं सदा रहे मतवार ॥
पुनिपुनिसुनिविपरीतसकोपा। और प्रकार कीन्ह विक्षेपा ॥
हे कुबुद्धि! कन्था तू बहही। जासु भार नहिं खरनिर्वहही ॥
यज्ञउपवीत शिखा के बारा। रखते तौ होतो कह भारा ॥
रे कुबुद्धि! कन्था मैं धारी। जो हैगी तव पितु कहँ भारी ॥
तियखारि तिरस्कार जो सहई। सोनिश्चय गर्दभ सम अहई ॥
शिखा यज्ञ उपवीत उतारा। तिहिकोरह्यो श्रुती शिरभारा ॥
मुण्डी ह्वै अरु विचरन वासा। एक ठौर नहिं करै निवासा ॥

* विषलिप्तबाणहतमृगमांस ॥

वरनीहै यहविधि जेहिमाहीं। सो तुम श्रुती सुनी धौं नाहीं ॥
मं० छोड़िदीनिजायागृहमाहीं। शक्ति रही पालनकी नाहीं ॥
सेवक पुस्तक भार बढ़ाई। भली ब्रह्मनिष्ठा सरसाई ॥
शं० गुरुशुश्रूषा आलसपाई। घर आये निज गुरू विहाई ॥
भये नारि सेवा अनुरागी। अहो कर्मनिष्ठा जग जागी ॥
मं०जिनकेगर्भभयो तव वासा। पालिपोषि सबकीन्हसुपासा ॥
तिनहीं की निन्दा तुम ठानी। असिकृतघ्नता निजउरआनी ॥
शं०जिनकीयोनिजन्मतुमपावा। जिनको पयतव गातबढ़ावा ॥
तिनमें रमहु सदा द्विज राजा। पशुसमाननहिंआवतिलाजा ॥
मं० अग्निहोत्रआयेतुमत्यागी। इन्द्रघात हत्या तोहि लागी ॥
शं०आतमघातपापतुमकीन्हा। जोअपनोस्वरूपनहिंचीन्हा ॥
मं० दो० द्वारपाल सब वंचि करि आये चोर समान।
शं० भिक्षुभाग दीन्हे विना किमि खैहै धनवान ॥
मूंदि कपाट चोर की नाईं। खायो चहहु धर्म बिसराई ॥
उत्तर प्रतिउत्तर इमि पाई। बोला मण्डन शक्ति गवांई ॥
भाषण में मूरख तेरे सँग। कर्मसमय करिहौं एकै अँग ॥
अहंभाष्य जब मण्डन कहेऊ। संधि भंग यहि पदमें भयऊ ॥
शं०अहोज्ञानअपनोप्रकटायो। भाषणमहँयतिभंग दिखायो ॥
श्रीशंकर यह अर्थ जनावा। संधिभंग अज्ञान दिखावा ॥
अर्थ बदलि तबमण्डनकहहीं। यती भंग मम सम्मतअहहीं ॥
तुम्हरो भंग जो मैं उर आना। यती भंग कर दोष न माना ॥
शं०यती भंग जो तुममनदेहू। पंचम्यन्त समास करेहू ॥
श्रीशंकर यह अर्थ जनावा। यतीसकाश भंग तोहिभावा ॥
मं०कहँकुबुद्धिकहँब्रह्मविचारा। कहँ संन्यासकहांकलिकारा ॥
मधुर अन्नभोजन रुचिलागी। योगिनवेष धरो क्रमत्यागी ॥
शं०कहांस्वर्ग कहँदुष्टाचारा। अग्निहोत्रकहँ कहँ कलिकारा ॥
मैथुनभोग अधिक मन भावा। कर्मिन गृहि को वेष बनावा ॥

दो० इत्यादिक दुर्वचन बहु भाषे रोष बढ़ाय।
तैसो तैसो उतरु प्रभु दियो कौतुक दर्शाय॥

मण्डनदिशिदेखहिंहँसिजैमिनि। बोले व्यास तासु बानीसुनि॥
यतीराज तुम्हरे गृह आये। बहुत दुर्वचन तात सुनाये॥
सब एषणा दूरि इन कीन्हीं। आतमतत्त्वभलीविधिचीन्हीं॥
सज्जन को नहिं यह व्यवहारा। करहु तात जैसो आचारा॥
ये अभ्यागत मम गृह आये। आपु मनहुं श्रीविष्णु सिधाये॥
ऐसो मानि निमन्त्रण करहू। कुटिलबुद्धि अपनी परिहरहू॥
यहिविधिव्यासासिखावनदीन्हीं। मण्डनशिरमाथेधरि लीन्हीं॥
विदित जासु जग परमप्रभावा। विबुधनमैंमुखिआ करि गावा॥
मण्डन करि आचमनविधाना। शान्त भयो पण्डित गुनवाना॥
विधिवत शंकर पूजन कीन्हा। भिक्षाहेतु निमन्त्रण दीन्हा॥
श्रीशङ्कर सुर नर सुखदाई। विहँसि ताहि यह गिरा सुनाई॥
अन्न भीख चाहत नहिं खायो। वाद भीख कारण मैं आयो॥
प्रथम परस्पर यह प्रण होई। जो हारै सेवक है सोई॥
जो श्रद्धा राउर मन माहीं। दे यह भीख और कछु नाहीं॥
वाद वितर्क यती नहिं करहीं। कोई पक्ष न दृढ़करि धरहीं॥
यह सन्देह मिटावहुँ तोरा। सुनहु जौन सम्मत है मोरा॥
चाहौं श्रुतिपथ को विस्तारा। जेहि में होय लोकउपकारा॥
कर्मपक्ष गहि जो तुम त्यागा। जेहिविधि होय तहांअनुरागा॥
श्रुति सम्मत यह जानु विवादा। भवदुखनाशनशमनविषादा॥
मम विवादमहँ और प्रयोजन। नहिंकछुजानहुतुमप्रियसज्जन॥
चाहत हौं सब वादिन जीती। प्रकटकरौं जगमें श्रुतिनीती॥

दो० तुमहूं श्रुतिमत को गहौ जो उत्तम सब माहिं।
नतरु कहौ निजवदनसों वादशक्ति मोहिं नाहिं॥

तुम जीते यहु वचन उचारो। अथवा वाद कथा उरधारो॥
अर्थ भरे यतिवर के वयना। सुनिविस्मितह्वैगोगुणअयना॥

यह नवीन परिभव निज देखी । बोलो गौरव राखि विशेखी ॥
एक बार शेषहु किन आवैं । सहस वदन अपने दर्शावैं ॥
कबहूं नहिं मैं करौं उचारा । राउर विजय भयो मैं हारा ॥
श्रुतिसम्मत अपनो मत त्यागी । नहिं ह्वैहौं परमतअनुरागी ॥
यह अभिलाष सदा मम ठयऊ । कोउ न जग अस कोविद भयऊ ॥
जो आवै अरु करहि विवादा । होय कुतूहल मन अह्लादा ॥
बड़े भाग जो पै तुम आये । विजय मोहिं घर बैठे लाये ॥
चलै वाद गाथा अतिरूरी । सफल होय विद्या श्रम भूरी ॥
आपु मिलै जो सुधा प्रवाहा । को महिवासी ताहि न चाहा ॥
दो० यम भक्षक बड़ ईशको जेहि करि दीन*निराश ।
सो यह मण्डन तव निकट रविसम करै प्रकाश ॥
तुम कलहंस कला गुणधारी । प्रकटो गिरा कलह अनुसारी ॥
विधुकर सुधा धाम छविपावन । यतिवर कीजे वाद सुहावन ॥
वादि गर्ववन छेदनहारी । सुनी न मम चातुरी कुठारी ॥
वाद भीष तेहि कारण चाहा । नीके सुने न मम गुणगाहा ॥
मुनिवर अल्प याचना कीन्हीं । सो आनन्दसहित मैं दीन्हीं ॥
बिनहिं याचना के मुनि मोरी । वादकथाकी रुचि नहिं थोरी ॥
रहे वाद उत्साह घनेरे । नहिं आवा कोउ सन्मुख मेरे ॥
करिहौं वाद न कछु सन्देहा । मनमें है विकल्प कछु एहा ॥
विजय पराजय जाननिहारा । चहिये कोउ मध्यस्थ हमारा ॥
दो० यहु विवाद ऐसो नहीं कण्ठ शोष फल होय ।
उत्तमफल यहि वादकर जीति परस्पर सोय ॥
वाद माहिं वादी प्रतिवादी । दुइ बैठें यहि रीति अनादी ॥
पक्ष और प्रतिपक्ष सँवारैं । उभयप्रातिज्ञा कहि निर्द्धारैं ॥
मम तव कौनि प्रतिज्ञा भावा । किमिप्रमाणतहँइष्टःस्वभावा ॥
को मध्यस्थ कौन प्रण करहू । प्रथमाहिं यहविचार उर धरहू ॥
अहौं गृहीवर मैं द्विजराजा । वादि मनोहर तुम यतिराजा ॥

* खण्डन । प्रकाश । अभिप्राय ॥

जीति हारि कर प्रण अनुमानहु। विहँसितवदनवादपुनिठानहु॥
आजु कृतारथ मैं जगमाहीं। आप वाद मांगा मोहिं पाहीं॥
भयो महामुनि अधिक सनाथा। ह्वैहै वाद कथा तव साथा॥
येती विनय मोरि सुनि लेहू। आजु मोहिं तुम आज्ञा देहू॥
पूरो करों कर्म जो ठाना। ह्वैहै तव संवाद बिहाना॥
मण्डन सों बोले यतिराई। भली कहत हौ तुम द्विजराई॥
उभय मुनिनसन वचन उचारे। आप होहु मध्यस्थ हमारे॥
ऐसे सुनि मण्डन के वयना। दोनों मुनि बोले गुण अयना॥
तव जाया जो सब गुण खानी। सबविधितेहिशारदसमजानी॥
साखी ताहि बनाय विवादा। करहुविबुधद्वौ विगतविषादा॥
जानि मुनिन शारद अवतारा। कीन्हों यह उपदेश उदारा॥
भलेहिनाथकहि पुनिद्विजराजा। चाहौ करन उपस्थित काजा॥
प्रथमहिं सब की पूजा कीन्हीं। मधुर मनोहर भिक्षा दीन्हीं॥
तीनों मुनि बैठे भोजन करि। मनहुं तीनिपावकमूरति धरि॥

दो० मण्डन के दुइ शिष्य वर गुरु अनुशासन पाय।
चवँर करैं मुनिवरन पर दुहुँदिशि अतिसचुपाय॥

कर्म भयो पूरो द्विजवर को। तब संवाद भयो मुनिवरको॥
तीनों निगम परावर जाना। ब्रह्मविचार मधुर तिन ठाना॥
दुइ घटिका कहि कथा सुहाई। तीनों मुनि चलिभे हर्षाई॥
युग मुनि ह्वैगे अन्तर्द्धाना। रेवा तीर गये भगवाना॥
देवालय महँ कीन्ह निवासा। शिष्यनसबविधिकियोसुपासा॥
जैमिनि वेदव्यास मुनीशा। चाहैं दर्शन जासु सुरेशा॥
तिनके दर्शन सों हर्षाई। शिष्यनको सब कथा सुनाई॥
यहिविधि सुखसों राति गँवाई। जब रवि की अरुणारी छाई॥
नित्यनेम करि शिष्य समेता। पहुंचे प्रभु द्विजराज निकेता॥
सूरि सभा सोहैं तहँ भूरी। मानहुँ अमर मण्डली रूरी॥
सभा मध्य बैठे यतिराजा। उडुगणमहँहिमकरजिमिराजा॥

तब मण्डन निजप्रिया बुलाई । सभा मध्य शारद जनु आई ॥
सब विद्यानिधि परमविशारद । सबगुणधामनामपुनि शारद ॥
मण्डन तेहि मध्यस्थ बनाई । वाद कथा की रुचि सरसाई ॥
बैठी पति अनुशासन पाई । उभय वाद साखी हर्षाई ॥
दो० युगल बलाबल ज्ञानहित सभाशिरोमणिभाव ।
लहिअतिशयद्युतिमानसो शारदसम छविपाव॥
मण्डन की उत्कण्ठा देखी । वाद माहिं उत्साह विशेखी ॥
बोले शम्भु परावर ज्ञानी । सुनहु प्रतिज्ञा की मम बानी ॥
सांचो एक ब्रह्म परमारथ । सतचित निर्मलरूप यथारथ ॥
विश्व प्रपञ्च रूप सोइ भासै । रजतरूप जिमि सीपप्रकासै ॥
तासु ज्ञान बिन जगत प्रकासा । रज्जू सर्परूप जिमि भासा ॥
ज्ञान भये सब जगत हिराई । नाश अविद्या कर ह्वै जाई ॥
निजस्वरूप अस्थिति सुखदाई । सो निर्वाण मुक्ति कहि गाई ॥
हैं प्रमाण श्रुति मस्तक सारे । एक रूप के योधन हारे ॥
भई प्रतिज्ञा प्रण दर्शावें । भली बात जो जय हमपावें ॥
जुपै पराजय करहि प्रकासा । सहित कषाय वसन संन्यासा ॥
तजौं न कछु संशय मन करिहौं । श्वेत वसन तनपर मैं धरिहौं ॥
सो० जीति हारि फलदानि उभय भारती होय मन ।
जो सब गुण की खानि बैठी है शारदसरिस ॥
यहि प्रकार श्रीशंकर यतिवर । करी प्रतिज्ञा प्रणअतिदृढ़तर ॥
तब मण्डन बोले हर्षाई । मोरि प्रतिज्ञा सुनु यतिराई ॥
चित्स्वरूप परमातम माहीं । श्रुतिशिरकी प्रमाण है नाहीं ॥
शब्द शक्ति है कारज माहीं । शब्दयोग निर्गुण में नाहीं ॥
जैसे सुनो शब्द घट लावो । घटस्वरूप तुरतहिं उर आवो ॥
तैसे नहिं निर्गुण कर बोधा । शब्द करै नित कर्म प्रबोधा ॥
स्वर्गहु मुक्ति कर्म सन होई । जौलौ जिये करै नित सोई ॥
वाद किये जो जय नहिं पावों । महूं यती को वेष बनावों ॥

साखी जो राउर अनुमानी। हमहुँ तासुसम्मतिशुभजानी॥
जो हारै निज आश्रम त्यागी। दूजे के मत को अनुरागी॥
दो॰ यह प्रण करि दोउ सभामहँ पूजा अरु अभिषेक।
उभय भारती कर कियो दोनहुँ सहित विवेक॥
दोनहुँ निज निज पक्ष सँभारा। कीन्हों जल्पकथा विस्तारा॥
दिन प्रति नित्यनेम करि पूरा। वाद सभा बैठे द्वौ सूरा॥
भारति दुइ माला लै आई। उभय कंठ दीन्हें पहिराई॥
पुनि बोली शारदा सयानी। उभय सुनौ मेरी यह बानी॥
जेहिकी कण्ठमाल कुँभिलानी। लेहिपराजय निजपहिचानी॥
असकहि गई भवनमहँ शारद। गृहकारज विज्ञानविशारद॥
यतिवरभिक्षा पतिहितभोजन।गृहमेंनितप्रतिकरहिंमुदितमन॥
युगल परस्पर जयफल सादर। भयेकरहिं वरवाद उजागर॥
ब्रह्मादिक सुर निजनिजयाना। बैठे देखहिं वाद सुजाना॥
मण्डन भवन विमानन छावा। परमरुचिरसबभाँतिसुहावा॥
भयो दुहुँनकर बहुत विवादा। बोलहिं हर्षितविगतविषादा॥
वेद प्रमाण उभय दिशि देहीं। वचन चातुरी चितहरिलेहीं॥
साधु साधु सब सभा पुकारा। हर्षित देखि उभय व्यवहारा॥
दिनदिनअधिगत होहिंप्रकर्षा। बाढ़े दिनप्रति सूरि*निकर्षा॥
जीतन की दोनहुँ को ‡ तर्षा। तद्यपि दूरि कियो आमर्षा॥
दिनप्रति मध्यदिवस जब आवै। तिनको भारति आय बुलावै॥
कहै नाथ सों भोजन कीजै। बोलहि मुनिसों भिक्षा लीजै॥
यहिविधि होत विवाद सप्रीते। पांच किधौं षट वासर बीते॥
दो॰ बैठे आसनबांधिकै विकसितमुख नहिं खेद।
व्योमनिरीक्षणकंपनहिं क्रोधगिरा छल खेद॥
यहिविधिदोउअस्थापनखण्डन।करहिंयतीश्वरद्विजवरमण्डन।
देखी मण्डन की चतुराई। सहनिविचार भार गरुआई॥
क्षोभित सकल पक्ष हैं जासू। कोटि समग्र गिरी पुनितासू॥

---

* संनिकर्षा ‡ इच्छा॥

कह्यो शम्भु अब हमरी सुनहू । जो कछु कहनो है सो कहहू ॥
तब मण्डन निज पक्ष सँभारी । शंकरसन यह गिरा उचारी ॥
हे यतिराज आपु जो भाखा । ब्रह्म जीवमहँ भेद न राखा ॥
श्रुतिशिर तहां प्रमाण बतायो । सोहमकोनिश्चयनहिं आयो॥
यतिवर कह्यो सुनहु गुणवाना । जानि लेहु तुम यही प्रमाना ॥
श्वेतकेतु आदिक जे मुनिवर । तिनहिंकियोउपदेशउजागर ॥
❀आरुण्यादिगुरुन समुझायो । आतम ब्रह्म रूप दर्शायो ॥
सो० हैं यतिवर जप योग वाक्य तत्त्वमस्यादि के ।
श्रुतिशिरकेरप्रयोग और अर्थ कछुकहत नहिं ॥
हुंफट् जेहि प्रकार यतिराजा । तैसे श्रुति वरणी जयकाजा ॥
विश्वरूप ऐसी जनि भाषहु । निजमनयहसंशयनहिंराखहु॥
हुंफटादि कर अर्थ न भासा । तिनहिंविबुधजपयोगप्रकासा॥
तत्त्वमसी आदिक जे वयना । प्रकटअर्थजिनकोगुणअयना॥
जपकेयोग तिनहिं किमिमानहु । पण्डितह्वै अनर्थउरआनहु ॥
तब मण्डन यह पक्ष विहाई । और रीति सों तर्क उठाई ॥
तत्त्वमसी आदिक यतिरावा । यद्यपि अर्थ अभेद जनावा ॥
तद्यपि यह आशय उर आनहु । मखकर्त्ता की सुस्तुतिजानहु॥
है यजमान प्रशंसक मन्त्रा । यज्ञअंग जानहु निजतन्त्रा ॥
सुनि वाणी द्विजराज बखानी । दीन्हउतरुयतिवर विज्ञानी ॥
क्रियाअंगश्रुतिशिर तुम माने । यजमान स्तुति मन्त्र बखाने ॥
ऐसीसमुझ तुम्हारि न नीकी । शंकात्यागकरौ निजहियकी ॥
यज्ञ खम्भ सविता सम गावैं । कर्त्ता सुरपति सरिस बतावैं ॥
कर्म मन्त्र महँ यह बनि जाहू । तहां प्रशंसा कर निर्वाहू ॥
ज्ञानकाण्डकेमन्त्र कौनि विधि । क्रियाअंगमानतहौगुणनिधि॥
विश्वरूप कहँ सुनहु कृपाला । दृष्टि बतावति हैं श्रुतिजाला॥
साक्षात ❘ यहि ब्रह्म न जानौ । ब्रह्म दृष्टि कर्त्ता महँ आनौ ॥
जेहि में कर्म होय फलदायक । ब्रह्म दृष्टि है कर्म सहायक ॥

❀ उद्दालक ❘ सार ❘ जीवकी ॥

दो० यथा व्योममहँ तरणि महँ पुनि कीजे मनमाहिं।
ब्रह्मदृष्टि की भावना सांच ब्रह्म ते नाहिं॥

दृष्टिविधान मन्त्र जहँ गावैं। *द्विजवरतहँ कहिप्रकटजनावैं॥
विधि में सदा प्रेरणा आवै। अस कीन्हे नर यहफलपावै॥
व्योमादिक जहँ ब्रह्म बतावा। दृष्टिभाव तहँहीं बनिआवा॥
मन आदिकमहँ दृष्टिविधाना। वैसो नहीं ब्रह्म सन्धाना॥
तू है ब्रह्म जहां श्रुति कहई। दृष्टिभावना तहँ किमि लहई॥
ब्रह्मभाव आरोपन जानौ। जीवहि शुद्धब्रह्म तुम मानौ॥
तेहि कारण वेदान्त प्रमाना। नहिं लावै अपने मन आना॥
श्रुतिशिर यतिवर होहुप्रमाना। विधि को तुमकैसेनहिंमाना॥
मखविधिकोजेहिविधिफलगावा। ब्रह्मज्ञानफल मुक्ति सुनावा॥
ज्ञान भये भवदुख मिटिजाई। ब्रह्मानन्द न हृदय समाई॥
श्रवण मननकी विधि बहुगाई। क्यों नहिं मानतहौ यतिराई॥
जो मण्डन ऐसी तुम जानी। विधिआधीनमुक्तिपहिचानी॥
जो पै कर्म्मजन्य है सोई। स्वर्गसमान नित्य नहिं होई॥
जो उपजा है तासु विनाशा। सकलवेद यह अर्थ प्रकाशा॥
सदा उपासन केर प्रकारा। बनै उपासकरुचि अनुसारा॥

दो० करै चहै पुनि नहिं करै चहै करै विपरीति।
मन व्यापार भूत जो क्रियामाहिं यह रीति॥

वस्तु यथारथ बोधक माहीं। यह व्यवहार ज्ञानगत नाहीं॥
ज्ञान कर्म आधीन न होई। तहां क्रियाकी विधि नहिं कोई॥
ज्ञान प्रथम श्रवणादिक गाये। बुद्धि शुद्धि के हेतु बताये॥
मण्डन कह्यो सुनहु मुनिराया। ऐसोइ होहि जो आप बताया॥
तत्वमसी आदिक ये वयना। नाहीं सही उपासन अयना॥
है परन्तु मेरो अनुमाना। एकभाव नहिं कहहुँ सुजाना॥
जीवहि पर समान कहि गावैं। दोनहुँ को नहिं भेद मिटावैं॥
मण्डन हम कहँ देहु सुनाई। समता केहिप्रकार श्रुतिगाई॥

* हे द्विजवर॥

मानहु चेतन भाव समाना। सर्वज्ञादि गुणन समजाना॥
प्रथमपक्ष तव नहिं बनिआवा। जोप्रसिद्धसोश्रुतिन सिखावा॥
दूसर पक्ष जो तुम उर आना। तव सिद्धान्त विरुद्ध सुजाना॥
यतिवर जीव नित्य श्रुति गावैं। सुख बोधादिक गुण दर्शावैं॥
होहिं अविद्यावश नहिं भाना। यहिप्रकारश्रुतिकहहिंसमाना॥
तव वर्णित कछु दोष न आवा। तब यह शङ्कर वचन सुनावा॥
मण्डन जो ऐसो तुम मानहु। तबपरभाव न क्योंउरआनहु॥
तत्त्वमसी कर आशय सोई। वृथा दुराग्रह तव क्यों होई॥
जो तव मन यह शंका आवै। है पर तौ क्यों नहिं दर्शावै॥

दो० यहि संशय को उतरु तुम निजमुख कह्यो सुजान।
जीव अविद्याऽऽवरन ते परता होय न भान॥

विश्वरूप तव और प्रकारा। अवलम्बनकरिवचनउचारा॥
जो पर जग कारण भगवाना। है चेतन सो जीव समाना॥
चेतन ते जग सृष्टि बताई। याते लाभ कहौं यतिराई॥
अणू प्रधान प्रमुख जगकारन। वादि न माने होहिं निवारन॥
जो श्रुतियहुआशयद्विजगहती। तत्त्वमस्ति ऐसो पद कहती॥
तत्त्वमसी प्रयोग नहिं गावति। जो बहुअर्थ श्रुती दर्शावति॥
प्रधानादि कारणकर मण्डन। प्रथमहिंश्रुतिकरिदीन्हौंखण्डन॥
एक अनेक रूप मैं धरहूं। बहुप्रकार जग सर्जन करहूं॥
ऐसो चेतन निज उर धारा। सो जड़ते नहिं बनै विचारा॥
प्रधानादि मत खण्डन हेतू। कहहु न तुम ऐसो द्विजकेतू॥
मण्डन कह्यो सुनो भगवाना। एक भाव नहिं बनै सुजाना॥
सबसे बड़ प्रत्यक्ष प्रमाना। तासु विरोध होय गुणवाना॥
और मन्त्र जैसे जप लायक। तैसे तत्त्वमसी यतिनायक॥
बोले तब शङ्कर सुखदाई। विश्वरूप सुनियो मनलाई॥
गोसन * भेद प्रमा † जो होई। तौ अभेद श्रुतिबाधक सोई॥
इन्द्री सन्निकर्ष तेहि ‡ माहीं। तेहि तेहि भेद प्रमाकछुनाहीं॥

* इंद्री † ज्ञान ‡ आज्ञामें॥

तेहि कारण अभेद श्रुतिबाधा। कौनि रीति चाहो तुम साधा॥
सुनहु नाथ प्रत्यक्ष विरोधा। अहै प्रकट सबको यह बोधा॥
दो० ईश्वर ते मैं भिन्न हौं भासि रहौं यहु भेद।
यहीविशेषण जीवको मानहु आपु न खेद॥
भेदेन्द्रिय संयोग न होऊ। उक्त विशेषण मानहु सोऊ॥
जौन विशेषण द्विजवर मानहु। तेहि को सन्निकर्ष*तहँजानहु॥
कम्बुग्रीव कलश सब कहहीं। †तासु विशेषणजानतअहहीं॥
कहुँ न होय घट पृथिवी माहीं। आव विशेषणबलसों‡नाहीं॥
भेदाश्रय आतम जो होई। गो¶कर सन्निकर्ष लहु सोई॥
तबहीं होय विशेषण योगा। काहू सों न जीव संयोगा॥
तेहिकारण हम कहैं सो मानौ। केवल कोस विशेष न जानौ॥
यहि प्रकार वरन्यो भगवाना। मण्डन तब यह उतरु बखाना॥
आतम को नहिं इन्द्रिय योगा। कीन्हों जो यह आपु नियोगा॥
आयो यह संशय मन माहीं। नैयायिक मत देखो नाहीं॥
आतम द्रव्य द्रव्य मन कहहीं। उभय द्रव्य संयोगहु लहहीं॥
यह सुनिकरिविकल्पभगवाना। तासु पक्षखण्डन उर आना॥
आतमअणुकिमुव्यापकअहई। उभयभांति संयोग न लहई॥
दो० जो सावयव होय जग लहै सोई संयोग।
साथ सावयव वस्तु के ऐसो शास्त्र नियोग॥
मन को इन्द्रियमानिकै भेदा+ऽऽसंगिबखान।
परमारथ ते मन नहीं इन्द्रिय हैं ÷गुणवान॥
इन्द्रिय केर सहायक सोई। नयनसहाय दीप जिमि होई॥
मण्डन कह्यो सुनो मोहिंपाहीं। इन्द्रियजनित भेद जो नाहीं॥
तौ तुम भेद प्रमा असि मानौ। साक्षी को स्वरूप करि जानौ॥
यहि प्रकार जब भेद प्रसंगा। श्रुतिशिरकैसे कहहिं असंगा॥
यती नाथ कह वचन सुहावा। सुनहु भेद कर जैसो भावा॥
माया योग ईश है जोई। जीव अविद्या संगति सोई॥

। * आत्मामें † घट ‡ घट ¶ इन्द्री का + आसंगी ÷ है॥

उभयउपाधित्यागिश्रुतिभाखा । युगल शुद्ध महँ भेद न राखा ॥
यहिविधि विषयभेद अवरोधा । नहिंकुछ श्रुतिप्रत्यक्ष विरोधा ॥
अथवा जो प्रत्यक्ष विरोधा । पुनितेहिप्रबलश्रुतीजबशोधा ॥
तब विरोध को अवसर नाहीं । इहां सुनौ उपमा मोहिंपाहीं ॥
ज्ञान प्रसिद्ध रजत कर होई । सीप ज्ञान बांधै पुनि सोई ॥
जब यह सुनी यतीश्वर बानी । विश्वरूप तब कह्यो बखानी ॥
ऐसोइ होहि यथा तुम माना । तदपि सुनौ हमसो अनुमाना ॥
तब अंगीकृत भेद समेता । सदा जीव यह रहहि अचेता ॥
नहिं सर्वज्ञ ईश सम होई । घट की उपमा पावहि सोई ॥
मण्डन जो तुम भेद बखाना । सांचो वा कल्पित उरआना ॥
पहिले में उपमा* की हानी । दूजो तुम क्यों कहो बखानी ॥

सो० कल्पित भेद अपार जो जो जे मानत अहैं ।
कीन्हे अंगीकार हमहुँ स्वप्न प्रपंच सम ॥

दोष भयो सिध† साधन रूपा । क्योंनलखौनिजउक्तिस्वरूपा ॥
जब यहु शंकर उत्तर दीन्हा । औरप्रकार पक्ष तिन कीन्हा ॥
अपने प्रत्यय सों नहिं बाधा । भेदाश्रय चाहैं हम साधा ॥
आतमज्ञान यद्यपि है जाइ । घटपट भेद मिटब कठिनाई ॥
आतमज्ञान बाध नहिं पावै । ऐसो भेद तुम्हैं नहिं भावै ॥
तब विपरीत वस्तु हम मानी । कौनहु दोष न भा विज्ञानी ॥
आपन प्रत्यय को जगमण्डन‡। मानहुँ कहा अर्थ तुम खण्डन ॥
दुखसुख सहित आतमा जानौ । अथवासुखदुखरहितबखानौ ॥
भेद प्रथम महँ हमहूं माना । भासिधि साधन दोष सुजाना ॥
दूजे में नाहीं बनि पैहै । उपमा हानि वही फिरि ऐहै ॥
निरुपाधिक तहँ भेद यतीशा । कहहुँ सुनौ चितलाय मुनीशा ॥

दो० सोपाधिक जीवेश कर भेद करौं स्वीकार ।
निरुपाधिकघट ईशकर हम कीन्हौं निर्द्धार ॥

यतिवर सुनि मण्डन के वयना । कहनलगेसुनिये गुण अयना ॥

(* नेहनानास्तिकिंचन † सिद्ध ‡ आभूषण ॥

भेद ईश घट कर जो मानौ। तहां उपाधि अविद्या जानौ॥
तुम्हरे जड़ता के अनुमाना। सुनिये यह प्रयोग* मैं माना॥
आतम को कबहूँ नहिं भेदा। जेहि कारणचितघनगतखेदा॥
यह अनुमान हृदय निजआनौ। चेतन चेतन भेद न जानौ॥
सुनि यतीश के वचन उदारा। मण्डनपुनियहवचनउचारा॥
धर्मिप्रमा जेहि बाधन कीन्हा। आतमभेद नाथ हम चीन्हा॥
संसृत रहित ब्रह्म गत माना। तुम जस मानहु सुनहु सुजाना॥
ब्रह्मज्ञान सन भेदकी बाधा। घट कि प्रमासन भेद अबाधा॥
सिध साधन नहिं उपमा हानी। दोष कछू मुनिवर विज्ञानी॥
पूरण ज्ञान भेद नहिं जाई। अथवा अल्पबोध द्विजराई॥
प्रथमपक्ष नहिं बनहि द्विजेशा। पुनि सोइ उपमा हानि प्रवेशा॥
दुसरे महँ सिध साधन दोषा। मण्डन तुम जानहु तजि रोषा॥
धर्मी पद सों केहि तुम मानौ। निर्गुण किधौं सगुन पहिंचानौ॥
अन्त्य पक्ष नहिं बनहि तुम्हारा। सगुन बोध भेदहि नहिं टारा॥
हमहिं इष्ट सिध साधन आवा। दोष न तुमसन मिटहिमिटावा॥
मण्डन अब प्रथमहिं तुम कहहू। कौनि रीतिसन साधनचहहू॥
तेहि † अज्ञात कहहु द्विजराई। अथवा ज्ञात देहु समझाई॥
जो अज्ञात ब्रह्म तुम मानहु। पक्षाऽसिद्धि दोष तहँ जानहु॥
उपमा तासु सुनहु गुणवाना। यथा करहि कोऊ अनुमाना॥
व्योम पंक है पद्म समाना। परम सुगंधि न जाय बखाना॥
फूलि रहा अतिशय सुखदाई। निर्मल सरपंकज की नाई॥
जो तुम ज्ञात ब्रह्म उर आना। बिन अभेद नहिं मिलै सुजाना॥
तेहि श्रुति बल अभेद तुम पावा। तेहि चाहो अनुमान उड़ावा॥
अस लखि है तुम्हरो आरोपा। ह्वैहै श्रुतिशिरकर व्याकोपा॥

दो० तब अनुमानविरोध को छोड़दियो द्विजराय।
पुनि मण्डन बोलन लगे श्रुति विरोध दर्शाय॥

जीव ब्रह्म दुइ विहँग सजाती। प्रेमपरस्पर सहज सँघाती॥

---

* अनुमान † निर्गुणको॥

भव तरु दोनहुँ कीन्ह बसेरा। एक कर्म फल खाहिं घनेरा॥
दुसरेको नहिं फल की आशा। बिनचाखे नितकरहिं प्रकाशा॥
यहश्रुति उभय भेद सुठि साधा। मैं अभेद श्रुति की सुनि बाधा॥
लोकप्रसिद्ध भेद जो द्विजवर। जन्ममृत्युदुखप्रदअतिशयतर॥
जौनि बात संसार न जाना। करै अलौकिक वेद बखाना॥
आपुहि आपु भेद प्रकटाना। ताहि श्रुती कब करिहैं गाना॥
विफल भेद को जो श्रुति कहई। द्विजवर तौप्रमाण कब लहई॥
मण्डन जो ऐसो नहिं मनिहौ। अर्थ*वादसब सांचोजनिहौ॥
जेहिमें है कछु स्वारथ नाहीं। सो प्रमाण करिहौं उरमाहीं॥
विश्वरूप बोले मुनिराया। हमसन सुनहु प्रमाणउपाया॥
बरनहिं अर्थ प्रसिद्ध उदारा। श्रुतिमूलक स्मृति स्वीकारा॥
तैसेहि लोक सिद्ध जो भेदा। होय प्रमाण मूल लखि वेदा॥
द्विजवर सुनहु त्यागि संदेहा। सबविद्वुषन कर सम्मत एहा॥

दो० श्रुतिस्मृति के अर्थ महँ तासु मूल पहिचानि।
जाननिहारे वेद के निर्बल निज उर आनि॥

नहिं मानहिं जब श्रुतीप्रमाना। तबकिमिमानहिंलोकअयाना॥
प्रथमहिं सिद्ध भेद सब जाना। चहिये कह तहँ वेद प्रमाना॥
उभय† भेदवादिनि श्रुतिमानी। तुमसन कही इहां लौं बानी॥
यह श्रुतिको अब हृदय सुनावौं। तुम्हरो सब संदेह मिटावौं॥
बुद्धि विवेचन करि श्रुतिगावा। भव भय रहित जीव दर्शावा॥
सुखदुख भागि सत्त्व‡ दर्शायो। साक्षी चेतन पुरुष लखायो॥
ऐसो अर्थ सहो नहिं गयऊ। तासुउतरुमण्डन असकहेऊ॥
जो यह श्रुती ईश कहँ त्यागा। बुद्धिजीवकर करहि विभागा॥
तौ जड़ कहँ भोगी ठहरैहैं। केहिविधि सोप्रमाणश्रुतिपैहैं॥
हमसों द्विज शंका जनि करहू। पैंगि रहस्य बोध उरधरहू॥
यहश्रुतिकरतहँअधिकविचारा। यही अर्थ कीन्हों निरधारा॥
सत्त्व सदा सुख दुख संयोगी। द्रष्टा पुरुष प्रपंच वियोगी॥

* फलश्रुति † जीवेश ‡ बुद्धि॥

मण्डन बोले सुनहु यतीशा। पुरुष शब्द वाची तहँ ईशा॥
सत्त्व शब्द शारीर* जनायो। जीवबुद्धि तहँ नहिं दर्शायो॥
पैंगि रहस्य भलीविधि देखौ। द्विजवरतबनिश्चयकरिलेखौ॥
तहां सत्त्व कर कीन्ह विवेका। जेहि सन देखै स्वप्न अनेका॥
सत्त्वशब्दकहि करि जो गाई। कहि लक्षण सो बुद्धि बताई॥
सो० जो जाने यह देह क्षेत्रज्ञ तासों कह्यो।
यहिमेंनहिंसंदेह उभयशब्दकीवृत्तिलखु॥
पुनि शारीरकमहँ द्विजराया। क्षेत्रज्ञहु लक्षण दिखराया॥
द्रष्टा को पर्य्याय † बखानो। अपने मन संशय नहिं आनो॥
जीवहि स्वप्नक्रिया करकर्ता। वरण्यो यतिवर पुनि भवहर्ता॥
सो ईश्वर द्रष्टा यतिराया। क्षेत्रज्ञ पद सों कहि गाया॥
अर्थ चहहु द्विजवर उपरोधा। नहिं देखहु व्याकरण विरोधा॥
तिङ्प्रत्ययकरि कर्ता गावा। करण तृतीया सों दर्शावा॥
जेहिकरि देखै स्वप्न अपारा। यहि शरीर को देखनहारा॥
ऐसो जासु विशेषण भाषा। तहँकिमिकरहुईशअभिलाषा॥
यतिवर कहहि शब्द शारीरा। ईश्वर व्यापि रह्यो सबतीरा॥
तेहि परसो ईश्वर क्यों नाहीं। आवत यतिवर तव मनमाहीं॥
शंकर तब बोले हर्षाई। सुनौ गिरा हमरी मन लाई॥
जो व्यापक ईश्वरहि विचारो। क्यों शारीर नाम तेहि पारो॥
जिमिनभव्यापिरहोजगमाहीं। क्यों शारीर कहैं तेहि नाहीं॥
मण्डन बोले सुनु योगेशा। यह श्रुति जो न कहै जीवेशा॥
बुद्धि जीव कर करहि बखाना। बुद्धि अचेतन सब कोउ जाना॥
जड़ को सुखदुखभोगी कहहीं। ऐसीश्रुति प्रमाण क्यों लहहीं॥
विश्वरूप जिमि लोहे माहीं। देखी दाह शक्ति कछु नाहीं॥
अग्नियोग दाहक पुनि सोई। बुद्धिहु तैसेहि भोगी होई॥
चित्प्रवेश चेतन ह्वै जाई। यहिविधि सकलभोगबनिजाई॥
यहश्रुति जो अभेद परगाई। यतिवर और सुनौ मन लाई॥

* जीव † नामान्तर॥

दो० छायातप सम भिन्न द्वौ कीन्हे बुद्धि प्रवेश।
एक कर्म फल पान कर प्रेरक एक सुरेश॥

कठवल्ली श्रुति भेद सुनाया। मै अभेदबाधक मुनिराया॥
है व्यवहार सिद्धि सब जाना। वही भेद जो मन्त्र बखाना॥
सो*अभेदश्रुतिबाधक नाहीं। मण्डन करु विचार मनमाहीं॥
कहहि अलौकिक अर्थजनाई। सो अभेद†श्रुतिपरमसुहाई॥
है बलवान भेद श्रुति बाधक। अससमुझोद्विज‡भेदप्रसाधक॥
यति वरदायक नाथ सुजाना। भेद श्रुती सब भांति प्रमाना॥
प्रत्यक्षादि प्रमाण सहायक। है अभेद बाधक सब लायक॥
बुधवर अग्रगामि द्विजराई। विश्वरूप सुन तर्क विहाई॥
औरप्रमाण प्रबलनहिं करहीं। सब प्रमाण ऊपर श्रुति रहहीं॥

दो० श्रुति गतार्थ ग्राहक सकल जहँलौं जगतप्रमान।
दुर्बलता के हेतु सब उर आनौ धरि ध्यान॥

जो यह¶ब्रह्मभास क्यों नाहीं। यतिवर यह+संशयमनमाहीं॥
वस्त्रादिक सों ढांपो मण्डन×। जिमिघटकरैप्रकाशअखण्डन॥
तथा अविद्याऽवृत न प्रकासै। तत्त्वज्ञानि पुरुषन कहँ भासै॥
इत्यादिक मुनि युक्ति सुहानी। सुनि अनुमोदन कीन्ह भवानी॥
मण्डन गिरा वेग गुन हारी। शंकर युक्ति मनोहर प्यारी॥
बारहिंबार सराहि सुबानी। पुष्पवृष्टि वर कीन्हि भवानी॥
श्री भारति मध्यस्थ सयानी। लखि पतिकी माला कुँभिलानी॥
श्री शारद बोली मृदु वयना। भिक्षाउभय करहु गुनअयना॥
यहिप्रकार शिवविजयदिखाई। शंकर सों यह विनय सुनाई॥
दुर्वासा मोहिं दीन्हों शापा। करी कृपा लखिममसन्तापा॥
राउर विजय अवधिकरदीन्ही। आजु विजय शंकर तुमकीन्ही॥
अब शिवमैंजैहौं निजधामा। अस कहिचलनचह्योअभिरामा॥

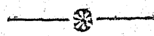
दो० वन दुर्गा के मन्त्रसों बांधी देवि तुरन्त।
ताहूको जीतो चहैं श्रीशंकर भगवन्त॥

---

* मन्त्र † तत्त्वमस्यादि ‡ है ¶ जानि + जानि × है॥

मत अद्वैत सिद्धि के काजा। ऐसो मन कीन्हों यतिराजा॥
नहिं सर्वज्ञ कहावन हेतू। तिहुं जग पूजित श्रीवृषकेतू॥
पुनि बोले शारद सन शंकर। जानौं तवप्रभाव अतिशयतर॥
चतुरानन गृहिणी जग जानी। शंभु सहोदरि मातु भवानी॥
लक्ष्म्यादिक सब तव अवतारा। जगपालनहित परम उदारा॥
भक्तशिरोमणिजननि तुम्हारो। जौहौं तोहिं सदा मैं प्यारो॥
ममरुचि राखि जाहु निजधामा। मानि लियो चतुरानन रामा॥
दो० तब शंकर मन हर्षित यहि विधि कीन्ह विचार।
मण्डन के अब हृदय को देखौं कहा प्रचार॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यश्रीस्वामिरामकृष्ण
भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेश्रीशंकर-
दिग्विजये मण्डनशास्त्रार्थपरोऽष्टमस्सर्गः ८॥



श्लो०॥ कुलोत्थदोषान्प्रविनाशयन्तं स्वानन्दरूपं सुविकाशयन्तम्॥
एकं परेणात्मनि भावयन्तं नमामहे योगिनृपं वयन्तम्॥ १॥

अथ नवमः॥

सो० यतिवर के सब बैन निगमागम शुभनयनिपुण।
सुनि मण्डन गुणऐन कियो आग्रह दूरि सब॥
तदपि कर्म जड़मति उरआनी। तुरत कही संशययुत बानी॥
सत्य कहौं मेरे मनमाहीं। नाथ पराजय को दुख नाहीं॥
जैमिनिवचनसकलमथिगयऊ।यहहमकोअतिशयदुखभयऊ॥
भावी भूत सकल मुनि जाना। जग उपकारक परमप्रधाना॥
वेदप्रवर्तन को व्रत जिनको। ऐसो क्यों चहिये पुनि तिनको॥
वृथा सूत्र केहि काज बनाये। तब बोले शिव वचन सुहाये॥
जनि यहि संशय तुमउरआनौ। मुनिवरको नहिं दोष बखानौ॥

कछुअनीतिनहिंजैमिनिकीन्ही। तासुहृदयहमसकहिंनचीन्ही॥
हम सन कहहु नाथ मतिधीरा। तिनकर जो आशय गम्भीरा॥
उचितजो कहिहौ तुम यतिराई। गहिहैं हमअभिमान बिहाई॥
जैमिनि परब्रह्म के ज्ञाता। कियो विचार लोकसुखदाता॥
विषयबुद्धि बहुधा जग माहीं। ब्रह्मज्ञान रहिहै उर नाहीं॥
तिनपर कृपा आनि उर माहीं। पुण्यकर्म्म तजि दूसर नाहीं॥
वर्णन कीन्ह मुनीश सुजाना। ब्रह्म मिलनकर साधन जाना॥
यहि कारण शुभकर्म बखाना। परब्रह्म कीन्हों नहिं गाना॥

दो० ब्रह्म मिलनहित श्रुति कहे वेद यज्ञ तपदान।
ब्रह्मचर्य संन्यास पुनि योग उपासन ज्ञान॥

मुक्तिपरायण परम उदारा। मुनिवर धर्मकीन्ह निरधारा॥
यह निश्चय हमरे मनमाहीं। दूसर हेतु और कछु नाहीं॥
मण्डन कह्यो सुनौ यतिराई। यदपिसत्यउरभ्रम नहिंजाई॥
जैमिनि ऐसे सूत्र बनाये। वेदक्रिया वर आशय छाये॥
क्रियापरायण जो श्रुति नाहीं। सो निरर्थ वरणी जिन माहीं॥
मुनिवर कर जबयहअनुमाना। सिद्धवस्तु परता क्यों माना॥
द्विजवरयद्यपि सब श्रुतिराशी। कहैं परंपर या अविनाशी॥
तदपि वेद कर्महु कहँ कहई। आतमबोध जासुफलअहई॥
ऐसो हेतु देखि मुनिराया। कर्मपरायण वेद बताया॥

दो० ऐसो जो आशय रह्यो मुनिवर केर यतीश।
खण्डन तौ परमेश को काहे कियो मुनीश॥

कर्म आप सब फलको दाता। कर्मछांड़ि नहिंऔर विधाता॥
यहिको कारण सुनु द्विजराया। मानत रहे कणाद निकाया॥
है अनुमान सिद्ध ईशाना। इहां करैं ऐसो अनुमाना॥
जगकर्ता ईश्वर कोउ मानो। जेहि ते जग कारज दरशानो॥
कारज को कर्ता नित होई। जिमि घटपट कर्ता रह कोई॥
बिनश्रुतिवचनकरहिअनुमाना। अरु अनुवाद वेदकहँ जाना॥

श्रुतिशिरगम्य पुरुष भगवाना। विनावेदकेहिविधिकोउजाना॥
श्रुतिगोचर है जेहिकर ज्ञाना। नाहिं मिलै कीन्हे अनुमाना॥
ऐसो भाव हृदय महँ राखी। खण्ड्यो तर्क युक्तिशत भाखी॥
दो० ईश्वर पर*अनुमान कहँ उद्भव प्रलय समेत।
फलहुसहितखण्डन कियो जैमिनि युक्तिनिकेत॥
जेहिप्रकार हम कह्यो बखानी। है रहस्य प्रतिकूल न बानी॥
मूढ़ गूढ़ भावहि नहिं जानै। मुनिहि निरीश्वरवादि बखानै॥
मुनि जानै परब्रह्म अनादी। एतेहि माहिं निरीश्वरवादी॥
यथा निशातम मलिन अपारा। करै न दिनमणिकहँ अँधियारा॥
जैमिनिवचन हृदयशिवकहेऊ। मण्डनमनअतिशयसुखभयऊ॥
सहित शारदा सभा सयाने। गिरा यथावत सुनि हरषाने॥
जैमिनि आशय शम्भु बखाना। जानिलियो मण्डन गुणवाना॥
तद्यपि यह मन कीन्ह विचारा। सुनिलीजै जैमिनि के द्वारा॥
मुनि सुमिरन कीन्हों मनमाहीं। आये जैमिनि मण्डन पाहीं॥
सुमति सुनौ संशय जनि करहू। भाष्यकार वाणी उर धरहू॥
जो मम वचन भाव इन कहेऊ। ऐसोइ तात हृदय मम रहेऊ॥
मेरो हृदय अकेल न जानहिं। निगमागम को भाव बखानहिं॥
ये त्रिकालदर्शी सब जाना। नहिं कोऊ यतिराज समाना॥
सब श्रुतिशेखर वचन सुहाये। मम श्रीगुरु चित्पर†निर्णाये॥
तिन सों भै मम बुद्धि सयानी। तत्प्रति‡कूलकहबाकिमिबानी॥
तेहि कारण सब संशयत्यागी। सुनु ममवचनहृदय अनुरागी॥
दो० भवसागरमहँ मग्न लखि लोग लियो अवतार।
इन कहँ जानो परपुरुष अद्वय रहित विकार॥
कृतयुग कपिलरूप धरि ज्ञाना। लोकतरनहित कीन्ह बखाना॥
दत्तात्रय स्वरूप पुनि गहेऊ। त्रेता प्रजहिं ज्ञान तिन कहेऊ॥
द्वापर व्यास रूप भगवाना। कलिमहँ शंकर कृपानिधाना॥
यहि विधि शिवपुराण में गाई। इनकी महिमा जग सुखदाई॥

* परायण † परायण ‡ पास॥

तेहि कारण मन और न धरहू। शरण होहु भवसागर तरहू॥
असकहि मुनि भे अन्तरधाना। शिवमूरति धरिहृदय सुजाना॥
कर्मिशिरोमणि तव शिरनाई। करन लगो बिनती हरषाई॥
छं० मैं जानिलीनप्रभाव राउर तुम जगतकारण सही।
तुमसम न कोउजगअधिकतातवकहहुप्रभुकौनेलही॥
आनन्द ज्ञानस्वरूप देखो जगत अबुधन सों भरो।
उद्धारहित तिनके कृपानिधि आपु शिवनरतन धरो॥
जो एकपद*सबवेद मस्तक बीच प्रतिपादन कियो।
तुमतासुप्रतिपालकमनोहरतत्त्वमस्याऽऽयुधलियो॥
नतरु जैन प्रलाप विस्तृत कूप जो अँधरो महां।
गिरिजातपुनि नहिं पावतो सो कौनसी आपद तहां॥
दो० जागि गये हम स्वप्नसों स्वप्न दूसरो देखि।
मानहिं मूढ़ विमोहवश अपने हृदय विशेखि॥
तिमि लोकान्तर जानकहँ मुक्तिकहहिं कोइलोक।
तिनहिं हँसैं तवदास जे मायारहित विशोक॥
छं० धिग्भेदि‡ प्रलपित मुक्तिकहँ संसार जहँ लागोरह्यो।
यह सेव्यसेवक सेवना कर्तृत्व दुखजहँ नहिं बह्यो॥
तवकथितअस्थिरमुक्तिको अत्यन्त अनुमोदनकरौं।
भवहीननिरवधिबोध चित्सुख अक्षततनुउरमें भरौं॥
सो० अखिल ईश को ग्रास कीन्ह अविद्याराक्षसी।
फारि पेट बिन त्रास तहँ सों लाये काढ़ि तुम॥
असुर नारि घेरी जो सीता। ग्रास भई नहिं परम पुनीता॥
अखिलस्वामिप्यारिहिहनुमाना। जाय देखि आये बलवाना॥
निश्चरि मारि ताहिनहिं+लायो। तदपितासु यश तिहुँपुरछायो॥
तवयश की शंकर मितिनाहीं। किमिकहिआवैसोमोहिंपाहीं॥
सब संसृति दुख मेटनिहारी। अतिशयमहिमा नाथतुम्हारी॥
बिनजाने जो भा अपराधा। क्षमहुदयापयसिन्धुअगाधा॥

* आत्मा † आत्मा ‡ भेदवादी + सीता॥

गौतम कपिल कणाद अनेका। रहा जिनहिं बहुबोध विवेका॥
मोह लह्यो श्रुति निर्णय माहीं। शिवबिनतहँसमरथकोउनाहीं॥
सुधाधार सम सरस प्रचारा। तवमुखचन्द्रगलितव्याहारा॥
जब सों यहि जगमाहिं विराजे। तबसों मोहतिमिर सब भाजे॥
दो० काणादिक वाणीजनित रहा मोह तम भार।
हृदय मलिनता हेतु सों गयो भयो उजियार॥
ईश्वर विग्रह खण्डन करहीं। श्रुतिगोछेदन मनमहँ धरहीं॥
महामोह मद सों मतवारे। वादि समूह यमन अनुहारे॥
व्यापिगयोमहिमण्डल माहीं। रही मुक्ति आशा जग नाहीं॥
सत्य ब्रह्मवादिन के राजा। शउर जे वर शिष्य विराजा॥
उदय भये दिशिदिशि बहुतेरे। जितकलिमलजितचित्तघनेरे॥
प्रथम*कही चिन्ता अब नाहीं। रहो न रहिहै तम जगमाहीं॥
अल्पबुद्धि कृत विवरण जोई। भये सर्व श्रुतिग्रासक सोई॥
नाथ गिरामृतधार समाना। जोश्रुतिताहिकरतिनहिं पाना॥
दो० तौ श्रुतिआतम भाव को किये उचित निरधार।
करती सुखसों विश्वमहँ कौनप्रकार विहार॥
भव सविता कर जो संतापा। सहिनजायजगत्रिविधप्रतापा॥
शशिकर निन्दक शंकरबानी। जो नहिं होति सुधारससानी॥
मिटतो कौनि भांति भवतापा। तथा जात केहिविधि तम पापा॥
श्रुत†गृह दार सुवन धन नाना। व्रतसंयम बढ़िगो अभिमाना॥
कर्मारूढ़ परो भवकूपा। मोहिं निकारौ कृपास्वरूपा॥
प्रथमजन्म तप कीन्ह अपारा। तासु पुण्य भा दरश तुम्हारा॥
नतरु आपु जगदीश कृपाला। दुर्घट तव सँग कथा रसाला॥
नाथ गिरा परिचय मैं पावा। शान्तिसुकृति को बीजसुहावा॥
दम स्वरूप अंकुर उल्लासा। तेहिकरपल्लवसरिसप्रकासा॥
कल्पविटप सम महा विरागा। तासु मनहुं वरकली विभागा॥
लता तितिक्षा सुमन समाना। मन समाधि मकरन्द प्रधाना‡॥

* मुक्तिनिराश † शास्त्र ‡ मुख्य॥

श्रद्धा को शुभ फल सुखदाई । मिलो अहो ममभाग बड़ाई ॥
दो० नाथकृपा चितवनि झरी धन्य पुरुष जो पाव ।
अमरसुखद भवग्रासितकहँ मुक्तिस्वरूप दिखाव ॥
यहिजग विषयी लोग लुभाने । मृगनयनी चितवनिरुचिमाने ॥
कुच तट पट खोलत मनलाई । धन्य जन्म परिरम्भण पाई ॥
तासु कला सम्भ्रम गुणलीला । परवशहृदयविषयरसशीला ॥
ऐसेहु अहैं बहुत जग माहीं । कामिनिक्रीड़ामृग नर नाहीं ॥
सुकृतिशिरोमणिअधिकसयाने । सुयश भवन जगमें हरषाने ॥
सुखप्रद तव वचनामृत धारा । करहि मगनमन वारि विहारा ॥
नाथ भणित मुक्ता मणि चारू । तन्तु मनोहर सुभग विचारू ॥
हारसरिसशुचि ज्ञान प्रकाशा । करहिं अविद्या तमकर नाशा ॥
अधिक मनोहर यहि जगमाहीं । तेहिसमानकोउ भूषणनाहीं ॥
जे सब सन्त ताहि उर धारहिं । हर्षित दुख दारिद्र्य निवारहिं ॥
तिनकी देखि अलौकिक शोभा । आतमविद्यातियमन लोभा ॥
ग्रहण करै नित इन कहँ धाई । शत*मखप्रमुखसुरेशविहाई ॥
तवयश सवितासरिस प्रकाशा । पङ्कजश्रुतिउपदेश विकाशा ॥
सन्त कोक पोषक सुखदाई । दुखप्रद खल उलूक समुदाई ॥
श्री शंकर मूरति सुखधामा । तेहिकोजोहम कीन्हप्रणामा ॥
निजानन्द सागर सुख भयऊ । उरदुरन्ततमसबमिटिगयऊ ॥
छं० सुमिरन तुम्हारो कल्पतरु नन्दन कमलपदवन्दना ।
सङ्कल्प सुरतरु बेलि तवगुण स्वर्नदी † जगनन्दना ॥
चितवनि तुम्हारी स्वर्गवर पहिंचानि तव सेवक मुदा ।
अतितुच्छ जानहिं स्वर्गको जहँ पतनभयलागोसदा ॥
दो० तेहि कारण सुत दारगृह द्रविण कर्म परिवार ।
त्यागि शरण आयो भयो किंकर नाथ तुम्हार ॥
सेवक जानि कृपा अब कीजै । प्रभुमोहिंउचितासिखावनदीजै ॥
यहिविधिमण्डनाविनयसुनाई । शंकर हृदय कृपा सरसाई ॥

---

* इन्द्रादि † गंगा ॥

तब प्रभु शारद ओर निहारे । शिवरुचिलखितेहिवचनउचारे ॥
मैं राउर मनकी गति जानी । यतिकेशरी सुनौ ममबानी ॥
भवावाद तापस के वयना । तुमहिंसुनावतिहौं गुणअयना ॥
एक समय रहि मातु समीपा । तहां एक तापस कुलदीपा ॥
आये जटाजूट शिर भारी । अतिसोहै दामिनि छविहारी ॥
श्वेत विभूति शरीर विराजा । ऐसो तेज मनहुँ दिनराजा ॥
अर्घादिक पूजाविधि जैसी । मम माता कीन्ही सब तैसी ॥
पुनि प्रणामकरि पदजलजाता । मम भावी पूछा सबमाता ॥
हे मुनिनाथ सुता कर भागा । नहिं जानौं गुणदोष विभागा ॥
तपबल तुम भावी सब जानो । करुणाकरिप्रभुमोहिं बखानो ॥
गोपनीय यद्यपि किन होऊ । भाषहिंप्रणतदेखिमुनि सोऊ ॥
केती बयस सुता की ह्वैहै । कैसो पति कितने सुत पैहै ॥
अन्न वसन धन कैसो पैहै । प्रीतम सहित यज्ञ मन लैहै ॥
अस पूछा मम मातु सुबानी । नयन मूंदि देखा मुनि ज्ञानी ॥
सकल प्रश्न क्रमसों मुनि गाये । गोपनीय पुनि चरित सुनाये ॥
वेद बहिर्मुख संमत धारी । व्यापिगयेसबधरणिमँझारी ॥
वैदिक पथ अस्थापन कारन । मण्डनरूप धरो चतुरानन ॥
तासुप्रियातवसुतासयानी । जिमिशिवप्रियजगजननिभवानी ॥
यथा रमा प्यारी हरि केरी । करिहै महिमख क्रिया घनेरी ॥
पति अनुरूप पाय सुख पैहै । सुत ह्वैहैं पुनि जग यश गैहै ॥
दो० प्रबल कुमति की वृद्धि सों श्रुतिसिद्धान्त अनूप ।
नष्ट उधारन हेतु शिव धरिहैं मनुज स्वरूप ॥
निजपद महिमाण्डित प्रभुकरिहैं । यतीराज वर वेष सुधरिहैं ॥
तव तनया पति साथ विवादा । ह्वैहै चिरलौं विगत विषादा ॥
देखि शम्भु की विजय सुहाई । गहिहै शरण स्वगेह विहाई ॥
कहिअसवचन मुनीश सिधावा । तबकछुभयो यथामुनिगावा ॥
शिष्यभाव प्रथमहि कहिराखा । सो किमिहोयवृथा मुनिभाखा ॥

यद्यपि यह सब सत्य यतीशा। नहिं समग्र जीत्यो मम ईशा॥
अर्द्ध अंग मम देह विराजै। याहू को प्रभु करहु पराजै॥
तब निज शिष्य करौ त्रिपुरारी। यह बिनती सुनिलेहु हमारी॥
यद्यपि जग कारण परमेशा। परम पुरुष सर्वज्ञ सुरेशा॥
तदपि नाथ सह विवदन हेतू। हृदय कुतूहल मम वृषकेतू॥
याय † जूक अर्द्धांग भवानी। धर्मचारिणी परम सयानी॥
विमल मधुर वर आशय सानी। उभय भारती की सुनिबानी॥
अतिशय मुदित भये श्रीशङ्कर। शारद को दीन्हों यह उत्तर॥
निजविवादरुचिसुमुखिबखानी। अबले‡उचितकहीनहिंबानी॥
महायशी नर यहि जग माहीं। करतविवाद बधुन सँगनाहीं॥

दो॰ भगवन जेहि निज पक्ष के भेदन में मन दीन्ह।
नारी कै नर तासु सँग वाद चाहिये कीन्ह॥

जो चाहै निज पक्ष सँभारा। सो ऐसो नहिं करहि विचारा॥
यही विचारि मुनीश सयाना। याज्ञवल्क्यजिनकहँजगजाना॥
नाम गार्गी नारि सयानी। तेहिसनवादकीन्ह मुनिज्ञानी॥
सुलभा अबला साथ विदेहू। कीन्ह विवाद न कछु संदेहू॥
ये दोनों शंकर जग माहीं। कहौंनाथकिमियशानिधिनाहीं॥
सुनि ये वचन युक्ति रससाने। श्रुति×सरिता सागर हर्षाने॥
विदुष सभा बैठे यतिरावा। शारद साथ वाद सरसावा॥
विजय परस्पर की रुचिभारी। बोलहिं वाद कथा विस्तारी॥
बुद्धि चतुरता रचित मनोहर। शोभितशब्दभरी जहँ सुन्दर॥
इमि विवदहिंशारद यतिराजा। सुनिविस्मितसबविदुषसमाजा॥
उभयकथा पद युक्ति विचित्रा। सबगुणयुत सबभांति पवित्रा॥

दो॰ इनकी उपमा शेष नहिं सविताहू नहिं पाय।
नाहिं बृहस्पति शुक्र नहिं है सबसों सरसाय॥

नियमकालतजि नितप्रतिहोई। राति दिवस उपराम+न सोई॥
करहिं वाद दोनों नहिं जीते। यहिविधिदिवससप्तदश बीते॥

⊛ स्वामी † अतियंजनकर्तामण्डन ‡ हैं × शंकर + विवाद॥

शारद दीख विजय नहिं होई। निगमागमसब जानहिं सोई॥
अजयमानिपुनि कीन्ह विचारा। इन संन्यास बालपन धारा॥
जेतो नियम सदा ये करहीं। ब्रह्मचर्य सबविधि अनुसरहीं॥
कामागम इनकी बुधि नाहीं। करिहौंविजयपूछितेहि माहीं॥
यह मन में निश्चय जब आई। श्रीशारद अतिशय हर्षाई॥
कामागम की प्रश्न सयानी। लाय प्रसंग कीन्ह वरबानी॥
छं० हैं पुष्पधनु की कै कला अरु कलारूप बखानहू।
अस्थान तिनको कहहु मोसन तथा जो तुम जानहू॥
केहि भांति अस्थित मदनकी दुइपाख मोहिंबखानिये।
केहिरीतिसोंनरनारिमहँतिथि कहहुशम्भुजोजानिये॥
सो० सुनि शारद के बैन चिरलौं नहिं कछु शिव कह्यो।
श्रीशंकरश्रुति ऐन यहिप्रकार निज मन गुन्यो॥
बिन उत्तर अज्ञान प्रकाशा। उतरु दिये निजधर्म विनाशा॥
अस विचारि मनमाहिं सुजाना। मानहुं कामाऽऽगमनहिंजाना॥
रक्षन हेतु यतिन को धर्मा। बोले शङ्कर सहज अकर्मा॥
मास अवधि मोहिं देहु भवानी। बादि अवधिसंमतउर आनी॥
कामशास्त्र अभिमान सयानी। पुनिछांड़हुगी सुदति सुबानी॥
तब शारद कियो अंगीकारा। गगनपन्थ यतिराज सँभारा॥
योगिराज श्रुति विग्रह शंकर। तैसेहि सेवक साथ गुणाकर॥
नभ पथ जाति भूमिमहँ देखा। मृत नृप देह विलाप विशेखा॥
दिविच्युतअमरसरिसवपुधारी। दुखित सकल मन्त्रीनृपनारी॥
मृगया वश मूर्च्छित गत प्राना। अमरकनाम नृपति वर जाना॥
तरु छाया तर धरो शरीरा। निशासमयपालहिंगतधीरा॥
वचन सनन्दन सों प्रभु भाषा। प्रकटकरीअपनी अभिलाषा॥
यह अमरक नृप धरणिमँझारी। सौते अधिक जासु वर नारी॥
सुन्दरता सौभाग्य निकेता। पङ्कजलोचनि अहहिं सुचेता॥
सो नृप मृतक भूमि महँ सोवै। सह परिवार प्रजा सब रोवै॥

दो० यहि की देह प्रवेश करि तेहि सुत थापि नरेश।
योगप्रभाव सँभारि पुनि निज तन करों प्रवेश॥
यह इच्छा मोरे मन माहीं। प्रकट करतहौं सो तुम पाहीं॥
नृपति अनूपम ये वरवामा। कमलविलोचनि अतिअभिरामा॥
किल ❀किंचित जे भेद घनेरे। देखा चहौं भाव तिनकेरे॥
जेहि में सर्वज्ञता निबाहौं। तेहि कारण ऐसो मैं चाहौं॥
सहित सकोच शम्भु की बानी। सुनि पुनि कह्यो सनन्दन ज्ञानी॥
तुम सर्वज्ञ शम्भु जग माहीं। नाथ तुम्हैं कछु अविदित नाहीं॥
तद्यपि राउर भक्ति कृपाला। करहि मोहिं यहि क्षणवाचाला॥
प्रथम रहे मत्स्येन्द्र सुजाना। योगिराज गुणज्ञान निधाना॥
शिष्य तासु गोरक्ष योगिवर। तिनहिं राखि निज तन रक्षापर॥
मृतकनृपति तनकीन्ह प्रवेशा। करों राज सुखसों तेहि देशा॥
मङ्गल पूरि गयो महि माहीं। कौनिहुं भांति प्रजादुख नाहीं॥
दो० मेघ समय पर देहिं जल खेत यथारुचि अन्न।
नित मङ्गल युत प्रजा लखि मन्त्री भये प्रसन्न॥
नृपति अलौकिकज्ञानविशेखी। जानि गये सब लक्षण देखी॥
योगीश्वर कोउ नृपतन आवा। तेहि कारणयह उदय सुहावा॥
वशीकरन हित ते नृप रानी। समुझावतभे कहि मृदुबानी॥
नृत्य गान अभिनय बहुतेरा। मन आसक्त भयो मुनि केरा॥
योगसमाधि बिसारि सब गयऊ। मुनिवर प्राकृत नरसम भयऊ॥
गुरु शरीर रक्षक गो रक्षा। गुरु चरित्र जाना अतिदक्षा॥
नटवर वेष धारि तहँ आवा। अन्तःपुर तिय नृत्य सिखावा॥
गुरु समीप पहुँचे यहि भांती। राजा मुदित देखि गुणपांती॥
अति समीपवर्त्ती नृप केरा। देख्यो तासु प्रसाद घनेरा॥
एक समय वर अवसर पाई। बोध कीन्ह गुरुकहँ समुझाई॥
भूपति राग दूरि जब भयऊ। योग बताय ताहि लै गयऊ॥
यहि विधि पाइ गुरु निज देहा। अससुखदायकविषयसनेहा॥

❀ रोमाञ्चहर्षभीत्यादेःसंकरः॥

ऊर्ध्वरेत व्रत खण्डन पापा। ह्वैहै किमि न नाथ परितापा॥
कहँ यतिवर के नेम सुपावन।कामकलाकहँ अधिकअपावन॥
तुमहिं विचारहु गे जब ऐसे। धर्म सेतु रहि है जग कैसे॥
परमहंस पथ थापन हेतू। कीन्ह प्रतिज्ञा तुम वृषकेतू॥
अविदित नाथ तुमहिं कछुनाहीं। राउर प्रेम जो मम उरमाहीं॥
दो० तेहिवशकीन्ही विनययह क्षमियो मोहिं दयाल।
उचित होय सो करहु अब करुणानिधि जनपाल॥
पद्मपाद की सुनि यह बानी। बिनती नीति भक्तिरससानी॥
सुरगुरुसरिस गिरा कहि शंकर। तातवचन पावन अतिसुन्दर॥
सावधान सुनु तदपि सिखावन। परमारथ भवभीतिनशावन॥
जे असंग तिनको नहिं कामा। जिमि हरि गोपवधू अभिरामा॥
योग क्रिया वज्रोलि सुहाई। रीतिसहित जेहि ने करिपाई॥
तेहि कर रेत पतन नहिं होई। ऊर्ध्वरेत व्रत जाय न सोई॥
हैं अभिलाष जिते जग माहीं। बिन संकल्प होहिं ते नाहीं॥
सो संकल्प तात मोहिं नाहीं। कौनिउ चाह यथा हरिमाहीं॥
सो संकल्प न जाहि प्रकाशा। होय तासु भवबन्धन नाशा॥
करहि चहौं सो कर्म घनेरे। संसृति दोष आव नहिं नेरे॥
अहै विचार हीन पुनि जोई। देहादिक अहमिति दृढ़ सोई॥
जो असजड़मतितत्त्व न जाना।तेहिप्रतिविधिप्रतिषेधप्रमाना॥
अहै बहुरि जो आतम ज्ञानी। सो नहिं कबहुँ देह अभिमानी॥
वर्णाश्रम वपु जाति विहीना। अज अरु बोधरूप गुणहीना॥
सदा एकरस आपुहि जानी। निगम शिखरवासी विज्ञानी॥
सदा असंग रहत है सोई। विधि किंकर कबहूं नहिं होई॥
दो० मृद्भाजन जेहि भाँतिसों बिनमृदि* के न दिखाहिं।
जगत भयोहै ब्रह्मसों तेहि† बिन कछु जग नाहिं॥
जग यह तीनि काल तहँ नाहीं। रजत जौन विधि सीपीमाहीं॥
है अशेष जग मिथ्या जाहीं। कर्मफलन सों नहिं लपटाहीं॥

---

* मृत्तिका † ब्रह्म॥

स्वप्ने पाप पुण्य कर कोई। जागे नहिं तेहिकर फल होई॥
तेहिते जो परमारथ ज्ञानी। कर्मजनित कछुलाभ न हानी॥
सो शत वाजपेय किन करई। प्राण अमित विप्रनके हरई॥
नहिं जेहिके अहमिति उर माहीं। तेहिको पुण्य पाप कछु नाहीं॥
एक समय सुरगुरु गे त्यागी। इन्द्रगर्व लखिभये विरागी॥
सुरपति विश्वरूप गुरु कीन्हो। होमसमयातिनकोछलचीन्हो॥
असुरन को दीन्हों तिन भागा। मारो विप्रघात भयत्यागा॥
एक बार देखे बहु यतिगन।तिनसनमघवाकह्योमुदितमन॥
तुम सब ने लीन्हो संन्यासा। करियेकछु निजज्ञान प्रकासा॥
तजि शौचादिक वेषमानको। नहिंगायोकछु वचनज्ञानको॥
मारे सकल क्रोध बहु कीन्हा। वृकगणकहँतिनकरतनदीन्हा॥
कीन्हो यद्यपि पाप घनेरा। बाँको बार न सुरपति केरा॥
ज्ञान प्रताप दुखो नहिं माथा। है ऋग्वेद माहिं यह गाथा॥
जनक बहुत मख जगमहँ कीन्हे। विप्रन बहुतदान पुनि दीन्हे॥
जीवन्मुक्त विदेह कहायो। तन सम्बन्ध स्वप्न नहिं पायो॥
यजुर्वेद कर यह इतिहासा। ज्ञानमहातम परम प्रकासा॥
दो० इन्द्र सरिस नहिं हानि कछु नृपति जनकसम वृद्धि।
पुण्य पाप सों ज्ञान की यह विवेक वर सिद्धि॥
ज्ञानी करहि न मन संतापा। क्यों बनिआयो हमसन पापा॥
हमसों कछु न पुण्य बनिआई। ज्ञानी नहिं ऐसे पछिताई॥
यही देह सों जो उर धरहूं। कामागम परिशीलन करहूं॥
नहिं कछु दोष तदपि सुन ज्ञानी। संप्रदाय रक्षण उर आनी॥
और देह में जान विचारा। जेहि न होय शुभपन्थ बिगारा॥
यहिविधि कहिभवभञ्जनि गाथा। जिनकरयशगावहिंमुनिनाथा॥
पदचारी नर पहुंचि न पावा। अतिऊँचो गिरिशृंग सुहावा॥
तहां जाय बोले श्रीशंकर। शैलगुहा देखौ अतिसुन्दर॥
समतल विपुलशिला चहुँपासा। स्वच्छ सरोवर वारिप्रकासा॥

तट पर विटप मनोहर राजैं। फल सों शाखानम्र विराजैं॥
दो० काम कला के योग में जौलौं और शरीर।
धरिसो अनुभव करहुंगो तौलौं तुम मतिधीर॥
मम सब शिष्य बसौ यहि तीरा। पालहु सजग हमार शरीरा॥
ऐसो शिष्यन कहँ उपदेशा। गुहामाहिं प्रभु कीन्ह प्रवेशा॥
निजतन तहांत्यागि मुनिराया। लिंगशरीर सहित नृपकाया॥
कीन्ह प्रवेश योग बल धारी। कौतुकधाम शम्भु त्रिपुरारी॥
छं० सबभांतिनिश्चलकायमनबुधि कियोनिजसुस्थिरहियो।
निज पादतलसों खैंचि क्रम क्रम प्राण ऊपर लैगयो॥
दश द्वार मारग जाय बाहर देह को त्यागत भयो।
नृपब्रह्मरन्ध्र प्रवेश करि तन चरण लौं पूरण कियो॥
सो० कीन्हों नृप के अंग वदन प्रभा पहिले उदै।
मारुत चलन प्रसंग नासापुट में पुनि भयो॥
अग्रिचलन ते पीछे भयऊ। नयन यथावतपुनि छविलयऊ॥
फरकन लाग्यो हृदय प्रवेशा। सकल देह बलकीन्ह प्रवेशा॥
उठि बैठो जनु सोवत जागा। जियो देखिसबकर दुखभागा॥
रानिन जबहिं नाथमुख देखा। उर उपजो आनन्द विशेखा॥
हर्ष शब्द मुख पंकज माहीं। शोभा कहि न जात मोहिंपाहीं॥
जिमि अरुणोदय अवसरपाई। पुष्करिणी की छवि सरसाई॥
अतिविकसितवरकमलसुहाये। सारस शब्द सहित मनभाये॥
यहिविधिपुष्करिणी छविजैसी। नृपतरुणी सुखमा पुनि तैसी॥
रानिन को अस हर्ष विलोकी। नृपतिबहुरिजीवनअवलोकी॥
मन्त्रिन के मन मोद न थोरा। बाजनकी ध्वनि भै चहुंओरा॥
दो० शंख पणव अरु दुन्दुभी बाजे पटह निशान।
तेहि ध्वनि बहिरेकरिदिये दिविभुवि के सबकान॥
इति श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री७स्वामिरामकृष्णभारती
शिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेश्रीशंकरदिग्विजये
सार्वज्ञोपायवर्णनपरोनवमस्सर्गः॥ ९॥

श्लो० ॥ नीलमेघवरश्यामं तडित्पिङ्गजटाधरम्।
वन्दे कमलपत्राक्षं श्रीव्यासं जगतांगुरुम् ॥ १ ॥

अथ दशमः ॥

दो० सावधान ह्वै नृपति वर मन्त्रिन आयसु दीन्ह।
बोलि पुरोहित विप्रगण शान्तिकर्म सब कीन्ह ॥
मृतजीवनमहँ जो व्यवहारा। भयो यथाविधि मंगलचारा ॥
भद्र * गयन्द चढ़्यो हर्षाई। साथ सचिव सबनारि सुहाई ॥
जब पहुंचो निजनगर सुहावन। होनलगे तहँ रुचिर बधावन ॥
पुरजन प्रियजन सब परितोषे। कहि प्रियवचनभलीविधिपोषे॥
भयो चक्रवर्त्ती भूपाला। आज्ञा मानहिं सब नरपाला ॥
उत्तम सचिवसहित सो राजा। महि पालत निजराजविराजा ॥
सहसनयन अमरावति जैसे। निज पुर पालहिं नृपवर तैसे॥
यहिविधि महिपतिह्वैयतिराजा। धर्मसहित पालहिंनिजराजा ॥
नृपतिप्रभाव अलौकिक देखी। मन्त्रिन उर सन्देह विशेखी ॥
कहहिं परस्पर बैठि समाजा। देहत्याग कीन्हीं निजराजा ॥
पुनि जी उठे प्रजा के भागा। ग्रहणकियोपुनिजोतनुत्यागा ॥
है परन्तु यह सो नृप नाहीं। ये गुण कबहिंरहे तिनमाहीं ॥
नृपति ययाति सरिस ये दानी। सुरगुरु सम बोलत हैं बानी ॥
विजयी अर्जुन सम रणमाहीं। जानत सर्व शर्वकी × नाहीं ॥

दो० धीरज पौरुष शूरता दानादिक बहु भांति।
क्षणप्रति बाढ़हिं नितनईनरपतिगुणगणपांति॥
सकलअलौकिकगुणइनमाहीं। जो औरन महँ देखे नाहीं ॥
सब गुणमन्दिरपरमसुजाना। जिमिअनादि श्रीपतिभगवाना॥
विना फूल फल होहिं सुहाये। गोमहिषिनमहँ पयमनभाये ॥
अभिमत वृष्टि मही हर्षानी। सस्यादिकगुणयुत सरसानी ॥
निजनिज धर्म प्रजारति मानी। सुखीसकलदुखगंध न जानी॥

*उत्तम गज × शिव ॥

सर्व दोष आकर कलिकाला। तद्यपि यह प्रभाव महिपाला॥
त्रेता सों सब भांति सुहावा। धर्म कर्म महिमण्डल छावा॥
तेहि कारण हे सचिव समाजा। नृप शरीर कोउ योगीराजा॥
अणिमादिककरतलमतिधीरा। आयो है यहि राजशरीरा॥
दो० जेहिविधि अपनी देहमहँ लौटि न यहु पुनि जाय।
करनो चहिये हम सबन ऐसो रुचिर उपाय॥
कीन्ह परस्पर बहुरि विचारा। सबहिन यह उपाय निर्द्धारा॥
बहु सेवक सब दिशन पठाये। ते सब यहि प्रकार समुझाये॥
विगत प्राण पावहु जो देहा। दाह करो तुम बिन संदेहा॥
गुप्त मन्त्र यह ऐसो ठानो। मन्त्रिन तजि काहू नहिं जानो॥
राज भारसचिवन शिर राखी। भये नरेश विषयअभिलाखी॥
मृगनयनिन सह भोगहिं भोगा। जिनहिं सिहाहिंऔरनृपलोगा॥
धवलधामनिर्मलअतिसुन्दर। फटिकरचितसबभांतिमनोहर॥
विधुकर शीतल सुभगसुहावा। उपबर्हण जहँ रुचिर बिछावा॥
तहँ बैठें रानिन सँग राजा। होय बहुतविधि द्यूतसमाजा॥
पांसा केलि मुदितमन धरहीं। तथा परस्पर जयपण करहीं॥
अधर दशनअरुभुजउद्वाहन। रतिविपरीतकमलगहिताड़न॥
छं० मधुमद्यहिमकरकिरणशीतल परमस्वादुसुहावनी।
अधरजसुधा सम्बन्धवदन सुगन्धयुत मनभावनी॥
अतिप्रीतिप्रियकरसों समर्पित जानि पुनिपुनि पावहीं।
सोइहेमभाजनगतमनोहर प्राणप्रियनपिआवहीं॥
दो० प्रिया वदन उडुराज सम जो सुन्दर सब भांति।
प्रकट भई जहँ रस विवश स्वेद कणन की पांति॥
स्मरवेगहिप्रकटत नहिं आखर। यहिप्रकार जहँ भाषणसुन्दर॥
पंकज सौरभ जासु सुहाई। पुलकित शीतकार सुखदाई॥
कछुकछुमुकुलितनयनसुहावन। प्रतिक्षणमन्मथ वेगबढ़ावन॥
ऐसो प्रिय मुख स्वादु रसाला। पान पाय नरपाल निहाला॥

कुच पीड़त अधरामृत स्वादा। वर्द्धमान रति कूजित नादा ॥
कांचो भूषण मुखर सुहाये। विवृतजघनअतिशयमनभाये ॥
अंग स्थापन रीति सुहाई। अति उत्साह मनोहरताई ॥
मनहुँ अंग नर्तन जहँ* होई। प्रकटभयो ऐसो सुख कोई ॥
गिरागम्य नहिं वरणि सिराई। उपजो सो अनन्द सरसाई ॥
मधुर चेष्टा कर भा ज्ञाना। मनसिज कलातत्त्व सबजाना॥

दो० सब विषयन व्यापार महँ इन्द्रिय सकल प्रवीन।
उत्तम प्रमदा भली विधि नृपवर सेवन कीन ॥
कुच गुरु केरि उपासना करि प्रसन्न नरपाल।
रतिसुख में परब्रह्मसुख लह्यो जो परमरसाल ॥

भोगिनि साथ नृपति हर्षाने। यहिविधिभोगहिंभोगसयाने ॥
कामागम जे लोग प्रवीणा। तिनके साथ विचारि धुरीणा ॥
वात्स्यायन के सूत्र उदारा। सहितभाष्यनृपकीन्हविचारा॥
नूतन एक†प्रबन्ध बनायो। रसप्रधान सबभांति सुहायो ॥
यहिविधिशिवनरपतितनधारा। तरुणिनसँगनितकरहिंविहारा॥
सेवक पालहिं नाथ शरीरा। बीती अवधि न गै मतिधीरा॥
कहहिं परस्पर वचन अधीरा। कृपाकीन्हिनहिं गुरुगम्भीरा ॥

दो० एकमास की अवधि प्रभु करिगे जाती बार।
पंच षष्ठ दिन अधिकभे करि अबहूं न सँभार ॥

निजतन आपुगमननहिंकीन्हा। दर्शनसुखहमको नहिंदीन्हा॥
कहाकरहिंकेहिदिशिपुनिजाहीं। खोजहिंजाय कौन पुर माहीं ॥
खबरिभला हम केहिविधि पैहैं। जाने विना कहाँ हम जैहैं ॥
और शरीर गुप्त मुनिराई। हमहिंदेहिंकेहिभांतिदिखाई॥
श्रीगुरुकरुणानिधि जो त्यागा। उदयभयोहै परम अभागा ॥
सबकलुत्यागिशरणहमलीन्ही। विपतिविनाशिनिपदरजचीन्ही
हमकहँ और कोइ गति नाहीं। देह विना जैसे परिछाहीं ॥
श्रीगुरुचरणविरजहमध्यावहिं। क्षणक्षणनितनवआनँदपावहिं॥

* रीत † अमरुशतक ॥

लागि रही गुरु चरणन आशा। तेहिसोंहमरो सबदुखनाशा ॥
मनहुं मनोरथ तरु फल फूला। अथवा योगसिद्धि अनुकूला ॥
वैदिक शोभा केर विकाशा। तत्त्व ज्ञान धरि देह प्रकाशा ॥
निजस्वरूप धनधनिकसमाना। शान्तिविलासिनिसोहर्षाना ॥
जिनहिं छांड़ि कोउदूसर नाहीं। करिहसो कबकरुणाहमपाहीं॥

दो० अविनय मन्दन की हरैं सज्जन को परिताप।
सो प्रभु हमरी गति अहै मेटहिंगे सन्ताप ॥

महामोह तम जिन सों नाशा। तत्त्वज्ञानकरकरहिं प्रकाशा ॥
जिनहिं पाययतिवर गतिमाया। भेविधूत सब दोष निकाया ॥
गुरु अमृत प्रद जब हम पावैं। शोकसिंधु बिनुयतनसुखावैं ॥
निशितमसरिसवातमतदम्भा। कियोतरणिसमनाथअरम्भा॥
गलित द्वैत अद्वैत प्रकाशा। मम अज्ञानरूप तम नाशा ॥
पुण्यापुण्य दृष्टि भ्रम खोई। शंकर रवि क्यों प्रकट न होई॥
जीवत दीन्हों जिन निर्वाना। जासु वचन भवपापनशाना ॥
जो तुम दरश हमैं नहिं दीन्हा। तौ दुखनाश हमार न कीन्हा॥
निज वियोग अब घात हमारा। गुरुवरकेहिअपराधविचारा ॥
खेदसहित निज मित्रन देखी। जानहिंनाथप्रभाव विशेखी ॥
पद्मपाद तब वचन सुनावा। मित्रन को सबशोच नशावा॥
जनि यहि भांति वृथा कदराहू। निजमनसबआनहुउत्साहू ॥
दिवि भुविअरु पतालमहँ जाई। ढूंढ़हिंगेकरि विविध उपाई ॥
विश्व गुप्त हर को जेहि रीती। खोजहिंतासुभक्तअतिप्रीती ॥
ऐसी कौनि वस्तु जग माहीं। खोजकियेजेहि पावहिंनाहीं ॥
है परन्तु यह नेम उजागर। कीजै तत्पर यत्न निरन्तर ॥

सो० विघ्नभये बहुभांति तजो न मथिबो सिंधु को।
सावधान सुर पांति अति दुर्ल्लभ पाई सुधा ॥

आन देह गुरु प्रविशे जाई। यद्यपि है ढूंढ़ब कठिनाई ॥
तदपि तासुगुण सहजप्रकाशा। उनको नाहिं दुरनकीआशा ॥

राहु ग्रसित विधुतेज विराजा । छिपै न कबहुं तथा यतिराजा ॥
सुमनचाप आगम जाननहित ।यतीनाथयहिछिनदीन्होंचित॥
सुमुखि सुलोचनि वाम नवीना । कामागम के उचितप्रवीना ॥
नृप वनिता सम और न कोई । अवशि शरीर लेहिंगे सोई ॥
और चिह्न वरणों तुम पाहीं । ह्वैहैं शंकर जेहि महिमाहीं ॥
ह्वैहैं परम सुखी सबलोगा । सबकोसुलभसदासबभोगा ॥
रोग शोक पीड़ा कछु नाहीं । मांगी वृष्टि सदा महिमाहीं ॥
सस्य सकल सम्पन्न सुराजा । जहां होहिंगे श्रीगुरुराजा ॥
ढूंढ़ोकरि उपाय अतिशयतर । संसृति जलधिसेतुश्रीशंकर ॥
आलस त्यागितुरत चलिजावैं । इहांवृथा दिन नाहिं गँवावैं ॥
जलरुह पाद वचन सुनि सर्वे । ग्रहण कियो निजमनगतगर्वे ॥
दो० गुरु तनु रक्षा हेतु पुनि राखि कछुक मतिधीर ।
शंकर कहँ ढूंढ़न चले सब मिलते यतिवीर ॥
पर्व्वत सों पर्व्वत पर जाहीं । एक देश ते दुसरे माहीं ॥
दिवि निन्दक अमरक वरदेशा । पुनिकीन्हों तहँआयप्रवेशा ॥
मरिकै बहुरि जियो नरनाथा । पृथुदिलीपसमप्रजासनाथा॥
यह सुनि तिनसबविरहगवांवा । गुरुमिलिहैंयहनिश्चयआवा॥
जाना गान विलोल नृपालम् । तरुणी सङ्ग धरणीपालम् ॥
प्रविशे स्वीकृत गायक वेषा । ते जानहिंगुणसकलविशेषा ॥
राजहि सब निजगुण दर्शावा । जासुहेतु यह स्वांगु बनावा ॥
रमणीमण्डलगत अवनीन्द्रम् । देखो तारावृतमिव चन्द्रम् ॥
नृप पीछे सोहैं तरुणी गण । चँवरकरहिंबाजहिंकरकंकण ॥
आगे गीत निपुण जन गाना । श्रवणसुखदसबतालबँधाना॥
हेमदण्ड वर छत्र मनोहर । रत्न किरीट अनूपम शिरपर ॥
रतिपतिधरि मूरतिजनुराजहिं ।भवनसहितजनुइन्द्रविराजहिं॥
छं० अतिरुचिर वेषबनावजिनको नृपसभामहँ जब गये।
सन्मान नरपति नयन संज्ञा पाय सब बैठत भये ॥

पुनि जानि नृपरुख मूर्छनास्वरसहित ते गावनलगे।
सब सभासद भे चित्र से तेहि राग के रँग में पगे॥
दो० भ्रमर तुम्हारो तनु रुचिर उच्च विटप अनुरूप।
गिरिवर शृङ्ग सुहावने लसत उदार अनूप॥
और भृंग जे राउर संगा। तव संगति हितभा सँगभंगा॥
पंचबाण संकेत अनूपा। संचयलगिबिसराय स्वरूपा॥
इह बिच रचि न स्मरसि स्वरूपं। वंचितोसि संस्मर निजरूपं॥
पंचानन निज रूप बिसारा। भयो पंच मिल पंचाकारा॥
शरद शर्वरीनाथ समाना। वदनगिरागुणज्ञाननिधाना॥
त्यागो प्रथमहिं दुखप्रद संगा। सो तुम पावन सदा असंगा॥
निजस्वरूप क्यों नाहिं सँभारो। सेवक गिरा न क्यों उरधारो॥
स्मरारि संस्मर निज रूपा। यथा दिखावहिं विमलस्वरूपा॥
नेति नेति जय निपुण सुजाना। कारजकारण धरहिं न ध्याना॥
जो निषेध की अवधि अनन्ता। आत्मरूप जानहिं जेहिसन्ता॥
मन बुद्ध्यादिक विषय न जोई। हौ तुम परम तत्त्व प्रभु सोई॥
दो० व्योमादिकरचिविश्वपुनि कियोप्रवेश तेहि माहिं।
अन्नमयादिक कोश तुष जाल सरिस दर्शाहिं॥
शालीगत तुष जिमि करिदूरी। तंदुल लहहिं तथा जग सूरी॥
युक्तिसहित वर बुद्धि विचारी। गहहिसारकरिसब तुष न्यारी॥
हौ तुम सोई तत्त्व अनूपा। लखहुनाथनिजपरमस्वरूपा॥
इन्द्रिय विषम तुरग जनु भारी। निशिदिन विषयदेश संचारी॥
दोषदृष्टि चाबुक वश कीन्हे। मनलगाम गहि जान न दीन्हे॥
बांधहिं मुनि जहँ वाजिकराला। सो तुम परम तत्त्व महिपाला॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति समाधी। मूर्छादिक ये कही उपाधी॥
सबसों मिलो सबन सों न्यारा। माला तन्तु सरिस निर्द्धारा॥
तेहिकर बुधजन करहिं विचारा। सो तुम परमतत्त्व जगसारा॥
तीनिकाल जो भा जग माहीं। सो सब पुरुषभिन्न कछु नाहीं॥

यहि प्रकार जग कारजरूपा। गावहिं जेहि को वेद अनूपा॥
जेहिविधिमुकुटकटकजगमाहीं। कनकभिन्न कबहूं ते नाहीं॥
श्रुति यह महिमा जासु बखानी। सोतुम परमतत्त्व नृप ज्ञानी॥
दो० जो मैं हौं नर देह में सो रवि में दर्शाय।
जो रविमण्डल मध्य है सो मैं हौं सुखदाय॥
यहि प्रकार व्यतिहार सों करहिं जासु उपदेश।
जाननिहारे वेद के सो तुम तत्त्व नरेश॥
वेद पाठ मख दान स्वकर्मा। श्रद्धासहित उपासन धर्मा॥
जासु ज्ञान हित विप्र सुजाना। अतिनिर्मल उरलावहिंध्याना॥
परब्रह्म जेहि वेद बखाना। सो तुम परम तत्त्व नहिं आना॥
शमदमउपरमसाधनजाला *। धीरपुरुषकरिअधिककसाला॥
आतमरूप बुद्धि महँ देखहिं। सतचितआनँदआपुहिलेखहिं॥
जासुविचार न पुनि दुखलेशा। सो तुम पावन तत्त्व नरेशा॥
निजस्वरूप महिमा तिन गाई। सुनि हर्षित नृप दीन्हि बिदाई॥
तिनहिं विसर्जन करि नृपनाहा। निजशरीरप्रति कीन्हउछाहा॥
सभा माहिं मूर्च्छा सी आई। गये शंभु नृप देह विहाई॥
त्यागप्रवेश जौनिविधि गावा। तौनहिं क्रम सबभयोसुहावा॥
नृप मन्त्रिन जे लोग पठाये। उनमें कछुक गुहापहँ आये॥
विना प्राण वपु देखि जरायो। ताही समय शम्भु तहँ आयो॥
निजतन जरत देखि त्रिपुरारी। प्रविशे तुरत योगधुरधारी॥
अग्नि शांति हिततर हरिकेरी। अस्तुति कीन्ही शंभु घनेरी॥
छं० श्रीक्षीरसिन्धु निकेत योगीनाथ मूरति पावनी।
श्रीनागराजसहस्र शिरमणि छत्रज्योति सुहावनी॥
हे चक्रपाणि अनन्त भवनिधिपोत करुणाकीजिये।
लक्ष्मी नृसिंह सरोजकर अवलम्ब हमको दीजिये॥
दो० ऐसो द्वादश पद्यसों निर्मल विनय सुनाय।
ललित पदन नरसिंह को दीन्हों मोद बढ़ाय॥

* समूह॥

श्रीनृसिंहकी कृपासों पावक बुझी निहारि।
सावधान गिरि गुहाते बाहरगे त्रिपुरारि॥

राहुवदनसोंजिमिनिशिनायक। निकसै तिमिप्रकटे सुखदायक॥
विरह निमित्त प्रेम अति बाढ़े। गुरुवर देखि भये सबठाढ़े॥
यथा सनन्दनप्रमुख * सयाने। सनकहि घेरि लेहिं हर्षाने॥
तथा शिष्य चहुँ दिशि हर्षाई। घेरि लियो चरणन लपटाई॥
पुनि आकाश पन्थ शुभलीन्हा। मण्डनगेहगमन प्रभु कीन्हा॥
दूरि भयो जिनको अभिमाना। तथा भोग तृष्णा बलवाना॥
अस मण्डन प्रभु आवत देखा। उपजो हर्ष सनेह विशेखा॥
बाढ़ो मन अतिशय अनुरागा। देखहिंइकटकपलक न लागा॥
करि पूजन अरु विनय प्रणामा। प्रेमसहित बोला गुणधामा॥
गृह शरीर सब तव सुरसांई। असकहि पराचरण लपटाई॥
प्रीति सहित प्रभु ताहि उठाई। सभा माहिं बैठे पुनि जाई॥

दो० पति पूजित बैठे सभा देख्यो भारति आय।
परमविशारद शारदा यह बोली शिरनाय॥

सब विद्या के तुम ईशाना। सब जीवन के ईश प्रधाना॥
ब्रह्मणोधिपति वेद बखाना। सो तुम श्री शंकर भगवाना॥
सभामाहिंममविजय न कीन्हा। कामकलाअनुभवचितदीन्हा॥
सो यह नरतनुचरित विडम्बन। करुणाकर भवदोषविभञ्जन॥
दंपति कहँ जीत्यो वृषकेतू। हम को भयो न लज्जा हेतू॥
दिनकरते अभिभव जो पावै। नहिं हिमकरको अयश कहावै॥
अब जैहौं तिन भवन गुसांई। आज्ञा दीजै मोहिं हर्षाई॥
अस कहि अन्तर्भूत भवानी। योगशक्ति तेहि देखो ज्ञानी॥
शंकर कह्यो देवि मैं जानौं। देव देव गृहिणी पहिचानौं॥
आदिदेवि भारति जग जानी। रुद्र सहोदरि मातु भवानी॥
हौ चैतन्यरूप सुखराशी। जग रक्षाहित देवि प्रकाशी॥
ग्रहणकीन्ह लक्ष्म्यादिक रूपा। विनय सुनहु श्रीशक्ति अनूपा॥

। * आदि॥

रचैं जहां जहँ धाम तुम्हारा। बसौ यही अभिलाष हमारा॥
दो० ऋष्यश्रृंग शैलादिमहँ पुजवहु सब मनकाम।
शारद ऐसो नाम तव होहि तहां सुखधाम॥
चतुरानन मन्दिर अभिलाषी। शारद गई तथा * इतिभाषी॥
उभय भारती अन्तर्द्धाना। देखि सभासद विस्मयमाना॥
निजपति यतिशेखरवशजानी। तासु न्यास भावी उर आनी॥
निजवैधव्य विचारि सयानी। गुप्त भई भावी दुख जानी॥
विश्वरूप यहु आशय जाना। शंकरसहित परमसुखमाना॥
पुनि मण्डन करि विरचा यागा। धनको सब करिदीन विभागा॥
हृदय राखि पावकद्विज ज्ञानी। शंकर शरणगही मन बानी॥
यहिप्रकार विधिवतसंन्यासा। शिवकरवायो सहित हुलासा॥
पुनि प्रभु तत्त्वमसी श्रुति बानी। कही श्रवणमहँ आनँदमानी॥
जो उपदेश असंसृति हेतू। कियोद्विजहिश्रुतिधर वृषकेतू॥
सुनि मण्डन उपदेश सुहायो। न्यासपाय भिक्षा करि आयो॥
सावधान लखि श्री गुरुराया। अर्थसहितसोऽहमन्त्र सुनाया॥
दो० सुनु मण्डन तू देह नहिं घट समान जड़ रूप।
रूपादिक जात्यादिगुण सहित सदा दुखकूप॥
मेरी देह कहै सब कोई। यहि ते जीव देह नहिं होई॥
मैंहौं देह ज्ञान यहु जोई। सो अध्यासजनित भ्रम होई॥
घटसों दण्ड भिन्न है जैसे। दृश्यवर्ग ते द्रष्टा तैसे॥
यहिविधि निश्चयकरुमनमाहीं। यह तन कैसेहु आतमनाहीं॥
इन्द्रिय पुनि आतम नहिं कोई। भोग वर्ग साधन हैं सोई॥
गो गण विषय करण हैं कैसे। छेदन साधन परसा जैसे॥
मेरे नयन हमारे काना। तिनको भिन्न होत है ज्ञाना॥
स्वप्नादिक महँ लय ह्वै जाहीं। तेहिते पुरुष † रूपगो नाहीं॥
गो समुदाय आतमा मानहु। भिन्न भिन्नकै पुरुष बखानहु॥
प्रथम पक्ष की करहु न आशा। एकनाश महँ सबकर नाशा॥

* तथास्तु † आत्मा॥

दो॰ प्रतिइन्द्रिय जो मानिहै आतम भाव उदार।
बहु नायक भे देह के भयो नाश निर्द्धार॥

नयनादिक जो आतम होई। तासु नाश सुमिरै किमि कोई॥
जो हम सुना सोई पुनि देखा। ऐसो बने न कबहूं लेखा॥
तेहिते करु निश्चय उर माहीं। इन्द्रिय आतम कबहूं नाहीं॥
आतम मनहूं को नहिं जानौ। प्रकट युक्ति अपने उर आनौ॥
कबहूं वचन कहै कछु कोई। श्रोता कर यहु उत्तर होई॥
गयो मोर मन और ठिकाने। राउर वचन न मैं उर आने॥
लय ह्वै जाय सुषुप्ति महँ सोई। तेहि कारण मन पुरुष न होई॥
ऐसोइ न्याय बुद्धि को जानहु। ताहू को नहिं पुरुष बखानहु॥
अहंकृती आतम नहिं होई। डुकृञकरणे* को पद सोई॥
अहमिति करी जाय जेहि द्वारा। तेहि सो ताहि कहैं अहँकारा॥
करण सदा कर्त्ता नहिं होई। बसुलहितक्षा‡ गिनहि न कोई॥
यद्यपि है सुषुप्ति महँ प्राना। तद्यपि सो नहिं पुरुषबखाना॥
सब कोउ कहहिं हमारे प्राना। जीवते भिन्न प्रान को ज्ञाना॥
सकल विलक्षण त्वम्पद जानहु। जगनिदानतत्पदउर आनहु॥
दोनहुँ की एकता बतावै। अस पद दुहुंको भेद मिटावै॥

दो॰ शिष्य कह्यो सुनु नाथ मोहिं संशय भयो अपार।
श्रुति दोनों की एकता वरणैं कौन प्रकार॥

अहै ब्रह्म सर्व्वज्ञ सुजाना। जीव मूढ़ है सबजग जाना॥
एक रूप तम और प्रकाशा। भये न ह्वैबे की है आशा॥
सांच कहौ तुम यदपि विरोधा। भानहोयनहिं श्रुतिअनुरोधा॥
यहि उपाधिगत भास विरोधा। जबलौं युगपदतुमनहिंशोधा॥
जो उपाधि तेहि कल्पित जानौ। चेतअचेतन एकहि मानौ॥
देवदत्त पुष्कर को राजा। काशी आयभयो यतिराजा॥
देशकाल अरु सब व्यवहारा। त्यागिदेहगत करहिं विचारा॥
सोई यह नृप हम पहिंचाना। तासु मित्रइमि करहिं बखाना॥

* धातु ‡ बढ़ई॥

लक्ष्यअर्थ को जब तुम शोधा । रहिहै पुनि कछु नाहिं विरोधा ॥
देहादिक अहमिति करिजाना । सोयहत्यागहुचिरअभिमाना ॥
कर्म शठन सों यह अभिमाना । यद्यपि दुस्त्यज परमबखाना ॥

दो० अब विवेकमय बुद्धिसों परमातम को ध्यान ।
भेद त्यागि कीजै सदा जो है मुक्ति निदान ॥

जहँ ममताको अवसरनाहीं । कबहिंउचितअहमितितेहिमाहीं ॥
पुत्रादिक अपनौकरि मानहिं । काकशृगालअग्निनिजजानहिं ॥
सब दुख को यह तन भण्डारा । त्यागहु तहँ ममता विस्तारा ॥
विषय प्रीति सबदूरि बहाई । निश्चयकरि जानहु दुखदाई ॥
मन करि शंका दूरि बहावौ । सो पुनि ईश्वरमाहिं लगावौ ॥
जैसे महामत्स्य दुहुँ कूला । सरिमहँनितविचरहिंगतशूला ॥
उभय कूल सों भिन्न दिखाहीं । दुहुँ तीरन सों लेपन ताहीं ॥

दो० जाग्रदादि महँ पुरुष इमि विचरै सदा असङ्ग ।
भिन्न सकल के धर्म सों लहै न कबहूं सङ्ग ॥

सो० जुपै जीव महँ नाहिं नाथ अवस्था तीनहूं ।
तौ पुनि कहां दिखाहिं मोसन कहिये करि कृपा ॥

जाग्रदादि ये तीन अवस्था । ऐसी इनकी जानु व्यवस्था ॥
जाग्रत में नहिं स्वप्न दिखाई । स्वप्ने जाग्रत को भ्रम जाई ॥
ऐसेहि सुषुप्ति अवस्था माहीं । जाग्रत स्वप्न केर भ्रम नाहीं ॥
लहैं परस्पर ये व्यभिचारा । मिथ्याकल्पितलखिव्यवहारा ॥
चितप्रतिबिम्बित बुद्धि पसारा । तहँ दर्शै सबभ्रम परिवारा ॥
यथा एक रजु महँ भ्रम पाई । निशि वश बहुस्वरूपदर्शाई ॥
सर्प दण्ड भूछिद्र विशाला । कोउकहै सूत्रधार कोउमाला ॥
शिव तुरीय जेहि वेद बखानहिं । जाहि भेदवादी नहिं जानहिं ॥
सबभयरहितअगुणअविनाशी । सो तुम ब्रह्म परम सुखराशी ॥
हित उपदेश तात सुनि लीजे । पाहिले कैसो भ्रम नहिं कीजे ॥
असआतमसबक्यों नहिंजाना । यह संशय जनिकरहुसुजाना ॥

⊛ देह में † अवस्था ॥

मूढ़न को सोहै अति दूरी। यदपि रहो सबमें भरिपूरी॥
बाहिर ढूंढ़े मिलिहि न जोई। असिअद्भुतमहिमाश्रुतिगोई॥
सो० ज्ञाननिदान विराग सो नहिं होय विचार बिन।
तेहि बिन मोहन भाग यद्यपि करै उपाय बहु॥
दो० यथा प्रपापर पथिक बहु काल पाय जुर जाहिं।
पुनि निज निज मारग गहैं सदा बसैं तहँ नाहिं॥
यथा कुटुम्बी बहु मिलि जाहीं। काल पाय पुनि ते बिलगाहीं॥
सुखके हेतु करहिं बहु काजा। सुख न होय बहुदुःख समाजा॥
विना सुकृत सुख लहै न कोई। पूर्व पुण्य बिन बनहि न सोई॥
जेहिकी मति परिपक्क सयानी। एक बार मुनि सो श्रुतिबानी॥
आतम बुद्धि लहै सुठि नीकी। जिनकी बुद्धि बोधरसफीकी॥
ते बहुकाल करहिं सतसंगा। श्रीगुरुपद महँ प्रीति अभंगा॥
प्रणव उपासन संयम ध्याना। इन्द्रियदमनत्रितय*अस्नाना॥
मन क्रम गुरु पद की सेवकाई। हरै सदा मन की कुटिलाई॥
काल पाय उपजै उर ज्ञाना। क्रमसों पुनि सो होय सुजाना॥
तेहिते करै सदा गुरु सेवा। गुरु समान नहिं दूसर देवा॥
गुरुमहँ शिवमहँ नहिं कछुभेदा। जो गुरु सोइ शिव वरणतवेदा॥
निशि दिन जब सेवै मनलाई। तब गुरु देखत हैं हरषाई॥
गुरु आज्ञा पालै मन लाई। कल्पबेलि सम सो सुखदाई॥
देव कोप गुरु पालक होई। गुरु के कोप राख नहिं कोई॥
यहि विधि सेवा में मन लावै। जेहि प्रकार गुरु कोप न आवै॥
चारिहु फल पावै बड़भागी। विहितकरै प्रतिषेधहि त्यागी॥
विधि निषेध जानहि गुरुपाहीं। जासु प्रभाव रहै सुखमाहीं॥
दो० इष्टलाभ दुखहानि पुनि सब संशय भ्रम जाय।
श्रीगुरुपदकी भक्ति असि को जग जेहि न सुहाय॥
देवाराधन किये सो इष्ट लाभ जग होय।
गुरु कृपा बिन भली विधि जानि परै नहिं सोय॥

---

* तीनबेर॥

गुरु के तुष्ट भये सब देवा। तुष्ट होहिं मानैं निज सेवा॥
गुरु के क्रोध भये रूठैं सुर। यह निश्चय आनहु अपनेउर॥
आपुहि ब्रह्मरूप गुरु देखा। तेहि कारण सब देव विशेखा॥
गुरु में बसैं भिन्न तेहिं नाहीं। श्रीगुरु विश्वरूप जग माहीं॥
यहिविधि सुनि उपदेशउदारा। गुरुपद वंदों बारहिं बारा॥
अब मैं धन्य भयों जग माहीं। मोहिं समान कोउ दूसर नाहीं॥
नाथ कृपाचितवनि उजियारा। मम अज्ञान महातम टारा॥
तब सुरेश संज्ञा प्रभु दीन्हीं। जेहिंसबदिशिमहँकीरतिकीन्हीं॥

दो० सब शिष्यन महँ मुख्य तब भये सुरेश सुजान।
विधि पदवी को तुच्छसुख गिनो न तासु समान॥

छं० निखिलश्रुतिमस्तकविचारत अहर्निशसुखपावहीं।
निःशंकब्रह्मअखण्डपदलहिविधिभवनाबिसरावहीं॥
अतिवर्द्धमान विराग पूरण हृदय निर्भय पद गहे।
यहि भांति बहु तिथि श्रीसुरेश्वर नर्मदातटमहँरहे॥

सो० प्रणतयोगप्रदराज यहि विधि मण्डन वश कियो।
गुण मण्डल न विराज खण्डी दुर्मतमण्डली॥

पुनि दक्षिणादिशि कीन्ह पयाना। जहँ कुसुमितसोहैंतरु नाना॥
कोमल किसलय रुचिर सुहाये। भ्रमतभ्रमरमण्डलछविछाये॥
करहिं मधुरस्वर मधुकरगाना। देखत चले जाहिं भगवाना॥
महाराष्ट्र पावन जे देशा। कियो तहां यतिराज प्रवेशा॥
तहँतहँ ग्रन्थप्रकट निज कीन्हे। अधिकारिनकहँसिखवनदीन्हे॥
ज्ञान गुणद सनकादि समाना। तदपिनकछु विद्या अभिमाना॥
पहुँचे पुनि श्रीशैल कृपाला। फूलीं जहँ मल्लिका विशाला॥
त्रिविधपवन कम्पित तरुनाना। अतिसुगन्धनहिंजायबखाना॥
तहँ बहुसिंह करहिं ध्वनि भारी। विचरहिं मत्तगयन्द प्रहारी॥
भुजगविभूषण भवनसुहावा। निजकौशलविधिमनहुँदिखावा॥
गिरि समीप बहु अधिक तरंगा। मानहुँ चूँबहिं ते गिरि तुंगा॥

करै सकल कलिमलकर भंगा। मज्जन करि पतालकी गंगा॥
पुनि शङ्कर चढ़िगे गिरितुंगा। करत नमितजनकीभयभंगा॥
व्योमछुअतमानहुं गिरिशृंगा। छूटत जहां पाप कर संगा॥
करतमधुरध्वनिद्विजवर *भृङ्गा। आक्षालित शुभ गंगतरङ्गा॥
कियो काम जिन शंभुअनङ्गा। देख्यो परम सुहावन लिङ्गा॥
छं० भुव भीति भंजन प्रणतजनको सम्पदार्जन जे करैं।
श्रीमल्लिकार्जुन भक्तजनको अमृतसुखसों नितभरैं॥
जो सहसबाहु प्रसिद्धअर्जुन पूजि जिनको यशलह्यो।
तिनकी विनयप्रणिपातगुरुकरिभयो मुदपूरणहियो॥
दो० तरु वरणौं कृष्णा नदी तीर कियो गुरु वास।
तृष्णा नाशक अति सुभग उष्ण जहां न प्रकास॥
अतिपावन कीरति गुणधामा। गुरुवरपूजितपद अभिरामा॥
अतिपवित्र पद अर्थ उदारा। खण्डितदुर्मतसकल पसारा॥
अस शारीरक प्रमुख प्रबन्धा। परिपूरण निर्वाण सुगन्धा॥
सद्गुण ग्राहक सुजनसमाजा। तिनहिंपढ़ावहिंश्रीयतिराजा॥
वेद बहिर्मत खण्डन करहीं। श्रुतिअनुकूलयुक्तिअनुसरहीं॥
वीर शैव पशुपति मत धारी। माहेश्वर पुनि जे आचारी †॥
आये तहँ विवाद मन दीन्हा। तिनहिंसुरेशादिकजयकीन्हा॥
तिनमहँकितनेहुँनिजमतत्यागी। गुरुवर शिष्य भये बड़भागी॥
भये विगत मत्सर मद दोषा। दोष भवन के ते हत रोषा॥
नीच हृदय इमि काल बितावहिं। श्रीगुरुवरकी मौत मनावहिं॥
शूद्र गिरा श्रुति सार समाना। आपु वेद कल्पे विधिनाना॥
श्रुतिवर्णित निजआतम दाहा। श्रुतिपथदाहत परम उछाहा॥
अस पापी जे खल समुदाया। तिन शंकर सों वैर बढ़ाया॥
दो० पौंड्रक जेहिविधि द्वेषकरि माधव साथ अयान।
जौनि दशा पावत भयो यहू चहत हैं जान॥
छं० शिवसूक्ति महँ निष्णात जे तिनपर गिराहांसी करीं

* पक्षी † चक्रांकित॥

काणादवाणी गनी नहिं पुनि कपिलकी जहँ तहँ दुरीं ॥
भाश्रशिवतम जो पाशुपत मत गर्हपद * अर्हत † भयो ।
अरु लही दुर्मति दौर्गवैष्णवपालको अस जग रह्यो ॥

दो० दया छांड़ि विदलित किये दुर्मत शम्भु सुजान ।
सुगत कथा जगलीन भै तैसेहि न्याय बिलान ॥

सो० प्रश्नहू बहु पाय मीमांसक बोलैं नहीं ।
कापिलगयोबिलाय अतिविदग्ध चापल यदपि ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिब्राजकाचार्य्यश्री ७ स्वामिरामकृष्ण भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचिते श्रीशङ्करदिग्विजयेनृपकायप्रवेशवर्णनपरोदशमस्सर्गः ॥ १० ॥

श्लो० ॥ दयानिधिं ज्ञानघनं प्रशान्तं दुराशयानामपि कामदन्तम् ।
भवापहृत्कीर्त्तिभिरुल्लसन्तं नमामि मोहं प्रविनाशयन्तम् ॥ १ ॥

माया मान रहित श्री शंकर । बसैंतहांजनु उदितदिवाकर ॥
कोइ कापाली प्रभुपहँ आयो । साधुन कसो वेष बनायो ॥
यथा जानकी हरिबे कारन । यतीवेष धरिगयो दशानन ॥
ये कामादिक वश नहिं परहीं । मुनिवरजासुध्याननितकरहीं ॥
ते श्री गुरुवर भाष्य पढ़ाई । सावधान बैठे मुनिराई ॥
देखतही फूल्यो हर्षाई । महारंक मानहु निधि पाई ॥
चिरते रहो मनोरथ जैसो । पायो योगिशिरोमणि तैसो ॥
मुनिवरसत्तम कहँ शिरनाई । प्रभुसोंनिजअभिलाषजनाई ॥
मुनिवर गुणगण बहुत तुम्हारे । सुनिपाये हम जग उजियारे ॥

दो० दया शील सर्वज्ञता क्षमा और उपकार ।
सुनि उत्कण्ठा मोहिं भई देखा चरण तुम्हार ॥

निर्गत मोह एक जग माहीं । तुमसमान कोउ दूसर नाहीं ॥
द्वैत समूह पराजय कीन्हे । सज्जनकहँअतिआनँददीन्हे ॥

---

* निन्दास्पद † जैन ‡ जैन ॥

कियो दूरि तनको अभिमाना। सदा देहु सब को सन्माना ॥
अद्वय मत करि दीन्ह प्रमाना। असतुमसबगुणज्ञाननिधाना॥
पर उपकार हेतु धरि मूरति। उभयलोक भै पावनि कीरति॥
कृपादृष्टि सज्जन दुख हरहू। निजवाणीजग पावन करहू ॥
तुमगुणखानिसकलजगवन्दित।निजअनुभवअहमितिकरिखण्डित॥
जगविजयी जीते सब वादी। वेद विदूषक महाप्रमादी॥
आतम दान करो जग माहीं। तुमसन कोउउदारमहिनाहीं॥
आपु सरिस जे गुणविख्याता। जग में अहैं परावर ज्ञाता॥
तिन समीप याचक जे जाहीं। फिरत निराश कबहुंतेनाहीं॥
तेहि कारण मैं प्रभुढिग आयो। सकलकाजममभयोसुहायो॥
करि संतुष्ट मदन आराती। होहुं कृतारथ मैं जेहि भाँती॥
यह कामना रही मन माहीं। पहुँचौं केहिविधिशंकरपाहीं॥
देह सहित गिरिजापति देखौं।तबनिजजन्मसफलकरिलेखौं॥
यह विचारिदुःसहतपकीन्हा।सबकछुतजिशिवपदमनदीन्हा॥
यहि प्रकार सौ वर्ष गँवाये। करुणानिधि शंकरतबआये॥
ह्वै प्रसन्न यह गिरा सुनाई। तब ह्वैहै तेरे मन भाई॥

दो० हवनकरौ सर्वज्ञ शिर कै महीश को माथ।
असकहि अन्तर्द्धान भे तबसों मैं यतिनाथ॥

फिरौं सदा महिमण्डल माहीं। युगल मध्य पायों कोउ नाहीं॥
तुम सर्वज्ञ जगत यश गायो। बड़े भाग तव दर्शन पायो॥
अब पूजहि अभिलाष हमारा। सकल इष्टप्रद दरशतुम्हारा॥
चक्रवर्तिमस्तक मुनिनायक।कैमुनिवरशिरममसिधिदायक॥
नृपकपाल दुर्ल्लभ मुनिनाथा। है मम सिद्धि तुम्हारे हाथा॥
शिर दीन्हे तव यश संसारा। होय नाथ मम सिद्धिअपारा॥
तन क्षणभंगुर सब जगजाना। करिये जो राउर मनमाना॥
शिरयाचनपुनि करिनहिं जाई। को अस जग जो देय हर्षाई॥
तुमबिरक्त नहिं तन अभिमानी। पर उपकार धरहु तन ज्ञानी॥

अर्थीपरदुख कबहुं न जाना। निशिदिननिजस्वारथपरध्याना॥
सो० निजरिपुवध हितजाय मुनिदधीचि सों अस्थिप्रभु।
मांगि लिये सुरराय ऐसो निज कारज कठिन॥
क्षणिक शरीरत्यागि परकाजा। तुरतदधीचादिक मुनिराजा॥
यशतन स्थिरलहि जग माहीं। पायसहितबड़िकीर्ति सुहाहीं॥
अतिनिर्मल व्यापक यश पाई। उत्तम गुण जग में रहे छाई॥
देह धरैं पर कारज लागी। तुमसम दयावान बड़भागी॥
स्वारथरत अरु दयाविहीना। कोमोसमजगमाहिं मलीना॥
परउपकार छांड़ि महि माहीं। तुम्हरो निजकारज कछुनाहीं॥
सकल एषणा प्रभु तुम त्यागी। देहादिक सों परम विरागी॥
ममसम काम विवश जगमाहीं। उचितकिअनुचितदेखतनाहीं॥
भे जीमूतवाह जग पावन। अर्थिहि दीन्हों जीवसुहावन॥
मुनिदधीचि की प्रथमहि गाथा। कहिदीन्ही तुमसोंयतिनाथा॥
इन सुकृतिन ऐसो यश पायो। सहसवदननहिं जाय सुनायो॥
जबलौं तारा चन्द्र प्रकाशा। इनकोयशनहिंहोयविनाशा॥
तनु अदेय यद्यपि मुनिराया। मैंअतिनिन्दितदोषनिकाया॥
तद्यपि जे विरक्त जगमाहीं। तिनकहँकछु अदेयप्रभुनाहीं॥
महि में जे अखण्ड व्रत धारे। ऊर्ध्वरेत कै जे रखवारे॥
तत्कपाल मम सिद्धिविधायक। तुमबिनकोउनऔरमुनिनायक॥
देहु कपाल हरहु मम पीरा। बारबार बिनवौं मतिधीरा॥
सो० कीन्हो दण्डप्रणाम उठै न चरणन ढिगपरो।
तब बोले सुखधाम करुणा परिपूरण हियो॥
मैं तव वचन बुरो नहिं माना। प्रीतिसहितकरिहौंसन्माना॥
अपनो शिर देहौं न सँदेहा। जेहि कारण क्षणभंगुरदेहा॥
बहुत नाशयुत जो तन जाना। करहिं कौन अर्थीअपमाना॥
बहुत काल पालिय लौलाई। कालपायनहिं बचहिबचाई॥
जो पै आव काहु के काजा। यहितेअधिक न लाभसमाजा॥

मैं एकांत समाधि लगाये। रहिहौं तहँ आवहु सचुपाये ॥
तब अभिमत तव पूरो ह्वैहै। भये प्रकाश अवशि दुख पैहै ॥
हमरे शिष्य जो पै सुनि पैहैं। तव कारज महँ विघ्न मचैहैं ॥
देह गेह ममता सब त्यागी। ते सब मम सेवा अनुरागी ॥
दो० कौन सहै निज देहको त्याग दुखद सब काल।
नाथ शरीर वियोग दुख तेहिसों परमकराल ॥
यहिविधि भयो उभय संकेता। मुदित कपाली गयो निकेता ॥
शंकर निज स्वरूप लौलाई। काहूसों नहिं खबरि जनाई ॥
शिष्य दूरि जब गये सुजाना। कोइ शौच कोइ गये नहाना ॥
जो पै पद्मपाद कहुँ जाना। करिहै अर्थीकर अपमाना ॥
यह भययुक्त कृपाल सुजाना। रहे एकाकी कृपानिधाना ॥
तेहि अवसर कापाली आवा। यहि प्रकार का रूप बनावा ॥
कांधे शूल त्रिपुण्ड्र विशाला। कण्ठ धरे मुण्डन की माला ॥
अरुणनयन मद्योग भयङ्कर। सम्मुखदृष्टि गयो जहँ शङ्कर ॥
देखि भैरवाकार शरीरा। कापालिक शङ्कर मतिधीरा ॥
देह त्यागकर कीन्ह विचारा। आपन सहज स्वरूप सँभारा ॥
सावधान बैठे करुणाकर। तिनको दीखकपालि भयङ्कर ॥
निजस्वरूप सुखमाहिंविराजा। किये तुच्छ अमरावतिराजा ॥
सनकादिक ये ज्ञाननिधाना। तिनसों अधिक शंभुभगवाना ॥
विगत विकल्प समाधिसँभारे। बैठे हैं सिद्धासन मारे ॥
अंस+सन्धिमहँ चिबुकसुहाई। खोले मुख शङ्कर सुखदाई ॥
दो० जानू ऊपर हाथ द्वै अर्द्ध निमीलित नयन।
नासाशिरपर दृष्टि है सब अँग शोभाअयन ॥
सूधो सकल शरीर विराजा। ज्ञानमात्र शेषित यतिराजा ॥
इन्द्रियसकलअचलचितमाहीं। बिसरायो भव❀ देखहिं नाहीं ॥
यहिविधि गुरुहि देखि हर्षाई। गयो समीप सँदेह विहाई ॥
बुद्धि सहित यह पाप विचारा। कियो चहै शठ खड्गप्रहारा ॥

+ स्कन्ध ❀ संसार ॥

तैसेहि तुरत सनन्दन जाना । विष्णुरूप समरथ भगवाना ॥
खड्ग त्रिशूल गहे नियराना । श्रीगुरुवर गोवध अनुमाना ॥
यतिवर बैठे ध्यान सँभारी । पद्मपाद कहँ भै रिसि भारी ॥
गुरुहिनप्रलयानल समभयऊ । अतिशयक्रोधव्यापिउरगयऊ॥
सुमिरो श्रीनरसिंह स्वरूपा । परम तेज जग विदित अनूपा॥
जिनप्रहलाद केरि रुचि राखी । खंभसों प्रकट भये श्रुतिसाखी॥

दो० मन्त्रसिद्ध नरहरि सुमिरि सोई भयो तत्काल ।
बढ़यो रोष ऐसो विकट मानहुँ काल कराल ॥

भूलि गयो तेहि मानुषभावा ।क्षुभित भयोपुनिअपनस्वभावा॥
प्रकटो श्रीनरसिंह सुभावा । तड़प्यो तबहीं अतुलप्रभावा ॥
सटाछटा सनफाटहिं जलधर । खररवत्रसितसकलअतिशयतर॥
महावेग मूर्च्छित सब लोका⊛ । व्याकुलचकितभये सरलोका ॥
झपटे वेग सहित जब धाये । उमड़े सिन्धु क्षोभ अति पाये ॥
निशिचर शब्द भयावन करहीं । अतिशयतेजदिशासबजरहीं ॥
गिरिफूटहिं महिमण्डल डोलैं । भयसों लोग नयननहिंखोलैं॥
गहि लीन्हो तेहि शूल समेता । हेमकशिपुजिमि तेजनिकेता ॥
वज्र कठिन नख सों उरफारा । दंष्ट्रा चर्वित गात विदारा ॥
पुनि पुनि अट्टहास विस्तारी । विदलित सुरपुरधाम अटारी ॥

दो० बाहर गे जे शिष्यगण तिन जब सुनो निनाद ।
भय व्याकुल मन ह्वैगये आये सहित विषाद ॥

देखो भैरव मृतक शरीरा । हैं सुखेन बैठे गुरु धीरा ॥
विस्मित पद्मपाद पहँ आई । पूछा सबन प्रसंग चलाई ॥
ये प्रह्लाद वश्य सुर राया । वश कीन्हे तुम कौन उपाया ॥
यह सुनि पद्मपाद हँसि कहेऊ । सुनहु मित्र जो कारण भयऊ ॥
पहिले हम बल भूधर ऊपर । वनमें करत रहे तप बहुतर ॥
भक्तविवश नरहरिनितध्यायो । यहिविधिजबकछुकालबितायो॥
एकदिवस इक युवाकिराता । हमसन आय कही यह बाता ॥

⊛ लोग ॥

केहि कारण तुम बसहु निरन्तर। सहहु कलेश शैलवनगहवर॥
भक्तवश्य श्रीनर पञ्चानन। सदा रहहुँ वन उनके कारन॥
बीते बहुदिन आश लगाये। कबहूं देखन में नहिं आये॥
मम वाणी सुनि वनमहँ गयऊ। क्षणमहँ सो पुनिआवतभयऊ॥
लता बांधि नरहरि कहँ लायो। प्रभुकोयहिविधिदरशकरायो॥
मनविस्मित हम गिरा उचारी। अद्भुत महिमा नाथ तुम्हारी॥
राउर मुनिवर ध्यान लगावहिं। मनहूँ में दर्शन नहिं पावहिं॥
वनचर के वश भयहु कृपाला। अतिअचरजयहदीनदयाला॥
यहिप्रकार सुनि मम विज्ञापन। उत्तरदीन्हों मोहिं मुदितमन॥

दो० जेहिविधि इन एकाग्रचित कियो हमारो ध्यान।
ब्रह्मादिक सों बनो नहिं ये सुर प्रवर प्रधान॥

तुम जनि उपालम्भ मोहिं देहू। मम वाणी मेटहु संदेहू॥
ह्वै प्रसन्न दै मोहिं वरदाना। तुरत भये हरि अन्तर्द्धाना॥
सुनि असि पद्मपाद की बानी। मित्रमण्डली अतिहर्षानी॥
पुनि नृसिंह गर्जे सुखदाई। निज प्रताप ब्रह्माण्ड हलाई॥
पुनि पुनि नरहरि गर्जन लागे। खुलीसमाधिकृपानिधिजागे॥
अतिकरालमुख नरहरि देखा। सकल प्रकार भयावन वेखा॥
विधुकर निन्दक सदा विकाशा। मस्तक तीसर नयन प्रकाशा॥
सहसउदित रवि जौन प्रकासा। तैसी प्रभु शरीर की भासा॥
विधिब्रह्माण्ड विचालन हारी। गर्जित अट्टहास ध्वनिभारी॥
नखसों कापाली उर फारा। तासुरुधिर लपिटो तनसारा॥
कण्ठ सोई आंतनकी माला। जनु वैजन्ती माल विशाला॥
सुर अरु असुर त्रास उपजावन। ऐसो प्रभु आकार भयावन॥
सोलखिव्यथितसकलब्रह्मण्डा। कांपत सब धरती के खण्डा॥
दंष्ट्रानन विकराल भयङ्कर। निकसतज्वालाजाल धूमधर॥
सो ज्वाला नभलौं चलिताई। रोम रोम चिनगारी छाई॥
जृम्भित हरिको वदन निहारी। सकललोक तापित भयभारी॥

दन्तप्रेम ध्वनि अधिक भयङ्कर। जिह्वा दामिनि सों चञ्चलतर॥
ब्रह्मादिक सब देव मनावैं। दूरहि दूर खड़े गुणगावैं॥
बिन अवसरप्रभुजनिलयकरहू। अब यह कोप नाथ परिहरहू॥
दो० यहिविधि देखि नृसिंह को निज आगे यतिराय।
लागे सुस्तुति करन तब निर्भय प्रभुढिग जाय॥
नरहरि कोप प्रयोजन नाहीं। तब रिपु मरा परो महिमाहीं॥
मोपर कृपा करहु अब सांई। तुमहिंदेखिजगभयअधिकाई॥
शुद्ध सतोगुण तव मन माहीं। अल्पहुकोप उचित तव नाहीं॥
जग सुखदै शमता* मन धरहू। हे हरि हरगुण प्रकट न करहू॥
सुमिरहिं तुमहिं नाथ भयपाई। सुख पावैं सबरी भय जाई॥
जब तव सुमिरन भीति मिटावै। दर्शनकी महिमा किमि गावै॥
तवपद सुमिरिदेहजेहि त्यागी। निश्चय होय मुक्ति पदभागी॥
तव करकमल मृत्यु यह पाई। फिर न पाव संसृति दुखदाई॥
जन प्रह्लाद कीन्ह रखवारी। बहुत बार तिनकी भय टारी॥
दो० कह्यो सर्वगत ब्रह्मातिन सो तुम सांचो कीन्ह।
झपट खम्भते प्रकट ह्वै सब कहँ दर्शन दीन्ह॥
रजगुण सों जग सर्जन करहू। पालन हेतु सतोगुण धरहू॥
तमधरि विलय करहु जगसोई। तब हरनाम तुम्हारो होई॥
हौं अज घटै न तव अवतारा। तिमिनिर्गुण को गुणविस्तारा॥
साँचे नहिं जग रक्षा हेतू। पालन हेतु सकल श्रुतिसेतू॥
तुमकहँ मन वाणी नहिं जानै। श्रुतिगणहूसबचकितबखानै॥
राउर नरहरि ऐसो नामा। सुनतहि तुरत नाथसुखधामा॥
गुह्यकदुष्ट पिशाच प्रथमगन। औरअसुरनायकअतिखलतन॥
सम्मुख ठहरि सकैं ते नाहीं। भागहिं भय उपजैं मनमाहीं॥
दो० सर्ग स्थिति लय हेतु प्रभु ध्यान करनके योग।
अब हम राउर शरण हैं तुम छेदक भवरोग॥
भरोतुच्छ† यह क्रोध न कीजै। जगको अभय दान प्रभुदीजै॥

---

* शान्ति † कापाली॥

सुर तव रोष क्षमा अब चाहैं। तव गुणमहिमासकलसराहैं ॥
कोटि तड़ितसमसहजप्रकाशा। तव मूरति सबजगतमनाशा ॥
तव अनुकम्पा हीन मुरारी। सहि नहिंसकैंतेजअतिभारी ॥
तेहिते अब यह रूप दुरावहु। विचलितसकललोकसुखपावहु ॥
प्रलय समय श्रीरुद्र भयंकर। माथे की खोलैं चख तीसर ॥
तेहिसों उठै अग्नि की ज्वाला। जरैत्रिलोकी जिमि तृणशाला ॥
चट चट शब्द होय भयकारी। तिहि सों अट्टहास तव भारी ॥
यह ब्रह्माण्ड भवन दुखराशी। जरामरणजनि*रोगप्रकाशी ॥
सबदुखतृणघनअग्निसमाना। अस तव अट्टहास भगवानः ॥
हमरे सकल दुरित क्षयकरही। कृपाविलोकनि मुद उर भरही ॥
क्षीरसिन्धु मन्थन जब कीन्हा। मन्थनहितें मन्दरगिरिलीन्हा ॥
वासुकि मन्थन रज्जु समाना। मथै सुरासुर अति बलवाना ॥
उठें सिन्धु कल्लोल अपारा। तासु घोषकर जो विस्तारा ॥
तेहि ते तव अतिघोषभयंकर। दूसरि उपमाकहहु शिवंकर+ ॥
प्रलय काल श्रीशंभु सुजाना। डमरू नाद करैं भगवाना ॥
जेहि सुनि फूटहिं दिक्कट सारे। तासु विनिन्दक घोष तुम्हारे ॥
हमरे सब पापन को नाशहिं। मनमहँअतिआनन्दप्रकाशहिं ॥

छं० प्रलय जलधर अशनि ध्वनि अतिगर्वजोचूरणकरैं।
अतिवेग श्रीवाराह नासा शोभ घुर्घुर की हरैं ॥
यहि रीति अति गंभीर राउर अट्टहास भयावनी।
नाशहिं हमारे पाप सब करि विमलबुद्धि सुहावनी ॥

दो० ऐसी बिनती सुनि भये नरहरि अन्तर्द्धान।
निज स्वभावलहि पद्मपद गुरुपहँ गयो सुजान ॥
करि दण्डवत प्रणाम पुनि बैठो मनहर्षाय।
श्री नृसिंह वपु स्वप्नमहँ गयो मनहुँ दर्शाय ॥
सावधान ह्वै यह चरित जो नित पढ़ै त्रिकाल।

---

* जन्म + मंगल ॥

प्रीति सहित अथवा सुनै तर अपमृत्यु कराल ॥

सो० लहै परम हरि भक्ति भोगे अभिमत भोग सब ।
अन्तकालतर मुक्ति पावहि अनपायिनि सुभग ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यश्री७स्वामिरामकृष्ण भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेउग्रभैरव निर्जयवर्णनपरएकादशस्सर्गः ॥ ११ ॥

श्लो० ॥ शङ्कराय वृषेशाय निशानाथपरापते ॥
आनन्दकाननेशाय गिरीशाय नमोनमः ॥ १ ॥

दो० एकसमय तीरथ करत शिष्यसहित यतिराय ।
श्री गोकर्ण समुद्र पहँ हर्षित पहुँचे जाय ॥

सो० विधि हरि वन्दित पाय जगनाटकके सूत्रधर ।
करीविनयमनलाय अर्द्धबधूतन शिवहिनमि ॥

दक्षिण ओर बलाहक सुखमा । बामभाग दामिनि की उपमा ॥
दहिने हाथ मृगा शुभ सोहै । शुक बायें कर अतिमनमोहै ॥
मुण्डमाल दक्षिण दिशि राजै । बायें गजमणि हार विराजै ॥
नीलकण्ठ जो शिव सुखरूपा । सोइ मैं हौं निर्भेद अनूपा ॥
त्रिगुणरहित शंकर गुणगाये । तीनिदिवस गोकरण बिताये ॥
हरि शंकर तीरथ जगजाना । विष्णुलोक कैलास समाना ॥
जहँ हरि हर मूरति सुखदाई । एक रूप है द्वैत विहाई ॥
भेदवादि भ्रम वारन हेतू । एक भये द्वौ हरि वृषकेतू ॥
तहाँ जाय शंकर सुखधामा । सुस्तुति कीन्हगिराअभिरामा ॥
हरि हर उभय अर्थ दर्शायो । ऐसी रीतिसहित गुणगायो ॥

श्रीमीनावतारः ॥

सोम❀कला †सहअधिकविलासा ।‡आदर‡युतगो+राशिप्रकासा ॥
मैन ×तेज कियो अंगीकारा । सो प्रभु सदा मोर रखवारा ॥

❀ चन्द्र, वि † अंश जल ‡ श्रुति + उभयपक्षमेंसमान × मीनसम्बन्धी, पार्व्वती मेनाभवमैनं ॥

श्रीकच्छपावतारः ॥

मन्दरागं[1] धर नाथ अनादी। देव सुधाप्रद मुदाविवादी[2] ॥
गिरि[3] लीलोचित मूर्त्ति सुहाई। मोपर कृपा करौ सुखदाई ॥

श्रीवाराहावतारः ॥

सो० उल्लासित[4] महिमान वराहीश[5] वपुसुभग[6] अति।
संध्या[7] कमल समान तिनकेहित कर[8] हमकरैं ॥

श्रीनृसिंहावतारः ॥

केसरिता[9] वर धारन कीन्हा। सुररिपु[10] कुंजर[11] हनिपददीन्हा ॥
सुखै[12] प्रह्लाददियो सुखराशी। पञ्चानन[13] प्रणमहु अविनाशी ॥

श्रीवामनावतारः ॥

बल्यौ[14] हरण मनोरथ कीन्हा। योवामन[15] हरमृग[16] त्वचलीन्हा ॥
प्रियबिनतपचर्य्या[17] जेकरहीं। आदि[18] अनादिमोरदुखहरहीं ॥

श्रीपरशुरामावतारः ॥

ये[19] अधिकोघतवारि[20] मनोहर। जीतोअर्जुन[21] समरभूमिपर ॥
श्रीपति[22] तारापति[23] द्युतिधरहू। करिकरुणासनाथमोहिंकरहू ॥

श्रीरामावतारः ॥

जग पावक निज तेज सँभारा। द्वेषि सकाम दशानन[24] मारा ॥
धरापत्य[25] सन परम सनेहू। निजस्वरूपअनुभवमोहिंदेहू ॥

श्रीबलदेवावतारः ॥

सो० ताल[26] केतु भगवान धर्म[27] स्थिरमयमूर्ति प्रभु।
हालाहल[28] कियो पान रोहिणीश[29] चुम्बित वदन ॥

---

१ मन्दराचल, मन्दरपादप २ अविखादी शिबिखादी ३ मन्दर, कैलास ४ महिमानं चित्तोन्नति ५ वराहोईश, वरअहीश, वासुकि ६ तनसुभगदयुः ७ महिमा ८ संपुटित ९ सिंहरूपता, शिरमें गंगा १० हिरण्यकशिपु ११ गजासुर १२ प्रसिद्धः सुख और प्रकर्ष आह्लाद १३ सिंहरूपः, शिवरूपः १४ बलिकेसर्वस्व, दक्षयज्ञबलि १५ वामनः वा पक्षान्तरे मनोहरः १६ मृगचर्म, सिंहगजचर्म १७ बालब्रह्मचारी, सतीविना १८ सबकेआदि, स्वयं अनादि, उभयपक्षेसमानः १९ बालक २० गंगवारि २१ सहस्रार्जुन, पाण्डवार्जुन, किरात में यह २२ लक्ष्मीपतिः शोभापति २३ चन्द्रसमः, चन्द्रधरः २४ प्रसिद्धः, सकामः, दशेन्द्रियाणिसुखानि यस्य २५ इन्द्रियरूप मुख, जानकी, पार्वती २६ प्रसिद्धः ताले गतिकाले केतुर्यस्य २७ धर्माय, स्थिराधर्ममयी मोक्षधर्ममयः धर्मस्वरूपः २८ वारुणी, विष २९ वसुदेवः, चन्द्रः ॥

श्रीकृष्णावतारः ॥

अहा पूतना[1] मारण कीरति । यशोदया[2]लंकृत प्रभु मूरति ॥
यो कलापै[3] भूषासुर राया । मम रक्षा कीजै करि दाया ॥

श्रीबुद्धावतारः ॥

मीनध्वजै[4] जयमहँ विख्याता । प्रभु सर्वज्ञ[5] दयामय त्राता ॥
यज्ञ[6] द्वेष आदर अति भारी । बोध[7] रूप मोहिं चाह तुम्हारी ॥

श्रीकल्क्यवतारः ॥

जन[8] मनविषय दूरि जिनकीन्हे । द्योतमान सबतम[9] हरिलीन्हे ॥
सदावास[10] आशय[11] जिन केरो । तिन को नमस्कार बहु मेरो ॥
दो० यहि विधि मा[12] पति उमापति मधुरी विनय सुनाय ।
मूकाम्बिका सदन कहँ तब गवने मुनिराय ॥
द्वार देश द्विज दम्पति पाये । बैठे मृत सुत अंकमलाये ॥
एकहि बालक रह्यो अपाना । तेहि कारण अतिरोदनठाना ॥
शंकर तिनहिं दुखीअतिदेखी । शोच कीन्ह उरकृपा विशेखी ॥
शोचे जब श्रीशङ्कर ज्ञानी । तबहीं होत भई नभ बानी ॥
रक्षा को समरथ जो नाहीं । दया करै दुख हेतु वृथाहीं ॥
गगन गिरा सुनि शम्भुसुहाई । बोले ज्ञानि नृपति हर्षाई ॥
तीनि लोक रक्षा निपुणाई । तोहिं दयाभूषित अधिकाई ॥
जब यतिपति अस उत्तर कहेऊ । द्विजबालकमृत जीवतभयऊ ॥
यह चारित्र सुना जिन देखा । सब कहँअतिआश्चर्यविशेखा ॥
शालादिक तरुकी जहँमाला । पुनि समीप वरग्राम विशाला ॥
साधक सिद्ध हेतु थल सुन्दर । प्रविशे मूक अम्बिका मन्दिर ॥
दो० ब्रह्मलोक सों अधिक सुख असभा प्रेम अपार ।
नयन स्रवैं गद्गद गिरा तन रोमांच उदार ॥

---

१ पूतनाके मारने की है कीर्ति पवित्रनामःरणकोरति २ यशोदाकरिके यश और दया ३ तूण, मयूरपंख ४ शमदमादिरीतिसों मारजिल्लोकजिज्जिनः, कामदहनः ५ उभयपक्षसमान ६ वेदयज्ञनिन्दाद्वारा दक्षयज्ञ ७ बुद्धः ज्ञानस्वरूपः ८ कलिजन, भक्तजन ९ पाप, अज्ञान १० सतामावासोयः सतां आवासोयस्मिस्तथाभजेकृतयुगेकिं ११ शि०य० सदैव वासायक्तं सर्वस्यअन्तःकरणेयेन काश्यादौकृतोऽभिप्रायोयेन १२ लक्ष्मी ॥

करिपूजन पुनि शिवमृदुबानी। बिनती कीन्ह भक्ति रससानी॥
जो परार्द्ध संख्या बड़िमानी। तेहि अतिवर्तन करहु भवानी॥
तव पद पद्म मयूख सुहाये। त्रिशतषष्टि निगमागम गाये॥
तरणि सोमपावक महँ भासा। करिप्रवेश जगकरहिंप्रकासा॥
आवाहन आसन अवरोपन। सुरभि तैल अभ्यंग सुमज्जन॥
इत्यादिक चौंसठि उपचारा। मानस पूजन करहिं तुम्हारा॥
अन्ते वसत्काण्ड पठदेहीं। तब पूजा महिमा फल लेहीं॥
सो० एक एक उपचार चौंसठि में जो बनि परै।
अन्तःशुद्धि अपार शुद्धाज्ञा चक्रन किये॥
दो० तव प्रसन्नता लागि जे ब्रह्मरन्ध्र मों ध्यान।
उपचारनयुत करैंनित तिनसम ध्यान न आन॥
तव पूजन को बाहरकरहीं। कोउकोउमानसविधिअनुसरहीं॥
कोई करहिं कबौं नहिं पूजा। तव स्वरूपगत भाव न दूजा॥
आधारादि कला जे गाई। अष्टविंश साधक मन भाई॥
बोधि निधारणि पुष्प अमृता। क्षमा पांच ये सबदुखहर्ता॥
तव पद पद्म रहैं इन ऊपर। अधिकप्रकाशितभजैं विबुधवर॥
तुम्हहिं देवि कालानल रूपा। धरि सबजारहुविश्वस्वरूपा॥
अमृतरूप धरि सर्जहु पालौ। अस स्वरूप ध्यावहिं लायेलौ॥
सृष्टिकार ते होहिं भवानी। तव अद्भुत स्वरूप के ज्ञानी॥
जे अद्वय मत के विज्ञाता। धन्य धन्य उनको जगमाता॥
प्रथमहिं गुरुसन सुनि तवरूपा। साहमस्मि यह योग अनूपा॥
अनुभव गम्यरूप तब ध्यावहिं। एकभावलखि भेद भुलावहिं॥
छं० जे चक्र मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपूरक भजैं।
तवनगर बाहर वासपावहिं भोगआसा नहिं तजैं॥
पुनि जे अनाहत भजैं तुम को तव नगर वासागहैं।
जे शुद्ध आज्ञा,चक्रमहँ सामीप्य सम भोगन लहैं॥
दो० ध्रुवमण्डल संज्ञक कमल सहस पत्र विस्तार।

तेहि महँ तुम को जे भजैं लहैं न पुनि संसार ॥

ते सायुज्य परम पद पावैं। जगमें साधक इन्द्र कहावैं ॥
पावन जो श्री चक्र सुहावन। पुनिषटचक्र योगि मनभावन ॥
एक भाव इनको बुध देखैं। मन्त्र चक्र पुनि भिन्न न लेखैं ॥
चक्रहि राउर भेद न जाना। सो साधक गुणज्ञान निधाना ॥
यहिविधि वचनन पूजिभवानी। भैक्षोदन संतोषिक ज्ञानी ॥
बहु साधक पूजित श्रीशङ्कर। कछु दिन तहां रहे करुणाकर ॥
श्रीबल नाम ग्राम अतिभारी। द्विजवर बसहिं जहां मखधारी ॥
अग्निहोत्र तहँ घर घर होई। होमसुरभि अतिपावनि सोई ॥
सब निज धर्म आचरण करहीं। कोइ कुमारग पगु नहिं धरहीं ॥
जहँ अपमृत्यु कबहुं नहिं आवै। प्रविशन की कहुँ राह न पावै ॥
दुइ सहस्र द्विजवर जहँ बसहीं। वैदिक धर्म कर्म तन कसहीं ॥
अग्निहोत्र सबके गृह माहीं। को द्विज अस जो श्रुतिधरनाहीं ॥
मध्य बसै गिरिजा सह शङ्कर। नगरमहाशोभाप्रद शशिधर ॥
हारमध्यमनिसमछविदायक। निशिशोभापदजिमिनिशिनायक ॥
दैवयोग शङ्कर तहँ आये। साथ शिष्यमण्डल छविछाये ॥

दो० तहां एक भूसुर बसै जासु प्रभाकर नाम।
अतिप्रभाव जिनको विदित जो विद्यागुणधाम ॥

बहुत यज्ञ करि कीरति पाई। कर्मनिपुणअति बुद्धिसुहाई ॥
धन धरणी गौवें बहुतेरी। जातिबन्धु मान्यता घनेरी ॥
यह सब तदपिन मन आनन्दा। जेहिते भयोसुअनगतिमन्दा ॥
नहिं पर सुनै न आपनि कहई। ध्यान सरिस उपमासोलहई ॥
रूप काम मुख चन्द्र समाना। तेज भानु सम क्षमानिधाना ॥
तासु पिता नित करै विचारा। है पिशाच परवश ममबारा ॥
अथवा प्रथम कर्मवश ऐसो। बालकलह्यो स्वभाव अनैसो ॥
मन्द चेष्टा क्यों यहि पाई। पूछहि सदा गुनिन पहँ जाई ॥
गुरुवर आगम तिन सुनिपावा। शिष्यप्रशिष्यझुंडसँगआवा ॥

पुस्तक भार बहुत सँग माहीं। नगरलोग दर्शन कहँ जाहीं॥
जाहिं इष्ट[1] सुरगुरु नृप तीरा। रीते हाथन जे मतिधीरा॥
जानि निगम मर्याद सयाना। सहितउपायनसुअनअयाना॥
आय भेंट फल ढिग धरिदीन्हे। पुनिगुरुकहँप्रणामद्विजकीन्हे॥
पुत्रहि प्रभु चरणन पद डारा। भस्मछिप्योपावकसमप्यारा॥

दो० परो चरण नहिं उठै सो जनु जड़ भाव दिखाय।
माथे हाथ लगाय तब शंकर दियो उठाय॥

पिता कही प्रभु सन यह बानी। जानहुँ जड़ता हेतु न ज्ञानी॥
ऐसेहिं तेरह वर्ष गवाँये। वेद पढ़े नहिं आखर आये॥
कैसेहुं करि दीन्हों उपवीता। आवत संध्या रीति पुनीता॥
बालक क्रीड़ा हेतु बुलावा। तिनके ढिगकबहूं नहिं आवा॥
मुग्ध जानि शठ बालक मारत। क्रोधकरे नहिं वचनउचारत॥
कबहुं खाय कबहूं नहिं खाई। करत सदा अपने मन भाई॥
क्रोधहु भा हमने नहिं मारा। यहप्रभुबढ़योकर्म अनुसारा॥
अस कहि विप्र रहे अरुगाई। बालक सन बोले यतिराई॥
को तुम जड़ समान वपु धारी। तब बालक यह गिरा उचारी॥

दो० मनुष देव न यक्ष मैं नहिं गन्धर्व सुजान।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य नहिं शूद्र न मैं भगवान॥
ब्रह्मचारि अरु गृही मैं वनबासी मैं नाहिं।
यतीनमैंहौंबोधवपु सबकल्पित मोहिं माहिं॥

सुनहु नाथ मैं जड़ वपु नाहीं। जड़चैतन्य होत मोहिं पाहीं॥
षटउर्मी[2] षड्भाव[3] विकारा। मों मैं नहिं इनकी अनुसारा॥
सुखस्वरूप प्रभु मैं अविनाशी। चेतन सब जड़वर्ग प्रकाशी॥
मम अनुभव है निश्चल जैसो। सब मुमुक्षुगण पावहु तैसो॥
ऐसे द्वादश पद्य[4] बखाने। गतप्रपञ्च अनुभव रससाने॥
ते[5] परतत्त्व प्रकाशन करहीं। जिमिधात्रीफल नरकरधरहीं॥

१ प्रिय २ शोक मोह क्षुधा पिपासा जरा मृत्यु ३ अस्ति, जायते, वर्द्धते, विपरिणमते अपक्षीयते, विनश्यति ४ श्लोक ५ श्लोक॥

तेहि कारण बरणे गुणधामा । हस्तामलक ग्रन्थ कर नामा ॥
तत्कर्त्ता संज्ञा सोइ पाई । निर्मलकीरति जग सरसाई ॥
बिनउपदेशलह्योअसज्ञाना । द्विजसुतलखिविस्मितभगवाना॥
माथे हाथ कृपा करि राखा । बालकपितहिंवचनअसभाखा॥
तव सँग बसिबे लायक नाहीं । अर्थ लाभ नहिंतवजड़माहीं ॥
दो० प्रथम जन्म अभ्यास वश सब जानत यह बाल ।
नतरु निरक्षर कहै किमि पद अनुभविकरसाल ॥
जानि बूझि यह बोलत नाहीं । यहिकीरुचिनहिंसंसृतिमाहीं ॥
निज शरीर ममता जेहिं त्यागी । होहिंकौनिविधिपरअनुरागी॥
अन्तर्दृष्टि सदा यह रहहीं । ममविचारइमिआवतअबहीं॥
असकहि द्विज बालक लैलीन्हा।तहँसनबहुरिगमनप्रभुकीन्हा॥
तासु पिता ममता रस पागा । कछुक दूरि सुतके सँगलागा ॥
अस्थिर करि निजबुद्धि सुहाई । निजगृहगयो लौटि द्विजराई ॥
विष्णु महेन्द्र गीत गुण गाथा । पद्म पदादिक जिनके साथा॥
पूरणकाम ज्ञानिगण राजा । शृंगी गिरि गवने यतिराजा ॥
जहँ शृंगी ऋषिवर तप करहीं । चर्म नयन सों देखि न परहीं॥
दो० स्पर्शहोतपुरवहिसकल सुख कल्याण विलाश ।
नाम तुङ्गभद्रा नदी गिरि तट करै प्रकाश ॥
इज्यादिक सों अधिक लसन्ता।शान्तहृदयनिवसहिंमुनिसन्ता॥
जिन निःशेष पढ़ी सब शाखा । अतिथिमनोरथशेष न राखा॥
भाष्यादिक अपने सद्ग्रन्था । तहँ बसि देनलगे प्रभुसन्धा॥
श्रवणकरत जिनको अधिकारी । अमृतयोगतालहहिंसुखारी ॥
वरनहिं जीवेश्वर अविशेषा । सुरगुरुते सबभांति विशेषा ॥
लज्जित होहिं देखि करि शेषा । होत प्राणितम दूरि अशेषा ॥
तहँ शारद प्रासाद बनावा । इन्द्रविमानसरिसछविछावा ॥
पर देवता शारदा भवानी । इन्द्रादिकपूजित जग जानी ॥
तासु पीठ निर्माण करावा । पूजा कर बन्धेज बँधावा ॥

शारदाम्बा जेहि कर नामा। पालुप्रतिज्ञा शुभगुणधामा ॥
अबहूं करहिं सदा तहँ वासा। देहि मनोरथ ज्ञानप्रकासा ॥
एकशिष्य कीन्हों तहँ शङ्कर। तोटक जाहि कहैं सब बुधवर ॥
गुरु मन को अनुवर्त्तन करहीं। मनक्रमवचन धर्मआचरहीं ॥
भूत दया पालै नित नेमा। श्रीगुरुपदमहँ अतिशयप्रेमा॥
गुरुते प्रथम करहि अस्नाना। गुरुसेवा महँ परम सुजाना ॥
कम्बलादि परिकल्पित आसन। उन्नतसममृदुरचाहिसुहावन ॥
प्रथमहि दन्तदारु * लै आवै। भक्तिसहित अस्नान करावै ॥
सूक्षम कोमल पट रँगि लावै। विनयसहितगुरुकोपहिरावै ॥
पादपद्म नित मर्दन करई। तनछायासम नितअनुसरई ॥
गुरु समीप जृम्भा नहिं लेही। कहिबेयोग अवशि कहिदेही ॥
बहुत वचन नहिं बोलै तबहूं। चरण पसारि बैठ नहिं कबहूं ॥

दो० गुरु सम्मुख बैठे सदा नहीं दिखावत पृष्टि।
पाठ सुनै नित विनयसों नीची राखै दृष्टि ॥
गुरु बैठत बैठे सदा गुरू चलैं चलु सोय।
बिन सिखये सोई करै जेहि में गुरुहित होय ॥

अनहित कबहुँ करै नहिं काजा। यहि प्रकार सेवै गुरु राजा ॥
एकसमय सेवक वर केतू। श्रीगुरु वसन पखारन हेतू ॥
नदी तीर गवनों नहिं आया। शङ्कर भक्तवसल सुरराया ॥
तासु राह देखत करुणाकर। पाठआरंभ कियो नहिंशंकर ॥
श्रवणकरनहित शिष्यनिकाया। उद्यत देखि कह्यो मुनिराया ॥
क्षण भरि ठहरो जब वे ऐहैं। तबहिं पाठ को लागु लगैहैं ॥
सुनि गुरुवचन सनन्दनकहहीं। सोतौ नाथ परमजड़ अहहीं ॥
मन्दबुद्धि सो नहिं अधिकारी। किमि देखहु तुम राह पुरारी ॥
तिनको गर्व मिटावन हेतू। दीनबन्धु शङ्कर वृषकेतू ॥
मनहींमन हरिलीनि अविद्या। दीन्हीं तुरत चतुर्दश विद्या ॥
परम अनुग्रह प्रभु की पाई। तत्क्षण सब विद्याफुर आई ॥

* दन्तकाष्ठ ॥

गुरु समीप गवने अनुरागे । तोटक छन्द सुनावन लागे ॥

छन्द ॥

भगवन् भवसिन्धु अपारमहा । जनिनाशभरोअतिवारिजहा ॥
दुख आनँद मीन समान प्रभो । तहँ बूड़त व्याकुल पाहिविभो ॥
शरणागत मम उद्धार करौ । उपदेशि महाअज्ञान हरौ ॥
मतिफेरि विषयगणसों हमरी । तनआतम मानिरहो बिगरी ॥
परमातमरूप निमग्न करौ । मम मोह महाभ्रम नाथ हरौ ॥
अन्नादिक पांचहु कोषसदा । अयमस्मिममेतिकरोमिमुदा ॥
दृशि * रूपमनन्तमजं विगुणं । हृदयस्थलखौसबत्यागिभ्रमं ॥
जलभेद कृताहि तथा बहुता । नहिं आतमरूप गता विकृता ॥
मति भेद कृताहि तथा बहुता । नहिं आतमरूप गता विकृता ॥
दिननाथ प्रभा सदृशेन सदा । जन चित्तगतं सकलंहि मुदा ॥
विदितं भवताऽविकृतेन सदा । यत एवमतोसि सदैव सदा ॥

सो० गुरुपद पङ्कज मूल करुणा जल सींची गई ।
भक्ति बेलि सब शूल पाप निवारक भै प्रकट ॥
तोटक पद फलरूप महामधुर तेहि में लगे ।
अनुभवस्वादुअनूप शुकसज्जनचाखहिंसदा ॥

गुरुसेवा सोपान समाना । गई परमपद लौं महि थाना ॥
उन्नत गुर्वी अतिशय पावनि । जेहिमुखत्रिभुवनपंक्तिसोहावनि ॥
है जग में अस जासु प्रकाशा । तोटकतमक्योंकरहि न नाशा ॥
यहिविधि जगतोटक पदगाये । श्रुति शिर संमत अर्थ सुहाये ॥
छन्द भेद आखर नहिं जाना । गुरुवर कृपा भयो सब ज्ञाना ॥
अमृत समान सुनी जब बानी । देखी अधिक बुद्धि सरसानी ॥
पद्मचरण अहामितितबत्यागी । भयेसकल विस्मयअनुरागी ॥
भक्ति वेग भे प्रकट सुहाये । तोटक पद्म परम गुण छाये ॥
तेहिते जग यश भयो सुहावा । नाम तोटकाचारज पावा ॥
दो० अबहूं तोटक ग्रन्थ सो जग में प्रथित अनूप ।

* दृश ॥

पढ़े सुने ते जासु के सन्त लहैं निज रूप ॥

पावा तोटक नाम सुहावा।सबदिशिमहँजिनकोयशछावा॥
पद्मपाद मुनि सरिस बड़ाई। मुख्य शिष्य पदवी पुनि पाई॥
पद्म चरण गुरुभक्त सुजाना। तथा सुरेश्वर ज्ञान निधाना॥
हस्तामलक परम विज्ञानी। गुरु दैवत तोटक गुण खानी॥
चारिउ शिष्य देखि मनमाहीं। बुधवर बहुत विकल्प कराहीं॥
धर्मादिक फल हैं ये चारी। किधौं वेद हैं नर तन धारी॥
कैधौं विधि के मुख हैं चारी। अथवा मुक्तिभेद सुखकारी॥
श्री गुरूक्त सिद्धान्त उदारा। जिनकियोंनिष्ठासहितविचारा॥
निरवधि सुखप्रद आतमलाभू। परमधन्यसोइजिहितहँ लोभू॥
स्वर्गद्वार जे विशद विराजा। ऐरावत मम बहु गजराजा॥
मदवशअतिकिलोलअनुसारी।सबदिशिभरिजिनकीध्वनिभारी॥
स्वर्ग सम्पदन शूकहिं नाहीं। जे विहरहिं स्वरूपसुखमाहीं॥

छं० पयसिन्धुमन्थन जनिसुधा शुभफेनसम निर्मलसदा।
पुनिअमृतपूरणरुचिर ऐसे यशसहितशंकरसुदा॥
परवादि कल्पितमत निरुन्धन करतशंकरसोहहीं।
त्रैलोक्यविजयी शिष्यमण्डलसहितमतमनमोहहीं॥

इति श्रीमतपरमहंसपरिव्राजकाचार्य्य श्रीस्वामि श्री७रामकृष्ण भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेशङ्करदिग्विजयेहस्तामलकतोटकाचार्य्याश्रयवर्णनपरोद्वादशस्सर्गः १२॥

श्लो०॥ ईशानः सर्वविद्यानां शङ्करो मे सहायवान्॥ आशुतोषं सदा वन्दे विघ्नजालहरं हरम्॥ १॥

दो० एकसमय अतिभक्तिसो करि प्रणपात सुरेश।
गुरुवर सों बिनती करी जिन दीन्हों उपदेश॥

शारीरक गम्भीर उदारा। तासु वृत्ति * मैं रचहुँ उदारा॥
असमनधरिनिज गुरुसों भाषा। मेरी नाथ परम अभिलाषा॥
कछु सेवा प्रभु मोहिं बतावो। उचितसिखावन मोहिंसुनावो॥
जीवन तासु सफल जगमाहीं। श्रीगुरुभक्तिविमलजेहिपाहीं॥
शिष्यशिरोमणिकी सुनि बानी। मुदित कह्यो गुरुवर विज्ञानी॥
मेरी भाष्य रुचिर गम्भीरा। वार्तिक तासु रचौ मतिधीरा॥
यह सुनि कहहि सुरेश सुजाना। सुनहु भक्तवत्सल भगवाना॥
तर्क युक्त गम्भीर अपारा। नाथ भाष्य तव परमउदारा॥

दो० तासु विचार शक्ति मोहिं जब नहिं शम्भु सुजान।
वृत्ति बनावन कठिन अति यद्यपि है भगवान॥

तद्यपि कृपादृष्टि तव पाई। यथाशक्ति मैं करब उपाई॥
ऐसोइ होहु कहा मुनिराई। सो गुरु आज्ञा शीश चढ़ाई॥
पुनि सुरेश निजआसन गयऊ। चित्सुखादि उरमत्सर भयऊ॥
पद्मपाद सन प्रीति घनेरी। जग कीरति चाहैं तेहिकेरी॥
ते सब मिलिशंकर सन कहहीं। हमहिंनाथकछु संशयअहहीं॥
हित के अर्थ यत्न जो कीन्हा। सो चाहत उलटोफल दीन्हा॥
मण्डन अति विद्वान धुरंधर। रह्योकर्मरत सो अतिशयतर॥
ब्रह्मादिक वन्दित जगदीशा। जाहि सुरासुर नावहिं शीशा॥
सो ईश्वर इन खण्डन कीन्हा। सबको यही सिखावन दीन्हा॥
स्वर्ग नर्क कर्महि सन होई। ईश्वर फलदाता नहिं कोई॥
सकलपुराण वचन जे अहहीं। जगतप्रलयतेसबमिलिकहहीं॥
प्रलयादिक जेतो व्यवहारा। सांचो कर्म हेतु निर्द्धारा॥
ते पुराण मुनिव्यास बनाये। तिनके जैमिनि शिष्य कहाये॥
जैमिनि पक्षपातधर मण्डन। करिहैंअवशिप्रलयअवलम्बन॥

दो० गुरू शिष्य के पक्ष में भेद कबहुं जो होय।
गुरू शिष्य को भाव जो नाथ रहे नहिंसोय॥

सो० होय तदपि जहँ सोय† पूर्व पक्ष सवर्क गिरा।

---

* वार्तिक । † पक्षभेद ॥

गुरू वचन तहँहोय परम प्रौढ़ सिद्धान्त सम ॥
जबसे जन्म भयो जग माहीं। कर्म्म करत उनके*दिनजाहीं॥
औरन को नितप्रति उपदेशा। कर्म किये सुखहोय विशेशा ॥
मारग वृथा गहो नहिं कोई। कहत रहो सबसों नित जोई ॥
तिन सो वृत्ति नाथ बनवावैं। हम सबके मन संशय आवैं ॥
यद्यपि आज्ञा पाय बनै हैं। कर्म परायण अर्थ जनै हैं ॥
ज्ञान वृद्धि चाहहु विज्ञानी। हमरी जानि मूल की हानी ॥
इन संन्यास न रुचिसों कीन्हा। हारि गये परवश ह्वै लीन्हा ॥
तेहिकारण हमरे विश्वासा। नाथकरै नहिं हृदय प्रकाशा ॥
जोपै ज्ञान कि वृद्धि बनावो। इनकी द्वारा जनि बनवावो ॥
भट्टपाद कर यह मत रहेऊ। कुशलकर्मजानिकोउपरिहरेऊ॥
कर्म करन के जेहैं योगा। ते न करैं शुभकर्म वियोगा ॥
मन संन्यास केर हठ जासू। अन्धादिक अधिकारी तासू ॥
भट्टपाद मतके अनुसारी। तिन ऐसी नित गिरा पुकारी ॥
निश्चय पक्षपात ये करि हैं। तत्प्रतिकूल हृदय नहिं धरि हैं॥

दो० जो जानौ प्रभु उचित पुनि सो कीजै मुनिराय।
यहि में हमको हठ न कछु बिनती दइ सुनाय॥

पुनि को करिहै जो अस गुनहू। तौ यह विनय हमारी सुनहू ॥
हम सब सुरसरि तीर सुजाना। रहे अपर तटपर भगवाना ॥
सबके प्रेम परीक्षा हेतू। करुणासिन्धु नाथ वृषकेतू ॥
हम सबको निज निकट बुलावा। यतिसमूह नौका हित धावा ॥
पद्मपाद सुनि गुरु आदेशा। स्वर्गनदी महँ कीन्ह प्रवेशा ॥
गुरु चरणन को प्रेम भवानी। त्रिपथगामिनी लखि हर्षानी ॥
जहँ जहँ पाद नदी महँ दीन्हें। कंचनकमल प्रकटतहँ कीन्हें ॥
तिनपर धरिधरि चरणसयाना। तव समीप पहुँचो हर्षाना ॥
अति प्रसन्न राउर मन भयऊ। पद्मपाद संज्ञा प्रभु दयऊ ॥
तव चरणारविन्द अनुरागी। सकलभेदगत सो बड़भागी ॥

* मण्डन ॥

है स्वाभाविक सिद्ध सुजाना । समरथसबविधिज्ञाननिधाना ॥
सूत्र भाष्य गंभीर अगाधा । तासु वृत्ति करिहैं निर्बाधा ॥
दो० अथवा ये आनन्दगिरि करिहैं परम सुजान ।
तब हर्षित श्री शारदा दीन्हों है वरदान ॥
तव प्रबन्ध आशय सब जाना । है वरदान जनित यह ज्ञाना ॥
कर्म निपुण मतिपरम सुजाना । विश्वरूप है कर्म प्रधाना ॥
केहिविधि करहु नाथ विश्वासा । देखहिं कैसे पूजिहि आसा ॥
पंकजपाद रचैं यह टीका । है अभिलाष नाथ सबहीका ॥
तेहि अवसर तहँ आइ सनन्दन । कह्यो वचन गुरुपदकरिवन्दन ॥
हस्तामलक परम विज्ञानी । जिनकीमहिमासबजगजानी ॥
हस्तामलक सरिस को जाना । जो राउर सिद्धान्त सुजाना ॥
यहि कारण तुमहीं भगवाना । हस्तामलककियोअभिधाना* ॥
ये सब भांति समर्थ सुजाना । इन्हैं देहु आज्ञा भगवाना ॥
सुनी सनन्दन की यह बानी । विस्मितउत्तरदियोमुनिज्ञानी ॥
सो० है नैपुन्य अनूप तिनकी जैसी तुम कही ।
सदा मगन निजरूप बहिर्दृष्टि नहिं होत सो ॥
बालपने अक्षर नहिं चीन्हें । यद्यपि पिता यत्न बहु कीन्हें ॥
जब उपवीत भयो नहिं वेदा । पढ़ै मगन मति ब्रह्म अभेदा ॥
मांग्यो अन्न वचन नहिं बोलो । लरिकन संग कबहुँ नहिं खेलो ॥
भूत समाहत निश्चय जानी । मम समीप आन्यो मुनिज्ञानी ॥
हमहिं देखि पुनिपुनिपदवन्दन । बैठोअधिकपायअभिनन्दन ॥
प्रकृति अपूर्व सकलजन देखी । अतिविस्मितमनभयेविशेखी ॥
को तुम बालक केहिके ताता । मोसन कहौ हृदय की बाता ॥
जब हमने पूछा यहि भांती । पढ़िदीन्ही द्वादश पद पांती ॥
निजस्वरूप आनन्द बखाना । सुनिसुनिवचन जनकहर्षाना ॥
जब सों जन्मभयो नहिं बोले । आजु कहे असवचन अमोले ॥
ज्ञान शिरोमणि बालक चीन्ही । तासु पिता यह बिनती कीन्ही ॥

* नाम ॥

हम सब ने जड़ बालक जाना। परमतत्त्व यह कहहि सुजाना॥
यह तव दर्शन केर प्रभावा। जाय कौनविधि मोसनगावा॥
दो० संसृति मुक्त जन्म सों कीजै शिष्य कृपाल।
मलिन सरोवर है न किमि मानसवासि मराल॥
असकहिपिताभवननिजगयऊ। तब सों मम समीप यहरहेऊ॥
शिशुपनते स्वरूप सुख लीना। सो किमि रचैं प्रबंध नवीना॥
यह सुनि शिष्य कहैं हर्षाई। कहहु नाथ निजजनसुखदाई॥
बिन श्रवणादि उपाय उदारा। भयो ज्ञान केहिभांतिअपारा॥
शङ्कर उतरु दीन्ह सुख पाई। सुनहु कथा यह परमसुहाई॥
एक सिद्ध यमुना तट बासी। संसारिन सों परम उदासी॥
तप आचार पुनीत सुहावा। ध्यानसमाधि सदा लौलावा॥
कबहुँ एक द्विज कन्या आई। युग संवत वय बालक लाई॥
क्षण भरि बालक देखहु नाथा। मुनिसों कहिगै नारिन साथा॥
करनलगी यमुना अस्नाना। बालक तहँ खेलै हर्षाना॥
दैवयोग सरि में गिरि परऊ। तुरतहि सो बालक मरिगयऊ॥
मातु पितादि सकलजन धायो। मुनि के तीर विलाप मचायो॥
तिनकर रुदन सुना मुनिराया। कृपा लागि उर बहुदुख पाया॥
योगप्रभाव बाल तन आये। सो यह हस्तामलक सुहाये॥
तेहिते बिनश्रम इन सब जाना। श्रुतिअस्मृतिसबशास्त्रपुराना॥
कौन तत्त्व अस है जग माहीं। हस्तामल जेहि जानत नाहीं॥
निजस्वरूप सुख रति दिनराती। उचितनतासुप्रवृत्तिदिखाती॥
दो० बुद्धि तत्त्व मण्डन अहै सब लायक गुणधाम।
जासु सर्वविद्भाव की साखी शारद वाम॥
जासु विशद कीरत्ति असि भारी। चहुँदिशिफैलरही उजियारी॥
जेहि ने सकल शास्त्र को पारा। देखि लियो है भली प्रकारा॥
अहै सुरेश धर्म हितकारी। हमकहँ मिल्योयत्नकरिभारी॥
ऐसहु रुचै जो तुम को नाहीं। तेहिसम और नहींजगमाहीं॥

तद्यपि बहुअनहित जेहिमाहीं । सो कारज करिहौं मैं नाहीं ॥
बहु प्रतिकूल भये जेहि काजा । अब मम उर संदेह विराजा ॥
तैसो और नहीं जग माहीं । यह सुनि भई सहनता नाहीं ॥
पुनि सबहुन बहु विनय सुनाई । कही सनन्दन की चतुराई ॥
ब्रह्मचर्य सों करि सन्न्यासा । इनको जग उत्कर्ष प्रकासा ॥
राउर आयसु जो ये पैहैं । भाष्यवार्त्तिक रुचिर बनैहैं ॥
सुनि शङ्कर तब आयसु दीन्हा । तद्यपि यहविभागतहँकीन्हा ॥
सो० करैं सनन्दन जाय नन्दपिता जो जनन को ।
निजप्रबन्ध मनलाय विवरण हमरी भाष्यपर ॥
वार्तीक दूजो नहिं करिहैं । मण्डनसम आज्ञा अनुसरिहैं ॥
वृत्ति प्रतिज्ञा औरहि कीन्ही । जिन नवीन दीक्षा है लीन्ही ॥
सबसोंयहिविधिशिवकहिदीना । आये जबहिं सुरेश प्रवीना ॥
तब उनसों यह वचन सुनावा । तात करहु जनि वृत्तिउपावा ॥
करि अनेक संशय मनमाहीं । हमरे शिष्य सहत हैं नाहीं ॥
कर्मपक्ष तुम्हरो ते जानहिं । हमरे शिष्य संदेह बखानहिं ॥
जु पै सुरेश्वर वृत्ति बनै हैं । कर्मपरायण अर्थ जनै हैं ॥
तुर्या*श्रम श्रुति सम्मत नाहीं । यह निश्चय तुम्हरे मनमाहीं ॥
तेहिते द्वारपाल तव द्वारे । घुसनदेहिं नहिं भिक्षु विचारे ॥
दो० ऐसी लोकप्रसिद्ध सुनि तिन्हैं न तव परतीति ।
कारजकरिबो नहिं भलो बहुतन के विपरीति ॥
मैं तुमको सब लायक जानौं । सम्मुखगुणकेहिभांतिबखानौं ॥
तेहिते करौ स्वतन्त्र प्रबन्धा । प्रथमहिं जहँ न कर्मकीगन्धा ॥
सो बनाय हम कहँ दर्शावो । शिष्यन को संदेह मिटावो ॥
सूत्रभाष्य की वृत्ति सुहाई । दैवयोग हा † नहिं बनिआई ॥
कहिसुरेशसन यहिविधि बानी । पावा कछुक खेद मुनिज्ञानी ॥
जब सुरेश अस आज्ञा पाइ । कियो यत्न निज आश्रम आई ॥
छं० नैष्कर्म्य सिद्धि बनाय गुरुपहँ श्रीसुरेश्वर लैगये ।

* संन्यास † कष्ट ॥

श्रीशंभु सो वरग्रंथ रुचि अरु प्रेमसन देखतभये ॥
सहयुक्तिआद्योपान्त निष्क्रिय तत्त्वको वर्णन जहां।
सोदेखिमुनिवरलह्योअतिशयतोषअरुआनँदमहा॥

सो० औरन हूँ दर्शाय शंका मेटी सबन की।
विस्मय गयो समाय सबलोगनके हृदयमहँ ॥

सबनकियो निश्चय मनमाहीं। इन समान ज्ञानी कोउ नाहीं ॥
अबहूँ परमहंस बहु ग्रन्था। रुचिसों सुनहिंलेहिंपुनिसन्था॥
जहँ निष्कर्मक पुरुष स्वरूपा। होय जहाँसिधि मुक्ति अनूपा॥
तेहि निष्कर्म सिद्धिजन गावा। विदित भयो जगनामप्रभावा॥
दीन्हो शाप सुरेश्वर भारी। विघ्नकियो जिनयुक्तिविचारी॥
यद्यपि करिहैं वृत्ति उदारा। नहिं ह्वैहै महि तासु प्रचारा॥
यहिविधि ग्रन्थ सतर्पनकीन्हा। अरु विश्वाससबनकहँ दीन्हा॥
श्रीगुरुसन पुनि विनयसमेता। कह्यो सुरेश्वर वचन सचेता॥

दो० नहिं प्रसिद्धहितलाभहित नहिं पूजा सन्मान।
यह प्रबन्ध मैंने रच्यो हेतु कहौं भगवान ॥

नहिं गुरु आज्ञा लंघन कीजे। प्रेम सहित माथे धरि लीजे॥
जोपै गुरु के वचन मिटावा। गुरू शिष्य को रहै न भावा॥
प्रथमहिं जो प्रभुवचन बखाना। तासु उतरु वरणो भगवाना॥
पहिले कर्मि रह्यो मैं भारी। सो मैं अब नाहीं त्रिपुरारी॥
लोकहु पुरुष युवा जब होई। करै कि बालक क्रीड़ा सोई॥
वृद्ध भये नहिं युवा सुभावा। जग में काहू पर बनिआवा॥
जबजब जहँ जहँ जो कोउ जाई। जाय सो पहिलो वास बिहाई॥
गृही न मैं मुनि करहु विचारा। निजप्रभुकहँ संशयमहँ डारा॥
प्रथमहिं गृही रहे ते नाहीं। करि विचार देखैं मनमाहीं॥
गृह को वन को मन है कारन। पुनि मन है बन्धक अरु तारन॥
गृही होहु अथवा संन्यासी। मन विशुद्ध सब ठौर सुपासी॥
मोहिं संमत संन्यास न होतो। वादप्रतिज्ञाकेहितिधिकरतो ॥

दो० उभय प्रतिज्ञा वाद महँ जैसी भई सुजान।
सो प्रसंग कछु गुप्त नहिं जानहिं सब विद्वान॥

सो० जो न होत संन्यास हमको संमत नाथ तव।
कहतौ मैं प्रभुपास मोहिं नहीं अनुकूल यह† ॥

ममगृह भिक्षु जान नहिं पावा। जो लोगनयहप्रभुहि सुनावा॥
शिष्यसहित नित प्रभुसेवकाई। कौनि भांति होती पहुनाई॥
लोग यथारुचि ऐसेहि बकहीं। तिनकोमुखकोउ ढांपि न सकहीं॥
जानि बूझि लीन्हों संन्यासा। भा विराग सों न्यास प्रकासा॥
निर्णय हेतु वाद हम ठाना। तव उपदेश भयो शुभज्ञाना॥
जब गृहस्थ में रह्यो यतीशा। न्यायादिकमहँ ग्रन्थमुनीशा॥
महा अर्थ पूरण रुचि लीन्हे। अबअभिलाषसकलतजिदीन्हे॥
अब विहाय श्रीपद सेवकाई। नाथ न मोहिं कछु और सुहाई॥

छं० अद्वैत श्रद्धाबद्ध आदर सुजनधी महँ जो रही।
दुर्वादिगर्वानल विपुलतर ज्वालमालासों दही॥
निजगिरामृतसनसींचि श्रद्धाबहुरिप्रभुहर्षितकही।
तिनआपुकीकहौ कौनसेवा करिसकै गुरुवरखरी॥

दो० अस कहि वचन मौन गहि रहे सुरेश सुजान।
तिनके द्वारा वार्तिक चाह्यो श्रीभगवान॥
सो न बनो तेहिहेतु ते शोक अग्नि उरमाहिं।
उपजीज्ञानसलिलप्रभु शीतलकीन्हीताहि॥

तब शंकर अस हृदय विचारा। बनै उपनिषद्वृत्ति उदारा॥
नूतन ग्रन्थ सुरेश बनावा। जो श्रीगुरुवर कहँ दर्शावा॥
भावभरा बहु कोमल बानी। अति गँभीर परमारथसानी॥
प्रथम पक्ष खण्डन अनुसारा। प्रस्थाप्यो सिद्धान्त उदारा॥
देखि शम्भु अतिशय हर्षाने। श्रीमुखबहुगुण आप बखाने॥
पुनि बोले मुनिवर विज्ञानी। अहै सत्य सुरपति तव बानी॥
तैत्तिरीय उपनिषद सुहायो। बृहदारण्य तथा मुनिभायो॥

† प्रतिज्ञा॥

इन दोनहुँ की वृत्ति बनावहु। दुष्टवचन संशय जनि लावहु॥
मोरि प्रीति अरु जन उपकारा। दूसर जनि कछु करहु विचारा॥
चन्द्रसरिस कीरति जग पैहौ। जो मम आज्ञा मानि बनैहौ॥
पहिले कैसो विघ्न अपारा। अबकि बार नहिं होनेहारा॥
करिसङ्कल्प जाहु निज वासा। करहु वेगि दुइवृत्ति प्रकासा॥
सो० निजगुरु आज्ञा पाय विज्ञशिरोमणि धर्मनिधि।
लीन्ही उभय बनाय गुरुआज्ञा गुरुतर निरखि॥
रचिविचित्र गुरुवर कहँ दीन्ही। भक्तिसहितबिनतीबहुकीन्ही॥
पद्मपाद आज्ञा अनुसारा। शारीरक वर भाष्य उदारा॥
पञ्चपादिका पहिलो भागा। टीका तासु सहित अनुरागा॥
मुनिवर सूत्र विवेचन हेतू। टीका नाम ग्रन्थ पतिकेतू॥
निजकीरतिडिण्डिमसी कीन्ही। गुरुदक्षिणा सरस सो दीन्ही॥
देखिग्रन्थ मुनि कीन्ह विचारा। शङ्कर गृहगति के अनुसारा॥
रहसि† सुरेश्वरसन प्रभु कहेऊ। यद्यपि तात ग्रन्थ यहभयऊ॥
ख्याति पांचचरणन की ह्वैहै। चारिहु सूत्र प्रसिद्धी पैहै॥
तुम प्रारब्ध कर्म्मवश जाई। वाचस्पति ह्वैहौ द्विजराई॥
हम शारीरक भाष्य बनाई। रचिहौ टीका तासु सुहाई॥
सो रहिहै जौलौं संसारा। सुनहु सत्य वरदान हमारा॥
यह वरदान सुरेश्वर पावा। हर्षित गुरुचरणन शिर नावा॥
दो० आनँदगिरिआदिक मुनिन शङ्कर कह्यो बुलाय।
निजनिजमतिअनुसार सब करहु ग्रन्थ हर्षाय॥
छं० अस पाय गुरुशासन सुहावन ते सकल उद्यत भये।
निजबोधपूरण ज्ञाननिधि सबभांति गुणगणसों छये॥
गतभेद श्रुतिसम्मत मनोहर ग्रन्थ निर्मित तिन किये।
ते तत्त्व पङ्कजके प्रकाशक रविसरिस जगमहँ उये॥

इति श्रीशङ्करदिग्विजयेवार्त्तिकान्तब्रह्मविद्याप्रवर्त्तन-
परस्त्रयोदशस्सर्गः १३॥

---

† एकांते॥

श्लो० ॥ तीर्थेश्वरं कामप्रदं महेश्वरं गिरापतिं तीर्थकरं सुखाकरम् ॥
यतिप्रियं तीर्थफलप्रदं हरं नमामि तं मोक्षपदं यतीश्वरम् ॥ १ ॥
एकबार करि विनय बड़ाई। पद्मपाद यह गिरा सुनाई ॥
बहुत दिनन सों है मन मेरे। तीरथ पावन महि बहुतेरे ॥
देश परमकौतुक युत नाना। है इच्छा देखौं भगवाना ॥
सेवक पर करुणा प्रभु कीजे। ह्वै प्रसन्न मोहिं आज्ञा दीजे ॥
गुरु कह्यो मम बानी उर धरहू। पुनः सुखेन यथारुचि करहू ॥
गुरु समीप करिहै जो वासा। सोई तीरथ केर निवासा ॥
गुरुचरणोदक वारि सुहावा। सो पावनतीरथ श्रुति गावा ॥
दो० गुरु उपदेश रीति सों आतम दृष्टि जो होय।
परमसुखद कल्याणप्रद देवदृष्टि है सोय ॥
श्रीगुरुनिकट वास नित कीजे। और देशमहँ चित्त न दीजे ॥
राह चले श्रम अतिशय पावै। तृषा क्षुधा अरु नींद सतावै ॥
श्रम तन मन अस्थिर ह्वै पावै। तेहिसोनहिंविचारबनिआवै ॥
ज्ञान भये लीजै संन्यासा। अथवा जानब हित है न्यासा ॥
जीवन्मुक्ति सुखारथ होई। विद्वन्नयास कहावै सोई ॥
तत्त्वंपद शोधन अनुरागी। करैं द्वितीय पास बड़भागी ॥
सो विचार किये न्यास यथारथ। घूमतकालजाय बिनस्वारथ ॥
कहुँ जल मिलै कहूँ पुनि नाहीं। तरुतर आसन कहुँवनमाहीं ॥
दो० शय्या थल ढूँढ़त कहूँ कबहूँ जल में चित्त।
पथिक सदा सुस्थिर नहीं बढ़ै वायु कफ पित्त ॥
ज्वरआदिक मग में ह्वै जाई। तब सूझै नहिं एक उपाई ॥
जात बने नहिं ठहरत बनई। संगी तासु संग पुनि तजई ॥
मज्जन पूजन नहिं बनिआवा। नहिंशुभशौचयोगमनभावा ॥
कहँ भोजन कहँ मित्र समागम। कहँ कहुँ होय शाकलौंदुर्गम ॥
गुरु वाणी को उत्तर नाहीं। तदपि कहौं आई मनमाहीं ॥
गुरुढिग वास श्रेयप्रद भाषा। सत्यकहाप्रभुसुनुअभिलाषा ॥

बिन देखे नानाविध देशा। थिर न होयममहृदय विशेशा॥
ऐसे सब आवहिं नहिं देशा। जलथलको जहँ होय कलेशा॥
सुख बिन पुण्य मिलै कहुँनाहीं। करि विचार देखो मनमाहीं॥
मारग अगम न सब महिमाहीं। यदपि होय दुखतौ क्षति नाहीं॥

दो० प्रथमजन्म अथ उदय जब होय रोग न संदेह।
अहो होय परदेश में देह तथा निज गेह॥

सो० जब आवत है काल बनै न कौनेहु देश में।
फँसे मोह के जाल ऐसो मानै मूढ़ जन॥

देवदत्त बाहर तन त्यागा। घरहोतो नहिं मरत अभागा॥
किये नाम मन्वादिक नाना। न्यूनाधिक गृह पन्थ विधाना॥
देश काल व्यवहार विचारी। चलिहैं मारग विधि अनुसारी॥
शौच व्यतिक्रम पाप न लागा। जो जानै अस धर्म विभागा॥
जब लौं रहै दैव अनुकूला। वनहूं में न होय कछु शूला॥
भोजन वसन रुचिर मिलिजाई। हैगो जबलौं दैव सहाई॥
दैव भयो जबहीं प्रतिकूला। नर पावै तबहीं सब शूला॥
गृह सों तीरथहित चलिजाई। तीरथ करि आवै सुख पाई॥
घर बैठे पुनि कोउ मरिजाई। दैवयोग सुख दुख अधिकाई॥

दो० देश काल पूरण सदा सकल रहित निरुपाधि।
देखहिं ब्रह्मानन्द जे तिन कहँ सदा समाधि॥

जहँ जहँ चित्त होय इकतीरा। तहँतहँसुखसमाधिमुनिधीरा॥
तीरथ सों सब पाप नशाई। मन निर्मल अस्थिर हर्षाई॥
कौतुक युक्त देश बहु देखी। हृदय होय प्रभु हर्ष विशेखी॥
सज्जन संगति बहु दुख हानी। तीरथ सेवा केहि न सुहानी॥
अटनकरत पण्डित मिलिजाहीं। संगति होहि नाथ तिनपाहीं॥
बुध बुधजन को मित्र सुहावा। खल मित्रता न थिरता पावा॥
जो विदेशवासी मन माहीं। ध्यान करै सो जनु गुरुपाहीं॥
भक्तिहीन तीरहु किन रहई। गुरु सों अधिकदूरि सो अहई॥

सज्जनसज्जन मिलि इकसाथा। शनैःशनैः ते होहिं सनाथा ॥
दो० प्रौढ़बुद्धि जब होय प्रभु लहै विवेकी वृद्धि।
हेयगुणन छोड़ै सदा इहि विधि पावै सिद्धि ॥
अस तुम्हार हठ तीरथ माहीं। भली बात मैं रोकत नाहीं ॥
मन थिरताहित प्रथम निहारा। अब सुनिये उपदेश उदारा ॥
मग में बहुत चलब दुख हेतू। सो मतिकरिऔ सज्जनकेतू ॥
एक राह तीरथ की नाहीं। सकलथलहि बहुमारगजाहीं॥
जेहि मग चोर बाघ भय होई। जायहु कबहुँ न मारग सोई ॥
जहँ बहु विप्रन केर निवासा। करि तहँतहँ तुम आवो वासा॥
द्विजवर जहँ निवास पुनि नाहीं। एकहु राति बसहु तहँ नाहीं ॥
सज्जन संगति मन सुखदाई। ब्रह्मज्ञान की कथा सुहाई ॥
तहँ नित नूतन होय प्रकाशा। परमहर्षप्रद शमनप्रयाशा ॥
भव भय छेदिनि कथा अनूपा। संसृतिश्रमनाशनि तरुरूपा ॥
जिनके सुनत तृषा सब बहई। तैसेहि क्षुधा कलङ्क न रहई ॥
सतसंगति सबगुन की खानी। कछुक दोष सो कहहुँ बखानी ॥
ताप देह जब आवहि अन्ता। प्रगटहिंतेहिछिनदुःखअनन्ता॥
प्रथमहिं बहुसुख संगति माहीं। कौनि वस्तु दूषित जग नाहीं ॥
जलकोलो संग्रह नहिं नीको। सो पुनि ताप बढ़ावत हीको ॥
है संग्रह सर्वस्व विनाशक। परिव्राज को विघ्नप्रकाशक ॥
इष्ट देश जब पहुँचहु जाई। तहां वास करियो सुख पाई ॥
दो० बीचबसे है हानि बहु कारज लाभ न होय।
मूल नाश है इष्टथल पहुँचिसकै नहिं सोय ॥
मारग महँ तस्कर मिलिजाहीं। वेषरुचिरपहिचानि न जाहीं ॥
पुस्तक वसन चुरावन लागी। रहहिं संग मानहु अनुरागी ॥
तिनकी तात परीक्षा करियो। गत विश्वासलोग परिहरियो ॥
यति थल जहँ देखौ तहँ जाहू। पूजहु तिनकहँ सहित उछाहू॥
योजन भरि लौं जहँ सुनिपैयो। दर्शन हेत अवशि तुम जैयो ॥

नतरु व्यतिक्रम सो अघ होई। श्रेयकाज निष्फल कस सोई॥
यतिवर जहँ कछु आपद नाहीं। करहु प्रीति ऐसे मतमाहीं॥
नहिं प्राकृतजन सेवन करहू। राग द्वेष मन में नहिं धरहू॥
विचरहु सम्मत सुखी सयाने। निज आनँद मंगल हर्षाने॥
गुरुवचनामृत यहिविधि पाना। करिकै गवन्यो मन हर्षाना॥
दो० पद्मपाद को बिदा करि शंकर सहित हुलास।
कछुदिनतेहिगिरिमहँकियो शिष्यनसहितनिवास॥
योग प्रभाव शक्ति भगवाना। मातुप्रयाणकाल प्रभु जाना॥
शिष्यन को सब कथा सुनाई। व्योमपन्थ लीन्हो सुखदाई॥
तुरतहिपहुँचिजननिकहँदेखा। अतिआतुरअरुविकलविशेखा॥
पुनिमातहि प्रभु कीन्ह प्रणामा। जननी देखो सुत सुखधामा॥
यथा मेघ ग्रीषम संतापा। मेटिदेहि तिमि गारि प्रतापा॥
यदपि असंग शंभु अविनासी। तदपि सदा निजभक्तसुपासी॥
सकल मोह भ्रम मेटनहारे। शंकर यहिविधि वचन उचारे॥
तव प्रिय सुत समीप हौं आवो। अब दुख अपनो दूरि बहावो॥
सब प्रकार निज मन हर्षावो। निज सेवा कछु मोहिं बतावो॥
बहु दिनपर देखा निजबालक। सबगुणयुतसमर्थश्रुतिपालक॥
मन प्रसन्न बोली स्वर मंदा। सुवन आय काटो दुख फंदा॥
कुशल सहित मैं तुमकहँ देखा। यहिते अधिक न काज विशेखा॥
अतिजीरणतनु त्यागन योगा। होय जबहिं मम देहवियोगा॥
दो० क्रियामोरि विधिसनकरौ मोहिं उत्तमगति देहु।
सुनि माता के वचन ये शंकर सहित सनेहु॥
निर्गुण ब्रह्म कीन्ह उपदेशा। मायामय सबरहित विशेशा॥
अप्रमेय अहमान विहीना। स्वप्रकाशमय संशय क्षीना॥
परम सनातन आदि अरूपा। हस्तादिक नहिं परम अनूपा॥
भीतर बाहर सब दिशिकाला। गगनसरिसव्यापकगतजाला॥
जन्मादिक वर्जित सुखराशी। ब्रह्मनिरामय अज अविनाशी॥

नहिं सूक्ष्मनहिंथूलविगतभय। ज्ञानरूप जो ब्रह्म अनामय॥
रमै न मम मन निर्गुणमाहीं। तेहितेसगुणकहौ मोहिंपाहीं॥
सो० सुनि माता के बयन गिरिजापति की प्रीतिसों।
शंकर करुणाअयन करनलगे अस्तुति विमल॥
स्तुतिः॥अनाद्यंतमाद्यंपरंतत्त्वमर्थं चिदाकारमेकं तुरीयं त्वमेयं।
हरिं ब्रह्ममृग्यं परं ब्रह्मरूपं मनोवागतीतं महःशैवमीडे॥
स्वशक्त्यादिशक्त्यंतसिंहासनस्थं मनोहारिसर्वांगरत्नादिभूषं।
जटाचन्द्रगंगास्थिसंपर्कमौलिं पराशक्तिमित्रं नमः पंचवक्त्रं॥
स्वसेवासमायातदेवासुरेन्द्रा नमन्मौलिमंदारमालाभिषिक्तं।
नमस्यामि शंभो पदांभोरुहं ते भवांभोधिपोतंभवानीविभाव्यं॥
जगन्नाथ मन्नाथ गौरीशनाथं प्रपन्नानुकंपिन्विपन्नार्त्तिहारिन्।
महःस्तोममूर्त्ते समस्तैकबंधो नमस्ते नमस्ते पुनस्ते नमोस्तु॥
महादेव देवेश देवादिदेव स्मरारे पुरारे यमारे हरेति।
ब्रुवाणःस्मरिष्यामि भक्त्याभवंतं ततो मे दयाशील देवप्रसीद॥
अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवान्नाथदातात्वदन्यं न याचे।
भवद्भक्तिमेवस्थिरांदेहिमह्यंकृपाशीलशंभोकृतार्थोस्मितस्मात्॥
त्वदन्यः शरण्यः प्रपन्नस्यनेति प्रसीद स्मरन्नो वहन्यास्तुदैन्यं।
नचेते भवद्भक्तवात्सल्यहानिस्ततो मे दयालो दयां संनिधेहि॥
अकण्ठे कलंकादनंगेभुजंगादपाणौकपालादभालेनसाक्षात्।
अमौलौशशांकादवामेकलत्रादहं देवमन्यं न मन्ये न मन्ये॥
दो० सुनि स्तुति गिरिजारमण ह्वै प्रसन्न सुरभूप।
पठये अम्बहि लेन हित अपने दूत अनूप॥
शूल पिनाक धरे ते आये। नरकपाल अरु भस्म रमाये।
जननी कह्यो तात बलि जैहौं। इनके तौ मैं संग न जैहौं।
तब निहोरि दूतन लौटारी। माधव की स्तुति अनुसारी।
नागराज तन सेज सुहाई। कमला पद सेवै सचुपाई।
नीला वसुधा हर्ष बढ़ावैं। दुहूं ओर ते चँवर डोलावैं।

करअंजलि कीन्हे छवि छाजे। सन्मुख विनतानन्द*विराजे॥
शंख१गदा२धनु३चक्र४सुहावा। पंचम५खड्ग नाथमनभावा॥
मूरतिमान अस्त्र चहुं ओरा। देखहिं नाथ भौंह की कोरा॥
श्याम तमाल वरण प्रभु केरा। अतिशय तेज जाय नहिं हेरा॥
रत्न किरीट अधिक शिर सोहै। विधुमुखहँसन काममन मोहै॥
दो० इन्द्र नील मणि शैलपर मानहुँ उदित दिनेश।
कृपा करहु सो जनसुखद दीनानाथ रमेश॥
सुत वर्णित यह माधव रूपा। मन में धारण कीन्ह अनूपा॥
कमलनयनमूरति करि ध्याना। योगीश्वर सम त्यागे प्राना॥
शरदचन्द्र निर्मल छविहारी। अतिविचित्रचञ्चलध्वनिधारी॥
असविमान लै तेहिक्षण आये। श्री कमलापति दूत सुहाये॥
वैमानिक शुभ मूरति देखी। जननी कहँ भयो हर्ष विशेखी॥
करि सुत की बहुभांति बड़ाई। चढ़िविमान देवन शिर नाई॥
करि सन्मान देव तेहि लाये। मारग के सब लोक दिखाये॥
पवनतरणिविधुदामिनिलोका। वरुणइन्द्रविधिलोकविशोका॥
सब लोकन देखत हर्षाता। पहुँची जाय परमपद माता॥
दो० माता की निजकर क्रिया कियो चहैं मनलाय।
शम्भु बुलायो बन्धु को ते सब कहैं रिसाय॥
तुम्हहिं कर्मकर कव अधिकारा। कीन्होंभलो स्वरूप विचारा॥
केवल कपट वेष धरि लीन्हा। यहिविधिबहुनिंदनातिनकीन्हा॥
कोउ शंकर के तीर न आवा। भावी विवश मोह उर छावा॥
पुनि मांगी पावक बहु बारा। सोउ वाणी नहिं सुनैं गँवारा॥
तबहिं कोप शंकर उर आयो। तिनको प्रभु यह शाप सुनायो॥
तुम जो अतिनिंदा मम कीन्ही। बहु मांगे पावक नहिं दीन्ही॥
दो० वेद बाह्य तुम होहु सब चिता होहिं तव गेह।
यती लेहिं नहिं भीखतव जिन अस तजो सनेह॥
गृहसमीप करवा सुरराई। धरि निजकरसों चिता लगाई॥

* गरुड़

तहँ माता काया धरि दीन्ही । अरणीमथ पावक प्रभुकीन्ही ॥
दाहक्रिया सब आपु सँवारी । यथा मातु सन वाचा हारी ॥
तब सो तिन घरनिकट मसाना । अबलौं होहिं सकलजगजाना ॥
समरथ को जेहि काहु सतावा । यह जगमें न कौन सुख पावा ॥
शान्त जानि पीड़ा नहिं दीजै । समरथसोंनितप्रतिभयकीजै ॥
यद्यपि शीतल होय सुभावा । पीड़ा भये क्रोध जग आवा ॥
शीतल सुखदायक अतिचन्दन । प्रकटहि मथे तुरन्त हुताशन ॥
यतिवर को न कर्म अधिकारा । कैसे जननी काज सँवारा ॥
नहिं सन्देह करौ यहि माहीं । दोष कछू समरथ को नाहीं ॥
परशुराम जननी अरु भाई । मारे सकल सनेह विहाई ॥

दो० वृक को दीन्हे पुत्र निज मुनि लोगन जग जान ।
निन्दा दोष न भयो कछु वन्दी वेद पुरान ॥

यहिविधि प्रभु जननी गति पाई । जैसी गति चाहैं मुनिराई ॥
जहां जाय पुनि पतन न होई । आनँदमय पुनि है गति जोई ॥
पुनि दुर्मतनाशन उर आना । कियो दिशाजयको संधाना ॥
जलज चरण की राह निहारैं । सुहृद सहायक ताहि विचारैं ॥
पद्मपाद प्रभु आज्ञा पाई । प्रथम उदीची दिशि महँ आई ॥
बहुत तीर्थ तहँ सेवन कीन्हा । पुनिदक्षिणादिशिमहँपगुदीन्हा ॥
मुनि अगस्त्यसेवित सोआशा । जिनको जग बहु तेज प्रकाशा ॥
घटसंभव जिनको श्रुति गावा । सुमिरण ते सब रोग नशावा ॥
बिन्दुसरिसजलनिधिकियोपाना । सबप्रकार समरथ भगवाना ॥
काल हस्ति ईश्वर तहँ देवा । करैं सुरासुर जिनकी सेवा ॥
सुभग नाग भूषण तन सोहै । चन्द्रकला अतिशय मनमोहै ॥
बायें श्री गिरिसुता विराजा । करुणारस पूरण सुर राजा ॥
इन्द्रादिक सुर जै जै करहीं । दर्शन पाय मोद मन भरहीं ॥
सुवरण मुखरी सरित सुहाई । शिवमन्दिर समीप बहिआई ॥
तहँ निमज्जि शिव दर्शन कीन्हा । करिप्रणाम चरणोदक लीन्हा ॥

प्रेम कुसुम प्रभु चरण चढ़ाई। मानस बिनती बहुत सुनाई॥
तीर्थाटन की आज्ञा मांगी। शिवसन पद्मपाद अनुरागी॥
काञ्चीपुरी पुनीत सुहाई। तहँ यतिवर पुनि पहुंचेजाई॥
दो० वृद्ध कहैं यह लोक में तरो चहै संसार।
तेहि पुरसम पावन न कोउ और मुक्ति को द्वार॥
विश्वनाथ शंकर गौरीशा। तहां बसैं त्रैलोक क्षितीशा॥
श्री गौरी उर कीन्ह निवासा। मानहुं करहिं हृदय जिज्ञासा॥
अतिप्रारब्ध होय तब पावैं। दर्शन तासु वृद्ध अस गावैं॥
करि प्रणाम तुरतहिं यतिराई। कल्लालेश भवन महँ जाई॥
आदि अन्त वर्जित श्रीनाथा। करि दर्शनअतिभयोसनाथा॥
पुण्डरीक पुर पहुँचो जाई। नृत्य करैं जहँ शिव सुखदाई॥
आदि प्रकृति श्रीगिरिजारूपा। देखहिं शिव को नृत्य अनूपा॥
दिव्यदृष्टि जिन मुनिजन पाई। जन्म मृत्यु भय भेद विहाई॥
ते सब दिन अति देखहिं जाई। नृत्य विनोद महा सुखदाई॥
दो० पद्मपदादिक भिक्षुगण करौ प्रश्न द्विज पाय।
तीरथ इहां अनूप जो होय सो देहु सुनाय॥
शङ्कर भक्तिरसिक द्विज कहई। सुनौ इहां जो तीरथ अहई॥
शिव गंगाको सुमिरण कीन्हा। सुरसरि तुरतहिं दर्शन दीन्हा॥
देवसरित की धार सुहाई। तब सों सदा बहै सुखदाई॥
शिवआज्ञा सुरसरि जो आई। शिवगंगा तेहि हेतु कहाई॥
औरहु एक हेतु मुनि कहहीं। हरलीला जे जानत अहहीं॥
ताण्डव कर्शित शिवकहँ देखी। शिवा[†]लह्यो मन प्रेम विशेखी॥
श्रमनाशन हित सुरसरिरूपा। गहिलीन्हों हिमसुता अनूपा॥
शिवा भई जो गंग सुहाई। शिवगंगा संज्ञा शुभ पाई॥
दो० गिरिजापतिशिर पर जटा तेहिपर सुरसरिधार।
नृत्यसमय महि गिरिपरे सुरध्वनि बूंद अपार॥
तेहि कारण शिवगंग तेहि कहैं विपश्चित लोक।

---

† पार्वती

यहि में मज्जन किये ते मिटैं महा अघ शोक ॥
नित नहाय शिव दर्शन करई। क्रम सों सब मनको तम हरई॥
जबहि होय निर्मल मन पावन। देखहि शङ्कर नृत्य सुहावन ॥
अतिमहिमा शिवबिन को जानै। नरजड़मतिकेहिभांतिबखानै ॥
सुनि तीरथ महिमा हर्षाई। शिव पूजे शिवगंग नहाई ॥
पुनि मुनि आगे कीन्ह पयाना। रामेश्वर दर्शन उर आना ॥
बीचहि काबेरी सरि पाई। पुलिन जासु सबभांति सुहाई ॥
पद्मनाभ जहँ कीन्ह निवासा। क्षीरसिन्धु को तजि प्रभु वासा॥
करि सरिमज्जन हरिपदध्याना। पद्मपाद हरि भक्त सुजाना ॥
बहुरि चले मारग मन दीन्हे। बहुत शिष्यमण्डन सँगलीन्हे ॥
कछुक दूरि आगे जब गयऊ। निज मातुलगृह पहुंचत भयऊ॥
बहु दिन पीछे दर्शन पावा। मातुलहृदय मोद अति छावा॥
सुनि आगमन बन्धुजन धाये। दर्शन पाय नयन जल छाये ॥
काहू देखि मोद मन भरेऊ। काहू तहां रुदन अति करेऊ ॥
ताहि देखि काहू हँसि दीन्हो। बालचरितकोउ भाषणकीन्हो ॥
सो० अति प्रमोदवश एक भये न आवै मुख वचन।
करैं सप्रेम अनेक मुनिवर की पगवन्दना ॥
तहां जुरो बहु विप्र समाजा। सब घेरे बैठे यतिराजा ॥
कह्यो बन्धुजन तब हर्षाई। बहुतदिननपर दियहुदिखाई ॥
दरशलालसा नित उर माहीं। कर्मयोग भा अबलौं नाहीं ॥
है संन्यास सकल सुख मूला। जहां न कछु संसृति दुखशूला॥
पुत्र मित्र बाधा कछु नाहीं। नहिं नृपतस्करभय मन माहीं॥
पुष्पित फलित वृक्ष दुख पावैं। तथा धनी कहँ सकल सतावैं ॥
मन कुटुम्बपालनमहँ जिनको। रजनी नींद आव नहिं तिनको॥
कहँ तीरथ कहँ देवाराधन। कहां साधु सेवा पद वन्दन ॥
सुना रहा राउर संन्यासा। आय विप्रगण कीन्ह प्रकासा ॥
यहू बात को दिन बहु गयऊ। तीरथ मिस दर्शन तव भयऊ ॥

जैसे शकुनी तरु पर जाई। बसै तहां पुनि रैनि गँवाई॥
होत प्रभात वृक्ष तजि जाई। नहिं मानै कछु विटपसगाई॥
तथा देवमन्दिर तरु छाया। बसहिं यती कछु मोह न माया॥
जैसे भ्रमर सुमनरस लेही। पादप को कछु दुख नहिं देही॥
तथा सारग्राही नित यतिवर। स्वल्प स्वल्प यांचतहै घरघर॥
यतिवर लहि वैराग्य सुहाई। आतमगति पावै सुखदाई॥
सोइ कलत्र अरु यह तन गेहा। मन संयम सुख बिन संदेहा॥
प्रेम विराग सहित हर्षाने। पुत्र सरिस हैं शिष्य सयाने॥
यह सब साज यती ढिग रहई। जग में और वस्तु का चहई॥
कामिन को कबहूं सुख नाहीं। करैं मनोरथ बहु मन माहीं॥
नारिचाह निशि वासर करहीं। क्षार मिले सुतपर मन धरहीं॥

दो० जब नहिं पावहिं होय दुख पाये होहि वियोग।
कामविवश नर को सदा सब प्रकार दुख सोग॥

है विरक्ति सब विधि सों नीकी। तासु मूल निर्मलता हीकी॥
तेहि को मूल सदा सतसङ्गा। तुम समान जे सन्त असङ्गा॥
परउपकार हेतु नित फिरहीं। लोकदृष्टि जड़रूप विचरहीं॥
नाम जाति नहिं काहू जाना। रहित भेद परिपूरण ज्ञाना॥
लोक अनुग्रह तीरथ करहीं। यथालाभ भोजन अनुसरहीं॥
तीरथ करैं न पावन हेतू। जिनके हृदय सदा वृषकेतू॥
ज्ञानप्रभाव व्यापगयो जिनको। तीरथसम चरणोदक तिनको॥
कृपा करौ कछुदिन अब रहहू। पातक दुःख हमारो दहहू॥
तव दर्शन अतिमोद बढ़ावा। चकितहृदयसबकेअसआवा॥
हैं असङ्ग जैहैं न सँदेहू। यह भावी दुख विधि जनि देहू॥

छं० मलक्लेश को है कोश जो अरु पाप को आलय महां।
पैशून्य को घर मृषाभाषण रहत है निशि दिन जहां॥
रहि व्यापि हिंसा जीवकी दुर्जनसमागम सों भरो।
यहि भांति के घरमें रहत हम नाथ हमरो तम हरो॥

दो० सुनि लोगन के बयन तब उतरु दीन्ह यतिराय।
प्रियसंयोग वियोग नित होहिं काल निज पाय॥
प्रियवियोग संगम जब होई। रहै विकाररहित बुध सोई॥
जो गृहस्थ निज धर्महि पाला। सब आश्रमकर होय भुआला॥
जब युगयाम दिवस चढ़िआवै। तृषा क्षुधा जब अधिक सतावै॥
अतिथि आय यहवचन सुनावै। क्षुधा हमारी कौन नशावै॥
जो दुख तासु निवारण करई। भूख पियास अतिथिकी हरई॥
तेहि की पुण्य न कछु कहिजाई। एकवदन किमि कहौं बुझाई॥
सांझ प्रभात हुताशन सेवा। वेद पढ़ैं पूजैं गुरु देवा॥
ब्रह्मचारि कहँ क्षुधा सतावै। गृही गेह तुरतहि सोउ आवै॥
पढ़ै सुनैं श्रुति शिखर उदारा। अथवा प्रणवमन्त्र उच्चारा॥
जठरानल व्यापहि युगयामा। सोउ चलिजाय गृहीके धामा॥
वनवासी निशिदिन तप करहीं। जेहिके अन्न उदर निजभरहीं॥
लहै अर्द्ध फल तप कर सोई। आधो तापस कहँ फल होई॥
तीरथ ब्रती गृही घर आवै। जोपै तासु सेवा मन लावै॥
देह प्रयास न कछु बनि आवै। घर बैठे तीरथ फल पावै॥
दो० गृही धनी है धन्यतर लहैं सकल धन पासु।
चोर भाव कोउ प्रीतिसों दानरीति कोउ तासु॥
कोउ तासु बलकरि धन लेहीं। काहुहि आपु कृपा करि देहीं॥
जो द्विजवर वेदज्ञ सयाना। तेहिमहँ बसहि देव जगजाना॥
करहि प्रसन्न गृही गुणवाना। तिन सबको मानहु सन्माना॥
जे स्वधर्म दृढ़ ज्ञान निधाना। सेये सब तीरथ विधि नाना॥
पर उपकार छांड़ि ब्रत नाहीं। ऐसेहु महापुरुष गृह माहीं॥
आवहिं जो सेवा बनिआवै। गृही सकल तीरथफल पावै॥
तीरथ रूप तासु गृह सोहा। गृही उदार तजै मन मोहा॥
दो० कतहुँ जायनहिंभवनतजि सबफलगृहमिलिजाहिं।
धनी धर्म्मयुत गृही लखि देव मनुज हर्षाहिं॥

दो० मूषकादि गृह में रहैं बाहिर मृगा शकुन्तु।
गो अश्वादिक जीव बहु जीवहिं सब लघुजन्तु॥
सबसों अधिक गृही मैं जानौं। सत्य कहौं नहिं कपट बखानौं॥
देह मूल पुरुषारथ साधन। अन्नमूलगावहिंतेहिश्रुतिगन॥
सब जीवन को अन्न मनोहर। धरो रहै नित गृहवासी घर॥
गृहपति शुभ तरुवरसम अहई। सबफल तेहिके आश्रयरहई॥
हितउपदेश सुनहु मन लाई। आदर सों सन्देह विहाई॥
अभ्यागत पूजा नित करहू। आदर मान तासु अनुसरहू॥
यति पूजा तव कुल उद्धरिहैं। असन्मानअनहितअतिकरिहैं॥
फलअभिलाषरहित निजधर्मा। श्रुतिवर्णित सन्ध्यादिककर्मा॥
जो करिहौ नितप्रति मनलाई। ह्वैहै मन निर्मल सुखदाई॥
छं० रागादि मन मल पंक सों सबभांति उरहमरोभरो।
जिमिबधूकुचतटहृदयपटपाटीर*सोंचहुँदिशिघिरो॥
तदपि हम सबयती यतिपति पदमजन पावनभये।
सबक्लेशहमरेक्षीणहैं नहिंजान केहि दिशिको गये॥
दो० यहि प्रकार उपदेश करि भिक्षा मातुलगेह।
करि बैठे मातुल कही वाणी सहित सनेह॥
शिष्य हाथ वर पुस्तक सोही। यह कर नाम सुनावहु मोही॥
सूत्रभाष्यटीका यह पावनि। हमहिं दिखावहुनिजमनभावनि॥
दै दीन्ही मातुल तब देखी। बुद्धि देखि सुखभयो विशेखी॥
शुचि प्रबन्धरचना उर आनी। भयो हर्ष तेहि पण्डितजानी॥
सब मत को निराश तहँ देखा। निजमत खंडितभयो विशेखा॥
रहा प्रभाकर † मत अनुसारी। ग्रन्थ देखि मनभयो दुखारी॥
यद्यपि तेहि अतिमत्सरभयऊ। ऊपर मन अभिनन्दन करेऊ॥
पद्मपाद तब कहहि सयाना। रामेश्वर चाहत हम जाना॥
ग्रन्थ भार तब गृह धरि जैहैं। तब मारग में दुख नहिं पैहैं॥
तुम कहँ जेहिविधिगोगृहप्यारे। तिमि पुस्तक हैं प्राणहमारे॥

* चन्दन † मीमांसक

दो० अस कहि पुस्तक धरि चले जबहीं श्रीपतिराय।
भावी सूचक भये तब तेहि अशकुन समुदाय॥
सो० बामूरू भुज नयन फरके सम्मुख छींक भै।
सबजानत गुणअयन कछु न गिनो अरु चलिदिये॥

तब मातुल यह निजमनआनी। ग्रन्थ रहे मम मत की हानी॥
खण्डन को मोमें बल नाहीं। तेहिते यह आवै मन माहीं॥
ग्रन्थ जराय करब मैं क्षारा। तब ह्वैहौं गुरुमत रखवारा॥
पुस्तकसह गृहआगिलगैहौं। यहि बिधिकबहुँअयश नहिंपैहौं॥
गुरुमत रहै होहु गृह हानी। यह निजमन में निश्चयठानी॥
यह विचारि आपुहि गृहजारा। लगीअग्नियह कीन्हिपुकारा॥
लोकप्रकट यह सब जगजाना। तैसोइ माधव कीन्ह बखाना॥
नतरु होय करतहि जो पापा। वक्तहि तासुदुगुन अघव्यापा॥
पद्मपाद चलि पहुँचत भयऊ। जहां फुल्लमुनि आश्रमरहेऊ॥
सिंधुतीर धरि बाण शरासन। बैठे रघुवर डारि कुशासन॥
तहां बैठि प्रभु कीन्ह विचारा। जाहुँ कौनि विधि सागरपारा॥
वनचर शाखामृग समुदाई। जलमें इनकर बल न बसाई॥

दो० ऐसो करैं विचार तहँ देखो अधिक प्रकाश।
व्यापिरह्यो यहि जगतको जेहिलखि होतहुलाश॥

शीतल तेज महा सुखदाई। आवत चलो राम समुहाई॥
देखि लोग सब ह्वैगे ठाढ़े। सबकेमन अतिअचरजबाढ़े॥
तेज मध्य शुभ युगल शरीरा। शिवगिरिजासमदम्पतिधीरा॥
लोपामुद्रा सहित मुनीशा। घटसम्भव लखिरामकपीशा॥
आदरभावसहित प्रभु लीन्हा। अर्घादिक दै आसन दीन्हा॥
जबहिं राम मुनिवरकहँ देखा। खेद तजो भा हर्ष विशेखा॥
साधुदरश कर सहज सुभावा। होतहि सबपरिताप मिटावा॥
यथा भानु के होत प्रकाशा। तुरतहि होय महातमनाशा॥
सपत्नीक करिकै मुनि पूजा। शिवाशम्भु सम भाव न दूजा॥

शिर सों दुहुकहँ कीन्ह प्रणामा। कछुक देर चुप साधी रामा ॥
सीतापति पुनि वचन सुनावा। तुमहिंदेखि मैं अतिसुखपावा॥
तुम हमकहँ जिमि पितु नरनाहा। मिले लही दुखसागरथाहा ॥
अब ह्वैगे मम पूरण कामा। जो देखे तव पद सुखधामा ॥

दो० जबसों दिनकरवंश यह जग में भयो अनूप।
तबसों मुनिवर आजुलगि मम समान दुखरूप ॥

भयो नहीं भावी पुनि नाहीं। कारण सुनहु तात मोहिंपाहीं॥
तिलकसमाज भयो सब नासा। पुनि पायो दारुण वनवासा ॥
दण्डकवननिवास हम कीन्हा। मायामृग प्रबोध हरि लीन्हा ॥
पुनि रावण सीता लै भागा। वनअशोकमहँबसहिसुभागा॥
शोकवियोगदुखित सब गाता। रिपुगणमाहिंपरी बिलखाता ॥
तरि समुद्र सह ऋक्ष कपीशा। लोकदुखद मारहुँ दशशीशा ॥
जेहिविधिजनकसुतामिलिजाई। नाथ शोधि सोइ कहहु उपाई ॥
तुम समान प्रभु मम उपकारी। नहिं देखौं कोउ निजदुखहारी॥
मुनिवर कह्यो वचन ममसुनहू। रामशोक लावहु जनि मनहू ॥
उभयवंश* महँ भूप घनेरे। जिन दुख पाये जग बहुतेरे ॥
काल पाय करि विमल उपाई। सुखी भये सब शोक विहाई ॥
दशरथसुवन धनुर्द्धर नाथा। तथा अनुज विजयी तव साथा॥

दो० वानरयूथप कोटि बहु तव सहाय रघुनाथ ।
मति भाषौ ऐसे वचन जैसे कहै अनाथ ॥

तव सहाय संपाति बहुतेरी। सुनि उपदेश गिरा पुनि मेरी ॥
बारानिधि दुस्तर मति जानौ। गोपदसम अपने उर आनौ ॥
प्रथमहि पान कीन्ह मैं सागर। बहुरि करहुँ जो कहहुगुणाकर॥
जाहु सुखेन तात तुम लंका। मनमें कछु आनहु जनि शंका॥
यहिविधिममकीरति जगमाहीं। दशरथनंदन तब यश नाहीं ॥
बांधहु सेतु जाहु पुनि पारा। तब ह्वैहै तव यश संसारा ॥
जो छल करि हरिलैगा सीता। मारहु दुष्टभुवन विपरीता ॥

* सूर्य्य, चन्द्र

जगपावनि तव कीरति कैहै। जग में हर्ष सहित सब गैहै॥
यहिप्रकार मुनिवर मत पावा। रामचन्द्र तहँ सेतु बँधावा॥
जेहि मग जाइ दशानन मारा। सीता लै निजपुर पगुधारा॥
सेतुबन्ध तीरथ श्रुति गायो। पद्मपाद तहँ जाय नहायो॥
दो० रामेश्वर वन्दन कियो कह्यो महातम गाय।
सब की श्रद्धाबढ़नहित शिष्यन को समुझाय॥
रामेश्वर महिमा मुनि गाई। कोउ पण्डित बोल्यो हर्षाई॥
रामेश्वर कर करहु समासा। तीनिभांतितिनकीन्हप्रकासा॥
लिङ्ग प्रतिष्ठा जबहिं कराई। नाम विचारि धरा रघुराई॥
राम केर ईश्वर जो होई। रामेश्वर कहलावै सोई॥
यहिप्रकार तत्पुरुष समासा। रामचन्द्र यह अर्थ प्रकासा॥
रामचन्द्र हैं ईश्वर जिनको। रामेश्वर कहिये नित तिनको॥
ऐसो तब बहुब्रीहि समासा। शिवनिजमुखसनकीन्हप्रकासा॥
जोई राम पुनि ईश्वर सोई। नाम तासु रामेश्वर होई॥
इन्द्रादिक जे देव सुजाना। कियो कर्मधारय तिन गाना॥
सुनि समास बुधजन सुखपावा। बहु सराहि तेहिमाथ नवावा॥
दो० पद्मपाद कछु दिन तहां कीन्ह सप्रेम निवास।
अस्तुति पूजा करैं सब बहुविधि तासु सुपास॥
शिष्य सहित लौटे हर्षाई। मन निर्मल सबक्षेत्र नहाई॥
मातुलकुल महँ पहुँचे जाई। पुस्तकदाह सुनौ दुखदाई॥
प्रथमहि कछुक खेद मनपायो। करिविचार धीरज उरलायो॥
मातुल गेह दाह सुधि पाई। पुस्तकभूलि कृपा उर छाई॥
मातुल तब यह वचन सुनायो। कपटसनेह प्रकट दर्शायो॥
तुम विश्वास कीन्ह हित जानी। पुस्तकभार धरे गृह आनी॥
भे प्रमादवश पावक दाहा। सोकछु भयोजोविधिनेचाहा॥
घरको शोच मोहिं कछु नाहीं। पुस्तकशोचअधिकमनमाहीं॥
पद्मपाद बोल्यो समुझाई। गै पुस्तक मम बुद्धि न जाई॥

असकहिकीन्हों बहुरिअरम्भा। मातुल को तब भयो अचम्भा॥

दो० बुद्धि देखि भयवशलखो कछु उपाय जब नाहिं।
बुद्धिविनाशक वस्तु कछु मेली भोजन माहिं॥

यतिवर दिव्यशक्ति रहि नाहीं। कहत लोग धरणीतल माहीं॥
यही बीच पहुंचे तहँ आई। पद्मपाद सँगके यतिराई॥
पद्मपाद जिमि तीरथ करहीं। ते सब ताहि प्रकार विचरहीं॥
आश्रम महँ छोटे गुरु भाई। पद्मपाद कहँ लखि हर्षाई॥
सबन प्रणाम यथावत कीन्हा। पद्मपाद मुनि आशिष दीन्हा॥
मिलत परस्पर बाढ़ी प्रीती। कुशलप्रश्न पूंछी जस रीती॥
श्रीशङ्कर वाणी अति शोभा। जेहि सुनि शेषादिक मनक्षोभा॥
तिनगुरुकेमन चरण विराजै। जेहिलखिनवपल्लवकविलाजै॥
धर्मादिक वह फल के दाता। तथा अविद्यानाश विधाता॥

दो० शिष्यन की वर मंडली तहँ सब भांति विराज।
निज विचारिभिक्षादितजि जिन्हैं न दूसरकाज॥

तीरथव्रतधारी तहँ द्विजवर। मिलोशंभुशिष्यनकहँश्रुतिधर॥
श्रीगुरुकुशलसुखदतेहिकहेऊ। सुनतसकलउरआनँद भयऊ॥
गुरुवियोगअतिनहिंसहिजाई। खबरि पायचलिभे अकुलाई॥
जानितहां निजगुरु सुखदाई। केरलदेश दीख तिन जाई॥
केर महीरुह जहँ नभगामी। तहँ विचरहिं श्रीशङ्कर स्वामी॥
निज शिष्यन की बाट निहारैं। महाविष्णु मन्दिर पगुधारैं॥
तहां सप्रेम हरिहि शिर नावैं। यहिप्रकार बहु विनय सुनावैं॥
अकथनीय राउर प्रभु माया। रचहु ताहिसन भुवननिकाया॥
जड़चेतन सबजगत सँवारहु। सृष्टिरूप लीला विस्तारहु॥
पूरणकाम नाथ सुखधामा। जगसर्जनसों नहिं कछु कामा॥
सृष्टि रजोगुण गहि तुमकरहू। तथा तमोगुणसों सब हरहू॥
सत्त्ववृत्ति गहि सब जगरक्षा। लीलाहित न औरकछु इच्छा॥
विधि हरिहर सबनाम तुम्हारे। सकलदेव तुमसों नहिं न्यारे॥

बहुघट जलपूरण माहिमाहीं । सब महँ सम सवितापरिछाहीं ॥
एक रूप तव परम अनूपा । सोइ सब विश्वभास बहुरूपा ॥
यहिविधि हरिमन्दिरयतिराई । प्रभु की विनयकरहिंमनलाई ॥
दो० ताहीक्षण सब शिष्यगण शिवढिग पहुँचेजाय ।
चिर वियोग सों दुखी सब हर्षे दर्शन पाय ॥
करि प्रणाम बहुविनय सुनाई । सुखी भये गुरुआशिष पाई ॥
कुशल प्रश्न पूंछी यतिनाथा । मृदुलगिरा सब किये सनाथा ॥
पंकजचरण कही तब वानी । सह गद्गद करुणारससानी ॥
प्रभु मैं रंगनाथ जब गयऊं । पद्मनयन प्रति लौटत भयऊं ॥
पथि मातुलगृह आवतभयऊ । करिअतिविनयमोहिंलैगयऊ ॥
भेदवादि नृप यद्यपि रहेऊ । तदपि मोह मातुलको भयऊ ॥
प्रथम प्रेमहम निजउरआना । विषमभाव तेहिसोंनहिंमाना ॥
निजकृतटीका ताहि सुनाई । सुनिभैताहिसो अतिदुखदाई ॥
भयो परस्पर बहुत विवादा । थापत खंडत बढ़ो विषादा ॥
चक्रादिक मुद्रा तन धारी । तिनके मुख की ढांपनहारी ॥
नाथ गिरा शुभ वर्मसमाना । तेहिसों मैं रक्षित भगवाना ॥
दो० ध्वस्त कियेजेहि तर्कगुरु*कपिल तन्त्र जगमाहिं ।
वेदसार रस सुधायुत जेहि सम दूसरि नाहिं ॥
असतव गिराप्रबलदल पाई । विजय भई मम नाथ सुहाई ॥
नाथ गिरा दृढ़ वर्म समाना । तेहिसन वर्मित परम सुजाना ॥
सो कणाद सेना मुखमाहीं । खड्ग युद्ध में हारत नाहीं ॥
गौतमगुण थलमहँ चलिजावै । शस्त्रयुद्ध सो श्रम नहिं पावै ॥
तथाप्रबल कापिल दलमाहीं । यष्टी समर खेद तेहि नाहीं ॥
सो मातुल जब हमसन हारा । यथा प्रथम कीन्ही अनुहारा ॥
प्रबलद्वेष निजहृदय छिपावा । मम आदर अतिशय दर्शावा ॥
तासुभवन धरि पुस्तकभारा । गवन्यो रामेश्वर दरबारा ॥
मातुलगृह पावक निशिजारा । भई नाथ टीका जरि क्षारा ॥

*प्रभाकर

लोग कहैं गृह आपु जरावा। निजमतखण्डनतेहिनसुहावा॥

दो० बुद्धिमन्द मम होनहित पुनिविष भोजनमाहिं।
डारो तब सों नाथ मम बुद्धिप्रकाश सो नाहिं॥
श्रीपदकिङ्कर की दशा विषम भई यतिराज।
तव भक्तनको उचित नहिं ऐसो दुःखसमाज॥

राउर की जो भाष्य सुहाई। वृत्ति रुचिर मैं तासु बनाई॥
अतिशय निर्मल युक्ति उदारा। अहह नाथ सो जरि भै क्षारा॥
बहुधा यत्न कीन्ह तेहि माहीं। वैसी युक्ति फुरति अब नाहीं॥
कृपाजलधि तव चरण उदारा। शरण गही जिन तजि संसारा॥
यद्यपि प्रथम ते दीन दुखारी। सर्वेश्वर पदवी अब भारी॥
केहिकेहिलही न शिवजगमाहीं। दीनबन्धु कहिये मोहिंपाहीं॥
केहि अपराध दशा यह मोरी। भई नाथ पूछौं कर जोरी॥
पापअंश जनि कह्यो गोसांई। तासु अवधि श्रीगुरु सेवकाई॥

सो० सुनि करुणामय बयन कृपापूर पूरण हृदय।
वचन सुधारस अयन मोहहरण बोलतभये॥

दुर्निवार विषफल सम ताता। विषमकर्मफलसकलविधाता॥
होनहार प्रथमहि हम जानी। सो सुरेशप्रति तबहिं बखानी॥
अब तुम हृदय खेद परिहरहू। जो मैं कहहुँ तुरत सोइ करहू॥
जब तुम टीका प्रथम बनाई। प्रेम सहित सो मोहिं सुनाई॥
पंचपदी कीन्हों उर गेहू। कहौं तात सो तुम लिखिलेहू॥
यहिविधि समाधान करि शंकर। सो प्रबन्ध भाष्यो करुणाकर॥
सकल ग्रन्थ क्रम जान न पावा। यथाप्रथममुनिनाथ लिखावा॥
त्रिभुवनगुरु सब विद्या मूला। महापुरुष नाशक सबशूला॥
ज्ञानशक्ति अव्याहत जासू। यह न होयकछुअचरजतासू॥
वेगसहित जब पुनि लिखिपाई। बढ़ो हृदय आनँद अधिकाई॥
हर्ष वेग अतिशय उर बाढ़ा। गुरुयश कियो गान ह्वै ठाढ़ा॥
प्रेमसजल लोचन हँसिदीन्हा। देहखबरि नहिंनरतनकीन्हा॥

यह सुनि केरलनृप तहँ आवा । राजशिरोमणि*नामसुहावा ॥
कविताकुशल चतुर जगमाहीं । जेहिसमान नृपवर कोउ नाहीं ॥
पद किरीट धरि वन्दन कीन्हा ।विनयसुनायगुरुहिसुखदीन्हा॥

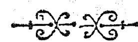
दो० शङ्कर पूंछा कहौ नृप तव कृत नाटक तीन ।
भे प्रसिद्ध जगमें कि नहिं तब यह उत्तरदीन ॥

भा प्रमादवश अनल प्रचारा । भये ग्रन्थ तीनहु जरि छारा ॥
श्रीशङ्कर नाटक पढ़ि दीन्हे । विस्मयसहितनृपतिलिखिलीन्हे॥
करि प्रणाम बोला नरपाला । कछु आज्ञा मोहिं देहु कृपाला ॥
नृपतिविनयसुनिकह्योयतिराजा । कालटिमों जो विप्रसमाजा ॥
रहा न विप्रकर्म्म अधिकारा । भयो पापवश शाप हमारा ॥
जो तुम मम आज्ञा अनुसरहू । तुमहूं तिनहिं तथा विधि करहू॥
पञ्चपदी पङ्कज पद पाई । अतिसुखलह्योवरणिनहिंजाई॥
नृपतिराजशेखर पुनि आयो । प्रभुकहँनिजअभिलाषसुनायो॥

दो० शङ्करमुख सों पुनि लहे नाटक त्रय नरपाल ।
बूड़त हर्ष समुद्र महँ निजगृह गयो भुआल ॥

सो० करै अहर्निश ध्यान श्रीशङ्करयुगचरण को ।
मन क्रम वचन सुजान शंभुप्रेममहँ मगननित ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री७स्वामिरामकृष्णभारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचिते श्रीशङ्करदिग्विजये श्रीपद्मपादतीर्थयात्रावर्णनपरश्चतुर्दशस्सर्गः १४॥



श्लो० ॥ परीक्षिकप्रलापौघध्वान्तंधिक्कारशालिने । दिनेशाय सुरेशादिपूज्यपादाय ते नमः ॥ १ ॥

अथ पञ्चदशः ॥

सो० श्रीशङ्कर सुखधाम मंगलायतन सुयश धर ।
जासु कल्पतरु नाम सुमिरत सबसुख लहत जन ॥

* राजशेखर

दो० शिष्यसहस्रन सहित प्रभु दिशाविजय मनकीन्ह।
नृपति सुधन्वा वीर वर ताहू को सँग लीन्ह॥

प्रथमहिं मध्यार्जुन शिवधामा। जाय कीन शंकर विश्रामा॥
विधिवत करि पूजन यतिराई। करिप्रणाम बहुविनय सुनाई॥
फिरशिवसन शंकर असभाखा। नाथगिरासबश्रुतिअरुशाखा॥
तुम सर्वज्ञ पुरारि कृपाला। संशय सब को हरहु दयाला॥
युग मत द्वैताऽद्वैत दिखाहीं। निगमागम आशयकेहिमाहीं॥
सुनि सोवचनप्रकटशिवभयऊ। मेघ गँभीर गिरा अस कहेऊ॥
है अद्वैत सत्य श्रुति माहीं। द्वैत माहिं निगमाशय नाहीं॥
सत्य सत्य सांचो अद्वैता। सुनिममवचनतजहुसबद्वैता॥
असकहि शिव भे अन्तर्द्धाना। सबलोगनसुनिअचरजमाना॥
मध्यार्जुन के भक्त घनेरे। तासु देश वासी बहुतेरे॥
तेहि थल महँ जे जुरे सयाने। सुनिशिववचन सकल हर्षाने॥
स्वीकृत करि शंकर सेवकाई। पञ्च देव पूजा सरसाई॥
पञ्च यज्ञ वैदिक आचारा। उर निश्चय अद्वैत उदारा॥
सबकर यहिविधिकरिदृढ़ज्ञाना। रामेश्वर को कीन्ह पयाना॥

दो० प्रथम सैन जिमि शंभुसँग नहिं असंख्य गिनिजाय।
शिष्य भीर यतिराज सह तिमि अपार दर्शाय॥

तुला भवानी धाम मनोहर। विजय करत पहुँचे जब शंकर॥
शाक्ति उपासक तहँ बहु आये। गुरुपद कमलहि शीश नवाये॥
शाक्ति उपासनमिष करिलीन्हा। निशिदिनमद्यमेवामनदीन्हा॥
नाथ सुनो हमरो मत सुन्दर। शाक्तिभजनतिहुँलोकउजागर॥
आदिशक्ति जेहि जगउपजावा। जासुरूप मन वचन न आवा॥
निज जन हेतु भई साकारा। गिरिजादिकस्वरूपतेहिधारा॥
हेम चरण हम तासु बनाये। निजभुज कण्ठ धरैं मनभाये॥
जीवन्मुक्त फिरैं जग माहीं। बिन विद्योपासन सुख नाहीं॥
भजिये ताहि सदा मन बानी। विद्या ते श्रुति मुक्ति बखानी॥

दो० अकारादि जेहिभांति सों प्रणव अंग बुध जान।
तिमि लक्ष्म्यादिक तासु की जानहु कला *सुजान ॥
तथा चन्द्रिका चन्द्र की उद्बोधक जग माहिं।
ईश्वरबोधक तेहि सरिस कोउ उपाय प्रभु नाहिं ॥
रुद्रहि अतिप्रिय शक्ति सो सबप्रकार अभिराम।
श्री स्वाधीन सुवल्लभा तेहिकारण भा नाम ॥

जग वन्दित शंकर प्रिय जानी। भजहिं सदाहम उमाभवानी ॥
यतिवर तासु चिह्न तुम धरहू। मुक्तिप्रदा सेवा अनुसरहू ॥
गुरु कह्यो सत्यवचन तुम कहहू। यदपि हमार सिखावन गहहू ॥
ब्रह्मज्ञान बिनु मुक्ति न होई। कहैं वेद समुझो तुम सोई ॥
जेहि कहँ आदिशक्ति तुम जाना। पुरुष तासु पर वेद बखाना ॥
ब्रह्म जीव बिच नहिं कछु भेदा। एक भाव वरणैं सब वेदा ॥
सोई तुम करि यत्न विचारौ। मुक्ति न और भांति निर्धारौ ॥
विद्यारूप देवि तुम भाषी। जेहिके हौ मनक्रमअभिलाषी ॥
भजन तासु मन निर्मल करही। जेहिसोंनिजस्वरूपअनुसरही ॥
तेहिते कुंकुम तिलक विहाई। पाद चिह्न सब दूरि बहाई ॥
सोहमास्मि भावहु मनमाहीं। मुक्ति लहहुगे संशय नाहीं ॥
सुनि गुरुवचन चिह्नकरि दूरी। अद्वय मत श्रद्धा भै भूरी ॥
शिवसेवक भे मन क्रम बानी। पञ्च देव पूजा रति मानी ॥
संध्या स्नान करन सब लागे। एक भाव रुचि मन अनुरागे ॥

दो० पुनि लक्ष्मी के भक्त बहु आय परम गुरु पास।
विनयप्रमाण सहित तिन निजमतकियोप्रकास ॥

सब फलदायक सब की माता। आदिप्रकृतिसबजगकीत्राता ॥
अकथनीय महिमा अतिभारी। ब्रह्मादिक जननी सुखकारी ॥
तासु भजन जे तन मन करहीं। पंकजाक्ष † माला उर धरहीं ॥
युगभुज कमलाचिह्न जे धरहीं। कुंकुमातिलकभालमहँ करहीं ॥
सकलेश्वरी बसै उर जिनके। करतल मुक्ति विराजै तिनके ॥

---

* अंश † कमलाक्ष ॥

आपहु तासु भजन अनुसरहू। मुक्तिचाह जो तुम नित करहू ॥
गुरुकह्यो अद्भुत वचनतुम्हारा। सुनहु तत्त्व उपदेश हमारा ॥
ईश छांड़ि कर्त्ता जगकेरो। कोउनहिंसुनहुसिखावनमेरो ॥
अद्वितीय अरु एक अनूपा। सत्यबोध आनन्द स्वरूपा ॥
आतम तत्त्वरूप कहि गावा। बहुप्रकार श्रुतिगण दर्शावा ॥
तासु अधीन प्रकृति नित रहई। मुक्तिप्रदत्व ताहि नहिं घटई ॥
अहंब्रह्म ध्यावहि भय त्यागी। करतल मुक्ति ताहि बिनमांगी ॥
चिह्न छांड़ि अद्वय मत गहहू। मुक्तिभाग तुम निश्चित रहहू ॥
शिष्य भाव करि अङ्गीकारा। गहतभये सब श्रुति आचारा ॥
शारद भक्त तहां चलि आये। पुस्तक तिलकचिह्न तनछाये ॥
दो० करि प्रणाम बोले सकल वेद नित्य जगजान।
तेहिते शारद नित्य है सब जग परम निदान ॥
शारद ब्रह्मादिक तनु धारी। सृजै हरै सोई रखवारी ॥
गुणातीत वपु रहित अनूपा। भजन योग सोइशक्ति अनूपा ॥
बहुश्रुतिसम्मत मम मत एहा। ग्रहण करौ तुम बिन सन्देहा ॥
तब बोले शङ्कर सुखदाई। वेद नित्यता कहँ सुनि पाई ॥
जेहि के श्वास वेद सब जाये। वेद जन्म श्रुति प्रकट दिखाये ॥
जासु जन्म सो नित्य न होई। न्याय प्रकट जानौ सब कोई ॥
रहै शारदा विधि मुख माहीं। नित्य बहू चतुरानन नाहीं ॥
मन वागादि रहित सुखधामा। सो अनादि भूमा अभिरामा ॥
तेहि जाने बिन मुक्ति न होई। कह्यो श्रुति और पंथनहिं कोई ॥
शुद्ध अद्वैत परायण होहू। त्याग करो निजहृदय विमोहू ॥
दो० आनँदघन के ज्ञानते ह्वैहौ मुक्तिस्वरूप।
यह सुनि प्रभु के शिष्यभे तजि निजहठ दुखरूप ॥
वामाचार परायण आये। सबहुन गुरु को माथ नवाये ॥
ज्ञानरूप जानो तुम नाहीं। वृथा वेष धारो जग माहीं ॥
बन्ध्या पुत्र सरस जो ज्ञाना। अस अद्वैत ज्ञान मन माना ॥

आदि शक्ति जेहि जग उपजावा। महिमा कोउ जग जानि न पावा॥
रचै हरै ब्रह्माण्ड करोरी। जेहि बिन ईशहु शक्ति न थोरी॥
तासु चरण जेहि जेहि रति मानी। तिनके करतल मुक्ति बखानी॥
जो अव्यक्त विमर्श कहावा। जेहिकर भृग्वादिक यश गावा॥
तासु भजन जिन जिन सिधि पाई। तिन्हैं न विधि निषेध दुखदाई॥
तेहि कारण तुम सकल विहाई। विद्या भजन करहु मन लाई॥
इत्यादिक वाणी जब कहेऊ। तब श्री शंकर उत्तर दयऊ॥

दो० जेहि विमर्श तुम कहत हौ सो आतम न कहाय।
आतम ते व्यतिरिक्त को श्रुति निषेध दर्शाय॥

श्रुतिहि प्रकृति बहुरूप बखानी। तेहि ते परे पुरुष कहैं ज्ञानी॥
सोइ भूमा प्रभु जानन* योगा। जाहि मुमुक्षु भजहिं तजि भोगा॥
सुरापान आदिक तुम कीन्हा। भूसुर कर्म धर्म तजि दीन्हा॥
भृगुमुनि कीन्हौं पाद प्रहारा। हरिको तुम न जाय क्यों गारा॥
श्रीकुम्भज सागर कृत पाना। तुमहुँ जाय सोइ करौ सुजाना॥
प्रायश्चित्त मूढ़ करु जाई। भ्रष्ट भये द्विज धर्म विहाई॥
यह सुनि गुरुपद तिन गहि लीन्हे। प्रायश्चित्त यथाविधि कीन्हे॥
साधु वृत्ति गहि गुरुपहँ आये। मन अद्वैत निरत हर्षाये॥
पञ्च देव पूजा मन लाई। शिष्य भये सन्देह विहाई॥

दो० यहि विधि शक्ति उपासकन नाथ निरुत्तर कीन्ह।
धर्म सेतु बहु युक्ति सों जनहित प्रभु करि दीन्ह॥
तुला भवानी तीर की कथा कही मैं गाय।
रामेश्वर के निकट को चरित कहौं मन लाय॥

रामेश्वर दर्शन जब पाये। शिष्य सहित मुनिवर हर्षाये॥
रामचन्द्र थापित शिवलिंगा। दर्शन होत करै भव भंगा॥
कामेश्वरि बायें दिशि राजै। इन्द्र नीलमणि मुकुट विराजै॥
श्रीशंकर गंगाजल पावन। बिल्वपत्र अरु कमल सुहावन॥
वन संभव फल फूल सुहाये। प्रेम सहित हर शीश चढ़ाये॥

---

* लोहितादि॥

युगलमास तहँ कीन्ह निवासा। गुरु आगम सब और प्रकासा॥
अद्वय द्रोहि शैव १ तहँ आये। द्वौ भुजालिंग चिह्न छविछाये॥
शूल चिह्न अंकित वर भाला। रौद्र २ नाम अति वेष कराला॥
माथे लिंग चिह्न छवि छावा। द्वौ भुज डमरू अङ्क सुहावा॥
उग्र ३ कहावैं ते जगमाहीं। जंगम ४ चिह्न सुनो मोहिं पाहीं॥
उर त्रिशूल शिर लिंग विराजा। कहौं पाशुपत ५ के अब साजा॥
भाल हृदय भुज नाभि सुहाये। तप्त त्रिशूल अङ्क छवि पाये॥
पांच भेद पशुपति मत धारी। करि प्रणाम यह गिरा उचारी॥
शम्भु चिह्न गहिकै सब काहू। सेवनीय शिव सहित उछाहू॥
कृष्ण पीत वपु रुद्र महेशा। विरूपाक्ष श्रुतिगण उपदेशा॥
एक बार देवन प्रति शंकर। आपु कियो उपदेश शुभंकर॥
दो० आदि अन्त अरु मध्यमहँ ठीक देहु मन माहिं।
मोहिं छांड़ि हे देववर जगदीश्वर कोउ नाहिं॥
तेहि कारण शिव हैं जगकर्ता। भर्ता समय पाय संहर्ता॥
वासुदेव नारायण शंकर। गुणाकृत शम्भु नाम सब सुंदर॥
सृष्टिकाल धाता सोइ गायो। पालनसमय रमेश कहायो॥
सब दुख तथा सृष्टि संहारा। किये भयो हर नाम उदारा॥
कृष्णवचन सुनि परम अनूपा। रुद्र मध्य शंकर सम रूपा॥
दुर्वासाप्रति शिव पुनि भाषा। हमसनसुनहुसहितअभिलाषा॥
मैं अक्षर कर्ता सब केरा। विधिहरिममकृत लोकघनेरा॥
सबकर कारण पुरुष पुराना। इच्छा शक्ति मोरि बलवाना॥
प्रथमहिं महत्तत्त्व उपजावै। सो पुनि सत रज तम प्रकटावै॥
ग्यारह रुद्र प्रकट हम कीन्हे। गुण अनुरूप काज तिन दीन्हे॥
राजस सर्जनविधि अनुसरहीं। सतप्रधान जग पालन करहीं॥
प्रलयेश्वर भे तमगुणधारी। सकलमुख्य विधि तथा मुरारी॥
और रुद्र इनके वश रहहीं। तासुविभूतिसकलसुरअहहीं॥
भयो चराचर सब यहि भांती। प्रकटी लोक चतुर्दश पांती॥

प्रलयकाल मो महँ लय होई। हौं अनन्त मोहिं जान न कोई॥
शिव पूजा जे तन मन करहीं। पञ्चाक्षरी जाप अनुसरहीं॥
दो० रहहिं भूति रुद्राक्ष युत करहिं सदा मम ध्यान।
ते नर पावन मुक्ति के भागी परम सुजान॥
इमि दुर्वासा सुनि शिव बानी। हर की भक्ति परमरति मानी॥
शंकर परब्रह्म जगदीशा। सेवायोग कृपाल गिरीशा॥
सवितादिक गृह जासु प्रकाशा। करहिंजगतभासितनिजभाशा॥
तासु प्रकाशमान सब होई। तेहि बिन और भास नहिंकोई॥
जग कारण शिव वेद बखाना। कोउ कर्महिं कारण पहिंचाना॥
कर्म कह्यो जड़ ग्रन्थन माहीं। ईश विना फलप्रद सो नाहीं॥
तेहि कारण सब देव विहाई। शिव पद सेवैं चिह्न बनाई॥
सुनि असवचन शंभुतब बोले। तासु पक्ष परिहार अमोले॥
थिरलय पालन शिव सबकरहीं। ब्रह्मादिक स्वरूप सोइ धरहीं॥
मम अभिमत करिहैं हम भूषण। सुनौ जो हैं तवमत महँदूषण॥
तप्त चिह्न धारण नहिं करहू। यह निर्मूल धर्म्म परिहरहू॥
सकल देवमय विप्र शरीरा। योगन तासु ताप मतिधीरा॥
दो० पद नख सों लै शिखालौं देव पितर कर वास।
तृप्त होहिं द्विज देह महँ ते सब पाय निवास॥
सो० ब्रह्माकह्यो सुनाय अरुणकेतु प्रति यह वचन।
वेदहु दीन जनाय सो तुम सों वर्णन करौं॥
विप्र देह जे देव विराजैं। तप्त भये तुरतहि सब भाजैं॥
शाप देइ सुर जाहिं पराई। तब सों विप्र पतित ह्वै जाई॥
तप्त चिह्न बिन व्याधि बनावैं। जो द्विज कबहुँ दृष्टितर आवैं॥
तुरत सचैल करैं सुस्नाना। अथवा सविता दरश बखाना॥
निन्दित भेद उपासन वेदा। मिटै न भवसम्भव सब खेदा॥
ज्ञानविना नहिं मुक्ति बखानी। ब्रह्मनिष्ठ गुरुबिन नहिंज्ञानी॥
सकल हृदय वासी दुर्दर्शा। मन वाणीकर होय न पर्शा॥

निज स्वरूप ऐसो जेहि जाना। हर्ष शोक सो तजै सयाना ॥
दो० वेद पढ़न पाठन मिलै नहिं आतम सुखरूप।
बहुश्रुत पुनि जानै नहीं बुधि किमि लखै अनूप ॥
मन क्रम सों जब तत्पर होई। आपुहि आप फुरै तब सोई ॥
सब देहन बिन देह निवासा। नश्वर तनुगत होय न नासा ॥
अस आतम विभुरूप विचारी। तीर न आव लोक दुखभारी ॥
सकल व्योम जो चर्म समाना। धरि ऐहैं जब लोग सुजाना ॥
मुक्तिहु देव ज्ञान बिन पैहैं। भवदुख*कोबिनश्रमहिमिटैहैं ॥
तेहि कारण पर विद्या गहहू। गुरु वर कृपा मोह सबदहहू ॥
अमृत अभेद रूप कर पाना। तृप्त होहु निज तजिअज्ञाना ॥
रहा एक तिन में गुण ग्रामा। जेहि विद्वेष वीर अस नामा ॥
लिंग चिह्न धरि मध्य प्रधाना। परमचतुरअतिशयगुणवाना ॥
गुरु मुख कमल सुनी यह बानी। श्रुतिनयनिपुणसुधारससानी ॥
भा प्रसन्न मन अति अनुरागा। यहिविधिविनयसुनावनलागा ॥
सो० शरण गही मैं नाथ भव आशीविष डसित तनु।
मैं सब भांति सनाथ वेद गिरा सुनि नाथ मुख ॥
हौ जग पितु शिव रूप नष्ट भयो सब भेद मम।
तुम फल परम अनूप महादेव के भजन के ॥
तुम प्रभु अद्वैतामृत दाता। शिवते अधिक विश्वके त्राता ॥
अस्तुति करि चरणोदक लीन्हा ॥ निजकुलदेशजननसिखदीन्हा ॥
अद्वय मत घर सबहि कराई। सुख पायो सन्देह बिहाई ॥
और शैव बोले करि रोषा। प्रकट करैं जनु आपन दोषा ॥
को तुम कपट वेष धरि आये। मायामय निजवचन सुनाये ॥
भ्रष्ट कियो यह शुभमत धारी। सुनहु सत्य यह गिरा हमारी ॥
विष्णुभक्त द्विज वर ते पावन। तेहिसे शिवजनपरमसुहावन ॥
नारद से ब्रह्मा यह भाषा। जिमिआरूढ़यतनअभिलाषा ॥
करहिं तथा यह मूरुख कीन्हा। वृथालाप तुम्हरो सुनिलीन्हा ॥

* लपेटलैंगे ॥

स्मृति श्रुति पुराण मत† एहा । शिवसमनहिंकोउबिनसंदेहा ॥
श्यामा जासु शक्ति अभिरामा । तथा तासु माहेश्वरि नामा ॥
तासु अंश लक्ष्म्यादि भवानी । शम्भुअंश हरिविधिवरदानी ॥
शिवरहस्यमहँ शिव जगकारन । यतिवरकहे न हरिचतुरानन ॥
रुद्र चिह्न जे धारण करहीं । शिव स्वरूप ह्वै ते भवतरहीं ॥
गुरुदारागम मदिरा पाना । ब्रह्मघात अरु स्तेय❀विधाना ॥
इन पापिन की संगति करई । पञ्च महापातक अनुसरई ॥
जो विभूति नित अंग लगावै । तथा भस्म की शयन बनावै ॥
महादेव ध्यावै मन वाणी । सकल पाप सों छूटहिप्राणी ॥

दो० अतिशय पुण्य सहाय जब शम्भु भक्ति तब होय ।
श्री पशुपति पद प्रेमसों पातक रहै न कोय ॥

शिवगीता महँ शिवकहि राखा । नहिं जानौ हमरी यह भाखा ॥
रुद्राभरण महातम गायो । शिव दीक्षा प्रभाव दर्शायो ॥
सहसनाम शिव को अभिरामा । जेहि को वेदसार शुभनामा ॥
यहि विधि सहज जपै हरनामा । सो शिवरूप पाव शिवधामा ॥
भस्मादिक महिमा बहु गाई । एकवदनकेहिविधिकहिजाई ॥
नहिं अतप्त तनु की गतिहोई ।श्रुतिनिजमुखवरणयोपुनिसोई ॥
मुनिवर कह्यो न पावकतापा । श्रुति गायो नाशक संतापा ॥
कृच्छ्रादिक चन्द्रायण रूपा । श्रुतिवरणयोतपपरम अनूपा ॥
तप्त चिह्न बहु वचन विरोधा । हमसनसुनहुत्यागितुमक्रोधा ॥
तप्त चिह्न कर दोष विशेखा । नहिं नारद पुराणतुम देखा ॥
लिङ्गचक्रचिह्नितलखि द्विजवर ।मज्जहिंअथवादेखहिंदिनकर ॥
तप्त चिह्न युत पतित कहावा । तेहिसन भाषण दोष बतावा ॥
अन्नादिक तेहि दियो जो दाना । भस्माऽऽहुतिसमवृथाबखाना ॥
यद्यपि वेदादिक सब जाना । चिह्न लेत सो पतित बखाना ॥
चिरंजीवि × मुनि केर पुराना । तहां लिखोसोसुनुधरिध्याना ॥
गायत्री द्विजगण प्रतिवादा । भयो लह्यो तव देविविषादा ॥

† संमत ❀ चोरी × मार्कण्डेय ॥

शाप दीन्ह करि क्रोध भवानी। होय तुम्हारि धर्म की हानी॥
वेद बहिर्मुख तुम कलि माहीं। तन्त्र छांड़ि रुचि दूसरि नाहीं॥
ज्ञान कर्म पथ बाहर ह्वैहौ। काम क्रोध के वश ह्वै जैहौ॥
तेहिते चिह्न कबहुँ नहिं धरिये। वेदविहित मारग अनुसरिये॥

दो० मन वाणी गोचर नहीं सत चित आनँद रूप।
अद्वितीय विभु ब्रह्म है जो सबभांति अनूप॥

श्रीशिव तासु ब्रह्म अवतारा। शंभुभजनश्रुति विविधप्रकारा॥
कहो न हम तेहि खण्डन करहीं। भस्म सदा माथे हम धरहीं॥
तप्त चिह्न निर्मूल तुम्हारा। यह सुनि पुनितिनवचन उचारा॥
जब त्रिपुरासुर अतिदुखदीन्हा। इन्द्रादिकन पराजय कीन्हा॥
तब देवन रचि कीन्ह विधाना। विष्णुअग्निहिमकरमयबाना॥
पावक आदि मध्य निशिनाथा। अन्तकाल सम कमलानाथा॥
बहुरि परस्पर कीन्ह विचारा। को समरथ यह धारानिहारा॥
महादेव सम यह जग माहीं। विजय शक्तिधर दूसर नाहीं॥
शिवसन पुनिबहुविनयसुनाई। महादेव बोले हर्षाई॥
लाभ कहा मोहिं है सुरराया। कहहु बहुरि मैं करब उपाया॥
ब्रह्मादिक हम सब पशुरूपा। तुमपशुपतिममस्वामि अनूपा॥
असकहि सबसुरअंकितभयऊ। तब शंकर धनु करमहँ लयऊ॥
तब त्रिपुरासुर को प्रभु मारा। निजपुनीतयशमहि विस्तारा॥
विना सेव्य सेवक वर भावा। तरै न भव करि कोटिउपावा॥
उचित चिह्न धारण तेहि हेतू। हम सब सेवक प्रभु वृषकेतू॥
सुनि मुनिवर बोले मुसुकाई। अहो मोह जनता* जड़ताई॥
मानहीन यह वचन तुम्हारा। देवन कबहुं चिह्न नहिं धारा॥
जो हो तो यहु वचन प्रमाना। आवत श्रुतिमहँ चिह्न विधाना॥
कैवल्यादि श्रुती जो भाषा। सुनिये ताहिसहित अभिलाषा॥
श्रद्धा तथा भक्ति पुनि ध्याना। ब्रह्मलाभ को यतन बखाना॥
शूल लिंग धारण नहिं भाषा। वृथा करहु यहि में अभिलाषा॥

* जनसमूह॥

दो० ज्ञान विना कोउ पन्थ नहिं मुक्ति हेतु श्रुति गाव।
मुक्तिहीन की जाहि रुचि ताहि न और उपाव॥

देह दाह निन्दा बहु गाई। कहँलौं तुमसन कहौं बुझाई॥
राजचिह्न सम तुम जो धरहू। क्यों शूलादि न धारण करहू॥
लोहरचित शूलादि बनाई। धरहु जो तुमको हठ अधिकाई॥
तेहि को फल बहुभार विहाई। ह्वैहै नहिं कछु तव सुखदाई॥
भुजग विभूषण शंकर धारा। क्यों न करौ तुम अंगीकारा॥
तेहिते पामर बुद्धि विहाई। वैदिक धर्म करहु मन लाई॥
फलअभिलाष न निजमनधरहू। ईश चरण तेहि अर्पण करहू॥
मन महँ एक भाव नित राखौ। ज्ञानहिं पायअमृतफलचाखौ॥
सुनि असवचनसकल अनुरागे। करि दण्डवत चिह्न सब त्यागे॥
शिष्य भये निज कुटुँब समेता। अद्वय मत महँ तत्पर चेता॥
तैसेहि औरहु जे तहँ आये। एक भाव लहि सब हर्षाये॥
ठांव अनन्त शयन महँ जाई। देव दरश करि मुनि हर्षाई॥
तीन मास तहँ कीन निवासा। विष्णुभक्त आये प्रभु पासा॥

दो० पञ्चरात्र १ अरु भागवत २ तीजे भक्त ३ उदार।
कर्म ४ हीन वैष्णव ५ तथा वैखानस ६ आचार॥

विष्णुभक्त षड्विध गुरु देखी। पूछा तिनकर धर्म विशेखी॥
भक्त प्रथम बोले शिरनाई। वासुदेव सेवैं मन लाई॥
सब अवतार धरे प्रभु सोई। जेहि की महिमा जान न कोई॥
ह्वै प्रसन्न लखि हमरी सेवा। निज सुलोक सुख देहैं देवा॥
हम अनन्त सेवहिं मन वानी। मुनिकौण्डिन्य पन्थरति मानी॥
यह मत के पुनि युगल स्वरूपा। एक कर्म पुनि ज्ञान अनूपा॥
हमहिं सुनावहु आपन ज्ञाना। विष्णुशर्म तब कहै सुजाना॥
हम अनन्त पद शरण पधारे। भये सकल कर्मन ते न्यारे॥
ते आयसु बिन तृण नहिं डोला। तासु चरण हम गहे अमोला॥
ऐसी सुनि अचरज की वानी। बोले श्री शंकर विज्ञानी॥

जन्म काल है शूद्र समाना। कर्म भये द्विज वेद बखाना॥
सन्ध्यादिक जो नित नहिं करहीं। प्रत्यवाय माथे पर धरहीं॥
कर्म त्याग जो नरपशु करहीं। लयपर्यन्त नरक में परहीं॥

सो० ब्रह्मभाव की हानि यह प्रकार कछु दिन रहे।
ऐसो निज उर आनि कर्म तजै कबहूं नहीं॥

विष्णुशर्म सुनि कहै सभीती। पीढ़ी सात हमारी बीती॥
अष्टम पुरुष कर्म कछु करेऊ। तब गुरुवर सक्रोध अस कहेऊ॥
दूरि जाहि शठ परम अभागा। यहिविधिजबशंकरतेहित्यागा॥
निजगणसहतेहिकीन्हप्रणामा। क्षमहु नाथ प्रभु करुणाधामा॥
जब देखा शरणागत आयो। विधिवत प्रायश्चित्त करायो॥
विष्णुशर्म आदिक द्विजवृन्दा। कर्म परायण सहित अनन्दा॥
पुनि गुरुसन यह बिनती कीन्ही। हमहिं नाथ द्विजवरता दीन्ही॥
मुक्ति उपाय कहौ अब नाथा। हमको सबविधिकरहु सनाथा॥
पञ्च देव पूजन तुम करहू। कर्म ब्रह्म अर्पण आचरहू॥
यहि विधि मननिर्मल जब ह्वैहै। तबहीं भेददृष्टि मिटि जैहै॥
करत विचार अबोध विनाशा। करिहैसबविधि ज्ञानप्रकाशा॥
लिंग देह भेदन ह्वै जैहै। अनपायिनी मुक्ति तब पैहै॥
सुनि उपदेश चरणगहि लीन्हा। निजगणसहितगवनगृहकीन्हा॥
पञ्च देव पूजहिं मन बानी। जो विधिश्रीगुरुआप बखानी॥

दो० ब्रह्म गुप्त अरु तासु गण तब आयो गुरु पास।
करिप्रणाम गुरुसन कियो निजमतकेर प्रकास॥

स्मृति रीति कर्म हम करहीं। ब्रह्मार्पण की विधि अनुसरहीं॥
तब गुरु कह्यो सुनौ ममबानी। पञ्च देव पूजहु रति मानी॥
यहिप्रकार मन शुद्ध तुम्हारा। ह्वैहै बहुरि ज्ञान अधिकारा॥
भेद वासना ह्वैहै दूरी। आतम ज्ञान तबहिं भरिपूरी॥
लिंग देह सम्बन्ध विहैहौ। तब तुम सकल मुक्त ह्वै जैहौ॥
यह सुनि मन स्थिर ह्वैगयऊ। वार वार गुरुपद शिर धरेऊ॥

तब भागवत केर गण आवा । करि प्रणाम निजमत दर्शावा ॥
सकल देव तीरथ फल जोई । हरि अस्तुति पावै नर सोई ॥
हरिकीर्तन निशिवासर करहीं । शंख चक्र चिह्नन हम धरहीं ॥
पहिरैं उर तुलसी की माला । ऊर्ध्वपुण्ड्र निजभाल विशाला ॥
रहैं सदा ये नेम सँभारे । जानहु करतल मुक्ति हमारे ॥

दो० सुनि वाणी शंकरकह्यो नहिं अस कहौ सुजान ।
तस चिह्न निन्दित सदा वरणै वेद पुरान ॥

हरि मूरति जग चारिप्रकारा । प्रथम परा सो व्योमाकारा ॥
मन वाणी जहँ लौं नहिं जाई । एक विराट रूप दर्शाई ॥
इनकर चिह्न धरौ निजगाता । नखशिख लौं तब अति सुखदाता ॥
मत्स्यादिक है तीसर रूपा । चौथो शालग्राम स्वरूपा ॥
आय समय मत्स्यादि बनाई । करहु चिह्न निज अंग तपाई ॥
अथवा मूरति माल बनाई । पहिरौ निज उर कण्ठ सुहाई ॥
वैष्णव भाव लाभ तब होई । जो लोगन कहँ दुर्लभ सोई ॥
जो तुम चिह्न प्रीति अनुसरहू । लोहचक्र हरिसम किन धरहू ॥

दो० छोड़हु यह पाखण्ड मत करहु कर्म निष्काम ।
फल हरि को अर्पण करौ मन पावै विश्राम ॥

ब्रह्मनिष्ठ शरणागत जाई । निजस्वरूप अनुभव मतिपाई ॥
नष्ट कर्म बन्धन ह्वैजैहौ । यहिविधिसुखदमुक्तितुमपैहौ ॥
सुनि उपदेश कहहिं हर्षाई । बड़े भाग तव दरश गोसांई ॥
द्रवहु नाथ अब करहु कृतारथ । तब शिव कहे वचन परमारथ ॥
चिह्न छांड़ि निजकर्म मनलावहु । सोहमस्मियहनितप्रतिध्यावहु ॥
शार्ङ्गपाणि हरिभक्तिपरायण । कहनलगो करि नमोनरायण ॥
शंख चक्र धरि करि सेवकाई । जैहौं विष्णुलोक सुखदाई ॥
चिह्न ग्रहण को नाथ प्रमाणा । वर्णत जहँ तहँ विपुलपुराणा ॥
कण्ठ देश तुलसी की माला । शंख चक्र भुज चिह्न विशाला ॥
ऊर्ध्वपुण्ड्र माथे महँ धरहीं । विष्णुभक्त जगपावन करहीं ॥

श्रुति विरुद्ध ऐसो जन कहहू। तब बोले श्रुति हमसन गहहू॥
बिन तनताप मिलत सो नाहीं। गुरुकह्योयह न अर्थश्रुतिमाहीं॥
कृच्छ्रादिक तप श्रुतिमहँ गायो। अथवा तपते ध्यान लखायो॥
ब्रह्मबोध सन मुक्ति बताई। बोध हेतु नित करै उपाई॥
चिह्न धरै नहिं कहहिं पुराना। तुमधरितासुलोकचहौजाना॥
मनोराज यह वृथा तुम्हारो। शूद्रन द्विजवर वेष सँवारो॥
अहम्ब्रह्म यह चिन्तन करहू। भेद भाव मन सों परिहरहू॥
गये भेद है यह शिवरूपा। शिवगीता यह अर्थ अनूपा॥
कह्यो ताहि तुम सुनहु सुजाना। जो शिवोस्मि निश्चयकरिजाना॥
सो शिवरूप न कछु सन्देहा। यह सुनि गुरुपद भयो सनेहा॥

दो० द्वैतभाव अब तजा हम असकहि कियो प्रणाम।
मुक्ति होय तब वर दियो श्रीगुरुवर सुखधाम॥

स्मृति के धर्म सदा रुचिमानी। पञ्च देव पूजा भलि जानी॥
ब्रह्मज्ञान रुचि अधिक प्रकासी। किये तथा निजदेश निवासी॥
पञ्चरात्र मत धर तब आवा। आपन बहु उत्कर्ष सुनावा॥
प्रतिमादिक को स्थापन मूला। ममआगम⊛नाशक सबशूला॥
सुनी तासु यहविधि जब वानी। बोले श्रीशङ्कर विज्ञानी॥
जहँलों वेद विरुद्ध न होई। आगममत गहिये सुठि सोई॥
तहँ गायत्री त्याग कराई। विष्णुमन्त्र महिमा अतिगाई॥
विष्णुमन्त्र शत वस मन माहीं। वेदजननि‡बिनद्विजवरनाहीं॥
भूसुर भाव हानि तब भयऊ। यह सुनि तिन शंकरप्रतिकहेऊ॥
विप्र भाव महँ मम न सनेहा। विष्णुभक्त मैं बिन सन्देहा॥
तब तुम भ्रष्ट न बोलन योगा। जो नहिं मानहुँ वेद नियोगा॥
तब माधव प्रधान अस कहेऊ। मम आगम प्रमाण नहिं रहेऊ॥
तप्त चिह्न महिमा तब गाई। विष्णुलोकप्रदअतिसुखदाई॥
तब शंकर यह वचन सुनावा। माधव सुनहु हमार सिखावा॥
आगम धर्म्म वेद प्रतिकूला। कबहुँ न तेहि जानहु अनुकूला॥

⊛ तन्त्र ‡ गायत्री –ॐकारं पितृरूपेण गायत्रीं मातरं तथा। पितरौ यो न जानाति सविप्र स्त्वन्यरेतजः॥ १॥

वेदविहित निज धर्म सुहावा । करहु चित्त पावन श्रुतिगावा ॥
लहिहौ बहुरि ज्ञान अधिकारा । ज्ञान पाय तरिहौ संसारा ॥
सकल जीव गत आतम देखै । आतम महँ सबजीवन पेखै ॥
तबहीं ब्रह्म मिलै न सँदेहा । वेद *शिरन को सम्मत एहा ॥
तेहिते तुम सब चिह्न विहाई । ब्रह्मनिष्ठता गहहु सुहाई ॥
दो० माधवसुनिनिजग्रामकुल सबहि सिखावन दीन्ह ।
श्रीगुरु परमप्रसादतें श्रुतिमारग तिन लीन्ह ॥
वैखानस मत धर तब आवा । व्यासदास निजनाम बतावा ॥
एक बार ब्रह्मा किन आवा । मोर पक्ष नहिं हटै हटावा ॥
नारायण पर देव सुहायो । परमधाम तिनकर श्रुतिगायो ॥
नारायण सब जग उपजावैं । तिनके भजे मुक्ति नर पावैं ॥
तासु भक्त लक्षण यह यतिवर । ऊर्ध्वपुण्ड्र वर भाल मनोहर ॥
शंख चक्र भुज मध्य सुहाये । वैखानस मत में दर्शाये ॥
नारायण जग कारण मानहु । परमधाम पुनि तासु बखानहु ॥
करहिं विवाद न हम यहि माहीं । ज्ञान विना मिलि है सो नाहीं ॥
विष्णु भक्ति जो तव उर आई । करि स्वकर्म्म हरिअर्पहुजाई ॥
कबहुँ न चिह्न धरौ तनु माहीं । यहिमेंश्रुतिप्रमाण कोइ नाहीं ॥
सुनि बोला प्रभु सतयुगमाहीं । दत्तात्रय सम भा कोउ नाहीं ॥
तिन मुद्रा सब धारण कीन्हीं । मानहुँ हमसबकहँसिखदीन्हीं ॥
शंख चक्र धारण विधि नाना । कहहिं तथा प्रभुसकलपुराना ॥
हरि अवतार सिद्ध मुनिरावा । मुद्राधर केहिं तुमहिं बतावा ॥
हम नहिं सुनो कहै नहिं कोऊ । तुम्हहिं छाँड़िमूरखजनिहोऊ ॥
तप्तचिह्न नहिं कहहिं पुराना । केवल यह तुम्हार अज्ञाना ॥
ध्रुव प्रह्लाद तथा गजराजा । हनूमान तिमि निशचरराजा ॥
द्रुपदसुता ब्रज के नरनारी । कहहु कौन भयो मुद्राधारी ॥
तेहि ते तुम सब चिह्न विहाई । अहंब्रह्म ध्यावहु मनलाई ॥
जीवत ब्रह्म सुखहि तुम पैहौ । पुनि तनु त्यागि मुक्त ह्वैजैहौ ॥

---

* उपनिषद् ॥

जो पुनि अंक हेतु हठ करहू। कहैं जहां जहँ तहँ तुम धरहू॥

दो० गलकपोल भुज पृष्ठमहँ कर्मेन्द्रिय पुनि ज्ञान।
सकल ठौरमहँ चिह्नधरि फिरिये वृषभ समान॥

पशु सम कर्महीन सुख चाहा। श्वेतवस्त्र विन अन्तर काहा॥
सुनि गुरु वचन कहत हर्षाई। दियो आपु अज्ञान नशाई॥
तब सेवक हौं अंकित नाहीं। उपजे यथा ज्ञान उर माहीं॥
सो उपाय मोहिं देहु सिखाई। अस कहि ढिग बैठो शिरनाई॥
हँसि बोले तब शंभु सुजाना। यहिप्रकारकरुनितप्रतिध्याना॥
मैं सोइ ब्रह्म न हौं संसारी। तत्त्वंपद कर अर्थ विचारी॥
जो न विचार बनै वहि भांती। मुखसोइवचनकहौ दिनराती॥
यहि अभ्यास द्वन्द्व मिटि जैहै। अनुभव पाय मुक्त ह्वैजैहै॥
ब्रह्म रूप मैं नाथ कृतारथ। मोर जन्म अब भयो यथारथ॥
पुनि पुनि गुरुचरणन शिरनाई। निजगण सहित गयो हर्षाई॥
कर्महीन वैष्णव पुनि आयो। नामतीर्थ प्रभुकहँ शिरनायो॥
कहनलगो निजमत गुरुपाहीं। शेषहु सन कंपितयह* नाहीं॥
सर्वविष्णुमय जग श्रुतिगावा। तेहिते हमैं न कर्म सुहावा॥
श्रीगुरु निजसेवक हितकारी। हरिसनविनयकरहिं दुखहारी॥
यह बिनती हमरी सुनि लेहू। मम सेवकहि अपन पद देहू॥
सुनिभगवानतथा विधिकरहीं। तेहिते हमभवसों नहिं डरहीं॥
जीवन्मुक्त फिरैं जग माहीं। मम मतसम प्रभु दूसर नाहीं॥
तुमहूं ग्रहण करो मन लाई। निश्चय पैहौ मुक्ति सुहाई॥

दो० सत्य कहा तुम अपन मत कर्म भ्रष्ट पद पाय।
जिअत मुक्त तुम ह्वैगये सहजहि विना उपाय॥

उभय धर्म मारग जगमाहीं। करहिं कर्मफल रुचि मननाहीं॥
ब्रह्मसमर्पण विधिसन करहीं। ते जन ज्ञान पन्थ अनुसरहीं॥
फलहित सदा करैं निज कर्मू। कर्म पन्थ जानहु सो धर्मू॥
कर्म भ्रष्ट तजि वेद नियोगा। तुम सब भये दण्ड के योगा॥

* पक्ष॥

विष्णुभक्त कैसेहु तुम नाहीं । घटैं न तौन चिह्न तव माहीं ॥
हरिवाणी तुम हमसन सुनहू । पुनिनिजमनकोभ्रमपरिहरहू ॥
सुहृद् शत्रुसम बुधिकरिभजहीं । वर्णधर्म निजकबहुँ न तजहीं ॥
विषमजानि काहुहि नहिं त्यागैं । परहिंसा मैं नहिं अनुरागैं ॥
मन निर्मल ममता मद त्यागी । जानहु विष्णुभक्त बड़भागी ॥
श्रुति स्मृति दुइ आज्ञा मेरी । तेहि उल्लंघहि जो मत भोरी ॥
मम आज्ञाभङ्गी मम द्रोही । सो न भक्त तेहि की मतिमोही ॥
जग वंचक मम भक्त कहाई । सो नर परै नरक महँ जाई ॥

दो० इत्यादिक बहु वचन मों कर्म त्याग शुभ नाहिं ।
द्विज निज कर्महिंकरैं नित यह गायो श्रुतिमाहिं ॥

संध्या तीनि उल्लंघहिं जोई । तीनि कृच्छ्र कियो पावन होई ॥
विधिसंन्यास करै नहिं जौलौ । करहिकर्मनिज दिनप्रतितौलौ ॥
तीरथ नाम सुनी यह बानी । करिप्रणाम प्रभु आज्ञा मानी ॥
ऐसे षड्विध हरि व्रतधारी । निष्कृति❀करिद्विजभावसँभारी ॥
वैदिक कर्मनिष्ठ सब भयऊ । सुब्रह्मण्य धाम प्रभु गयऊ ॥
स्कन्द धारसरि करि अस्नाना । सम्मुख पूजे सहित विधाना ॥
वसन कषाय अंग अतिराजा । हाथ कमण्डलु दिव्यविराजा ॥
भस्म सहित निर्मल वपुधारी । गुरु वर सोहैं यथा पुरारी ॥
नाना देश वासि द्विज आये । प्रभुहिं देखि ये वचन सुनाये ॥
हमसबद्विज स्वकर्मनितकरहीं । मनु वर्णित सब धर्माचरहीं ॥
चतुरानन सेवक मन बानी । तेहि सम कोउ न देवमन जानी ॥
दाढ़ी और कमण्डलु धरहीं । चतुरानन पूजा अनुसरहीं ॥
थितिलयपालनसो नितकरहीं । लीला सहित रूप बहुधरहीं ॥
बहुश्रुति महिमा तासु बखानी । सुनहु विनययद्यपि तुम ज्ञानी ॥
सकलजीव प्रकटहिं जगमाहीं । प्रलयकालविधिनाहिंसमाहीं ॥
बिनहिं यत्न सबको निर्वाना । देतलोकनिजकरहिजोध्याना ॥

सो० ब्रह्मलोक पर धाम ब्रह्मा ब्रह्म न और कोउ ।

❀ प्रायश्चित्त ॥

नहिं अभेद को काम क्यों ऐसी तुम हठ करौ ॥
शंभु कह्यो सुनिये मोहिं पाहीं । सो तुम श्रुती सुनी धौं नाहीं ॥
ब्रह्मादिक जेहिसन उपजाहीं । तासुज्ञानबिनभव क्षतिनाहीं ॥
तेहितेश्रुतिशिर श्रवणविधाना । किये यथाविधि पद निर्वाना ॥
चतुरानन सहलय तुम मानी । सो सुषुप्तिसम जानहिं ज्ञानी ॥
सोइ उठै जेहि विधि पुनि प्रानी । तिमि न होहिजन्मादिकहानी ॥
गुरु वर वचन सुनत हर्षाई । भयेशिष्य सब चिह्न विहाई ॥
पावक भक्त तहां पुनि आई । निजमतयहिविधिदीनसुनाई ॥
अग्नि महातम बहुश्रुति गावैं । तासुभजनबिनसुखनहिंपावैं ॥
दो० जीवत सुखप्रद अन्त महँ शुभगति देहि सुजान ।
तेहिते पावक हम भजें तेहि सम देव न आन ॥
तुमहुँ तासु सेवा नित करहू । निजहितजानिवचनअनुसरहू ॥
सुनि शंकराचार्य्य भगवाना । वचन गँभीर पयोद समाना ॥
कह्योसुनहु द्विजममसमुझायो । देवभागप्रद अग्नि बतायो ॥
अग्न्यऽधीन कीजे नित कर्मू । प्रभुहि समर्पहु फल सह धर्मू ॥
मत अद्वैत सदा मन देहू । पैहौ मुक्ति न कछु सन्देहू ॥
सुहोत्रादि सुनि गुरुवर बानी । परब्रह्मनिष्ठा उर आनी ॥
सावधान मन ह्वै जग गयऊ । तबहिंसौरगण आवतभयऊ ॥
अरुण पुष्प माला उर धारे । रविमण्डल सम तिलकसवांरे ॥
सकल प्रधान दिवाकर नामा । कहनलगो करि दण्डप्रणामा ॥
नाथ दिनेश हमारे देवा । हमसब करहिं तासु नितसेवा ॥
लोकनयनश्रुति रविकहँ गावा । औरौ बहु प्रभाव दर्शावा ॥
चन्दनअरुण तिलकहम करहीं । ताही की माला नित धरहीं ॥
षट प्रकार को भेद हमारा । सोसबतुमसनकहहिंप्रकारा ॥
उदय समय प्रभु ब्रह्म स्वरूपा । कोउ ध्यावें सोइ रूप अनूपा ॥
मध्यदिवस शिवरूप दिवाकर । एकहि तीन रूप सेवाकर ॥
अस्त काल रवि हरितनधारी । तेहिस्वरूप कोइ भजै तमारी ॥

हेमश्मश्रु धरे प्रभु देवा। मण्डलमहँ ध्यावहिं करिसेवा॥
दो० दर्श पाय भोजन करैं एकन को यह नेम।
तप्त लोह मण्डल करैं निज भुज एक सप्रेम॥
भुज ललाट उर चिह्न सवांरी। क्षणक्षणध्यावहिंसदातमारी॥
सब श्रुति संमत है रवि सेवा। तिन समान नहिं दूसर देवा॥
कृष्ण वचन हैं परम प्रमाना। गीतामहँ वरण्यो भगवाना॥
तेजस्विनमहँ रवि मोहिं जानहु। सविता विष्णुरूप मोहिं मानहु॥
मूढ़ दिवाकर सुनु मम बानी। यहश्रुतिक्योंनहिंतुमउरआनी॥
मन सों जन्म लियो उडुराजा। चषसों प्रकटभये दिनराजा॥
जासु जन्म सो नित्य न होई। सविता ब्रह्म होइ नहिं सोई॥
ईश नियोग भ्रमै निशिवासर। जेहि डरते जगकरै उजागर॥
जेहि डर पवन चलै जगमाहीं। जेहिभयपाय सोम थिरनाहीं॥
मारत काल जरावत आगी। जेहिडरसकहिंननिजपथत्यागी॥
सबकर परम प्रकाशक जोई। ब्रह्मअनादि लख्यो तुम सोई॥
जो श्रुति रविवरणन अनुसरहीं। रविगतिब्रह्मनिरूपणकरहीं॥
सविताको नहिं नित्यबतायो। ज्योतिषमहँपुनियहिविधिगायो॥
आदिकल्प रविकरहिं प्रकाशा। अन्तकल्पमहँ होयँ विनाशा॥
तेहि को तू जग कारण कहई। तव विद्या बड़ि अद्भुत अहई॥
तेहि कारण सब चिह्न विहाई। वेदाचार गहो मन लाई॥
द्वैत रहित बोधहि जब पैहौ। तब तुम अवशि मुक्त ह्वैजैहौ॥
सुनि प्रभु गिरा सकल हर्षाई। शिष्यभये सब चिह्न विहाई॥
दो० जो द्विजवरहि समाज बहु जुरी सकल तहँ आय।
गुरुपूजा सन्मान करि हर्षे आशिष पाय॥
वायुदिशा कहँ तब पगुधारा। तासुविजयकरकीन्हविचारा॥
तीनि सहस्र शिष्यसँगमाहीं। कोउकोउशंखबजावतजाहीं॥
क.ऊताल कोउ झांझबजावहिं। कोउ घण्टा कोई यशगावहिं॥
करैं व्यजन चामर लिये कोई। पूजहिं गुरुहिं मानमद खोई॥

दुख सुख, चाहरहित त्रिपुरारी। सबसेवहिंनिजरुचिअनुसारी॥
जेहि जेहि देश जाहिं यतिराजा। तहां होय बहु विप्र समाजा॥
कुमति खण्डि वैदिक मतधारी। अभयदान दै करहिं सुखारी॥
गणपुर महँ पहुँचे प्रभु जाई। सरित कौमुदी मुदित नहाई॥
गणपति पूजे सहित हुलासा। एकमास तहँ कीन निवासा॥
षटरस भोजन विप्र बनावहिं। गुरुयुतभिक्षासबहिकरावहिं॥
सांझसमयकरि द्विषट प्रनामा। ढक्कानाद सहित गुणधामा॥
प्रेम विवश नाचत कोउ आगे। गावैं यहि प्रकार अनुरागे॥
पूरण ब्रह्म सकल उरवासी। सतचितआनँदअजअविनासी॥
मन वाणी जेहि जानि न पावैं। श्रुतिशेखरनितप्रतिजेहिगावैं॥
भलीभांति गोगण जिन जीते। ध्यान करैं नित हृदय पुनीते॥

दो० ते जानहिं लहि गुरु कृपा पावहिं पद निर्वान।
जासु ज्ञान सोइ ब्रह्म हम हमते सो नहिं आन॥

सो० श्रीगुरु आनँद कन्द यहि विधि सेवहिं हर्षयुत।
पुरजन देखि अनन्द विस्मित मन बोलतभये॥

तव मत समीचीन यह नाहीं। नहिंअवलम्बनकुछजेहिमाहीं॥
मनवाणी जेहि जानि न पावैं। केहि प्रकार तहँ बुद्धि लगावैं॥
तजहु वेगि यहमत जग न्यारो। गाणपत्य मत गहहु हमारो॥
षटप्रकार यहु मत जगव्यापा। मुक्तिहेतु नाशक परितापा॥
प्रथमहिं महागणप की पूजा। तथा हरिद्रा गणपति दूजा॥
और एक उच्छिष्ट विनायक। पुनिनवनीतगणपसुखदायक॥
पञ्चम हेम गणप सुखदायक। तथा षष्ठ संतान विनायक॥
शैवागम महिमा बहु वरणी। गणपतिभक्तमकहँशुभतरणी॥
महागणप जग कारण स्वामी। सकल देव तिनके अनुगामी॥
श्रुतिगाई महिमा नहिं थोरी। रचैं देव ब्रह्मादि करोरी॥
सुखप्रद मुक्ति विनायक देवा। जानिकरौं तिनकी नितसेवा॥
शुण्डदन्तअङ्कितभुज करहू। यहिविधिसुखसोंभवानिधितरहू॥

गणपति जगकारण नहिं होई। रुद्रपुत्र जानै सब कोई॥
परब्रह्म कारण जगकेरा। वेद पुराण प्रमाण घनेरा॥
वर्जहिं बहु विधि वेद पुराना। तेहि ते चिह्न न धरहिं सुजाना॥
दो० तजहु चिह्न अद्वैत रत होहु सदा निज कर्म।
ब्रह्मार्पण विधिसों करहु यहि समान नहिं धर्म॥
निज गण सहित गहो उपदेशा। तजे चिह्न गवने निज देशा॥
पञ्च देव पूजा अनुरागे। पञ्च यज्ञ सेवहिं हठ त्यागे॥
तबहिं हरिद्रा गणप पुजारी। आयकह्यो निजमतविस्तारी॥
चारिभुजा त्रयनयन विराजा। पीताम्बर पहिरे गणराजा॥
पीत यज्ञ उपवीत सुहावा। पीत वदन सोहै छवि छावा॥
अंकुश पाश सदा प्रभु धरहीं। निजभक्तन की भयनित हरहीं॥
तुण्ड दन्त कर चिह्न सुहावा। तप्त लोहमय जो भुजलावा॥
मुक्त होय नहिं कछु संदेहा। है यतीश सुन्दर मत येहा॥
अंशी अंश अभेद विचारी। गणपरूप जानहु त्रिपुरारी॥
गणपति रूप भजो नहिं हानी। पञ्च देव को समकरजानी॥
वेद विरुद्ध चिह्न नहिं धरहू। मन अद्वैत भाव अनुसरहू॥
यहि विधि मुक्त रूप ह्वै जैहौ। क्लेशभवन जग में नहिं ऐहौ॥
दो० सुनिद्वादशपरणाम करि गणकुमार सुख पाय।
गुरु मूरति उरराखिकै किये वचन मन लाय॥
तीसर गण शंकर पहँ आयो। आपन मत यहि रीति सुनायो॥
हम उच्छिष्ट गणप के दासा। करहिं न और देव की आसा॥
लोचन तीनि धरे भुज चारी। अंकुश पाश गदाऽभयधारी॥
शुण्ड भरे मधु मद की धारा। गणनायक वरदानि हमारा॥
महापीठ बैठे सरसाईं। परमप्रिया सोहै दिशि बाईं॥
चुम्बहिं ताहि आलिंगन करहीं। तासु गुह्य थलपर कर धरहीं॥
एक पुरुष अरु दूसरि नारी। उभयजाति विरची सुखकारी॥
जेहि की जेहिसँग मनरुचिहोई। भोग करैं नहिं दूषण कोई॥

उभय योग उपजै सुखभारी। जानहुसोइप्रभु मुक्ति हमारी॥
आनँद मूरति मंगल नायक। गणनायकसबके सुखदायक॥
कर्म मुक्ति को कारण नाहीं। प्रकट कह्यो है बहुश्रुतिमाहीं॥
यह अनुकूल सुखद सबही को। सब प्रकार हमरो मत नीको॥
गुरु वर तब बोले यह बानी। मम उपदेश सुनो हित जानी॥
सुरापान वर्जत श्रुति नाना। पाप न परतियगमनसमाना॥
तासु गृहन जेहि मत में होई। तेहि में दृष्टि करौ जनि कोई॥
जो अकर्म श्रुति मोहिं सुनाई। सो संन्यास कहै सुखदाई॥

दो० सुरापान परदार सों मुक्ति लहै नहिं कोय।
दुष्टभाव यह तजहु तुम उरविकार निज खोय॥

प्रायश्चित्त यथाविधि करहू। अजपा जाप सदा मन धरहू॥
पञ्च यज्ञ सुर पञ्चक पूजा। करहु सदा मनभाव न दूजा॥
परम धर्म श्रुति सम्मत येहा। ह्वैहौ मुक्त न कछु संदेहा॥
करि प्रणाम ते सहित सनेहा। सुनि उपदेश तजो सन्देहा॥
पुनि त्रयशैवआय अस कहेऊ। यहसबजगगणपतिसनभयऊ॥
गणप रूप जग चिंतन करहीं। मुक्तरूप मन शंक न धरहीं॥
कैसे त्रयमत खण्डन कीन्हा। तब गुरुवर यह उत्तर दीन्हा॥
पुरुषाधीन प्रकृति उपजायो। महत्तत्त्व तेहि नाम कहायो॥
तेहि सो अहंकार प्रकटायो। तेहिसत रज तम गुण दर्शायो॥
हरिहर विधि भे तीन स्वरूपा। थिति लय सर्जनहेतु अनूपा॥
हर पुनि तीन पुत्र उपजाये। भैरव गणप कुमार ❀ कहाये॥
लहिनिजनिजअधिकारबड़ाई। सबन पूज्य पदवी जग पाई॥
तेहिते तुम निज हठ परिहरहू। पञ्चदेव पूजा नित करहू॥
सुनिगुरुवचन चिह्नसब त्यागी। भये पञ्च पूजा अनुरागी॥

दो० पाण्ड्य देश अरु चोल कहँ तथा द्रविड़ वरदेश।
यहिविधिनिजवशआतिप्रभु कांचीकीन्ह प्रवेश॥

हस्तिनामगिरि चारिहु पासा। कटिमेखलसमकरतप्रकासा॥

❀ स्कन्द।

तहँ शारद मन्दिर बनवावा । जो सब भांतिविचित्रसुहावा ॥
श्रुति सम्मत पूजन उपदेशा । विप्रनकहँ प्रभुदीन निदेशा ॥
जहँ वरेश अस नाम अनूपा । रहादिव्य शिवलिंग स्वरूपा॥
तहँ शिवपट्टन * को निर्माना । कियोमनोहरअतिभगवाना ॥
वरदराज हरि विग्रह जहवां । विष्णुनगरकीन्होंप्रभुतहवां ॥
उभय भेद यहिविधि प्रभुकीन्हें । ब्रह्मनिष्ठद्विजगणकरि दीन्हें ॥
एक मास तहँ भयो निवासा । कीन्हों मत अद्वैत प्रकासा ॥
बहुरि ताम्रपर्णी तटवासी । द्विजन आय देखे सुखरासी ॥
करि प्रणाम संशय निजभाषा । मतनिर्णयकी उरअभिलाषा॥
नाथ भेद सब भांति प्रकाशा । करहुतासुकेहिविधिहिसुनाशा॥
जीव शुभाशुभ क्रिया घनेरी । करतल है तिमि गतिबहुतेरी ॥
जासु देव सेवा मन लावै । तनुतजितेहि के लोकसिधावै॥
कहहु कौन विधि नाथ अभेदा । सो सुनाय हरिये सब खेदा ॥
परम तत्त्व पद बिन पहिचाने । द्विजवर तुम संशय उरआने ॥
ज्ञान पाय ह्वैजाय अभेदा । यह निश्चय वरणै सब वेदा ॥
दो० सब कछु आतम जहँ† भयो कहिकरि देखै काय ।
ज्ञान अग्नि अघ नाश भे पुनि न भेद दर्शाय ॥
ब्रह्म जीव ह्वै कीन्ह प्रवेशा । बहुश्रुतिगण को यह उपदेशा॥
एक अनेक रूप सोइ धरई । देव मनुज संज्ञा अनुसरई ॥
सब प्रपञ्च परमातम रूपा । श्रुतिशिर को सिद्धान्तअनूपा॥
शुद्ध बुद्ध सतचित अविनाशी । ब्रह्म ज्ञानघनअज सुखराशी ॥
तेहि कारण सब भेद भुलाई । अनुभव तासु करहु मनलाई॥
सुनि उपदेश परम सुखमाना । ब्रह्माऽभेद भाव उर आना ॥
अन्ध देश के जे द्विज आये । उक्तिरीति गुरुवर समुझाये ॥
बंकटेश गवने सुखधामा । तिनको कीन सप्रेम प्रणामा ॥
दो० नृप विदर्भ को समर पुनि शंकर देखो जाय ।
आगे आय लीन तेहि पूजे भक्ति दृढ़ाय ॥

* नगर † जिस ज्ञानदशा में

क्रथकेशेश्वर पूजन पाई। रहे तहां शंकर सुखदाई ॥
भैरव तन्त्रा ऽ*ऽ लम्बन कारी। बहुत रहे तहँ तन्मतधारी ॥
तिन की दुर्बुधि शम्भु निवारी। कियेसकलशुभपथअनुसारी॥
करनाटक जय कीन विचारा। तबनरपति यह वचनउचारा॥
कापालिकगणतहँअतिशयतर। है अगम्य सो देश यतीश्वर॥
सहि न सकैं तव यश उजियारा। श्रुतिविरोधमतधरबरिआरा॥
जग को अहित होय सो करहीं। साधु विरोध सदा मन धरहीं ॥
सुनत सुधन्वा नृप तब कहही। यह प्रभुदास साथ तवअहही॥
पांवर जन भय मन नहिं धरहू। मुनिवर मुदित गमनतहँकरहू॥
तब श्री शंकर कीन पयाना। तहां जाय पहुँचे भगवाना ॥
क्रकच नाम कापालिक गुरुवर। सुनि आयो बैठे जहँ शङ्कर ॥
चिताभस्म भूषित तनु माला। हाथ विराजै मनुज कपाला ॥
निजसम बहु दुर्जन सँगलावा। गर्व सहित यह वचनसुनावा॥
भस्मधरहु सो मोहिं अतिभावा। नरकपाल केहि हेतु विहावा ॥
धरहु अपावन मृन्मयभाजन। होहु न कौन हेतु भैरव जन† ॥
मधु ×भैरवकहँ जेहिन पियावा। नरशिरपंकजजेहिनचढ़ावा ॥

दो० जिन भैरव युत भैरवी यहि विधि पूजी नाहिं।
कौनभांति ते मुक्ति के भाजन यह जगमाहिं ॥

यहि प्रकार तेहि जलपत देखी। लहो सुधन्वा कोह विशेखी ॥
निज पुरुषन को आयसु दीन्हा। प्रभु समाज ते बाहर कीन्हा ॥
भृकुटी कुटिलानन सो भयऊ। कँपत ओठफरसातेहि लयऊ॥
तुम सबके शिर जोन गिराऊं। तौन क्रकच यह नाम कहाऊं ॥
कापालिक दल उमड़ो भारी। प्रलयसमान शब्द भयकारी॥
तेहिदल की सङ्ख्या कछु नाहीं। धरे शस्त्र आये गुरु पाहीं ॥
देखि विप्रगण अतिभय पायो। नरपतिनिजरथ तुरतमँगायो॥
कवचपहिरि गहिकर धनुबाना। वर्षन लगो पयोद समाना ॥
होन लाग नृप सों संग्रामा। तबसों क्रकच महाअघधामा॥

---

* नृपतिसंज्ञा † भक्त × मद्य

भूसुर वध हित वेगि पठाये । फेर खाय कापालिक आये ॥
दो० तोमर पट्टिश शूल कर खड्ग परशु धर वीर ।
अट्टहासध्वनिकरहिंशठ सुनिमनहोहिं अधीर ॥
आवत देखि कपालि वरूथा । लगे पुकारन द्विजवर यूथा ॥
त्राहित्राहिशरणागत द्विजगन । हरहु दुःख हमरो भयभंजन ॥
तब यतिराज कीन्हि हुङ्कारा । उठी अग्नि तहँ भे जरि क्षारा ॥
नृपवर हेम पुङ्ख शर मारे । बहु सहस्र शिर काटि पछारे ॥
शिर पङ्कज रण मण्डितभयऊ । तब नृपवर शंकरपहँ गयऊ ॥
क्रकच देखि निज सेन सँहारी । सबद्विजगणकहँसुखीनिहारी ॥
अति उदास शंकर पहँ आयो । अतिशयदारुणवचनसुनायो ॥
कुमताश्रय मम देखु प्रभावा । चहौ तुरतनिजकृतफलपावा ॥
करकपाल कीन्हो तेहि ध्याना । भैरव पथ महँ परम सुजाना ॥
नयन मूंदि भैरव जब ध्यायो । मदिरासोंभाजन भरिआयो ॥
अर्द्धसुरा कीन्ही तेहिं पाना । पुनि कीन्हो भैरवकर ध्याना ॥
भैरव प्रकट भये तेहि काला । नर कपाल की पहिरे माला ॥
प्रबल तेज धर मनहु कृशानू । जटाजूट जनु ज्वाल समानू ॥
कर त्रिशूल नृकपाल विराजा । अट्टहास सुनित्रासितसमाजा ॥
दो० निजजनद्रोही हनहुप्रभु क्रकच कह्यो शिरनाय ।
सुनि शठ के ये दुर्व्वचन भैरव कहै रिसाय ॥
मम स्वरूप शंकर सुखदाई । कुशल चहसि तहँ बैर बढ़ाई ॥
यहकहिक्रकचशीशहरिलीन्हा । भैरवनाथ कोप बहु कीन्हा ॥
यतिशेश्वर बहु विनय बड़ाई । करि प्रणाम यह गिरा सुनाई ॥
वेद पुराण धर्म्म जो गावैं । ताहि किये सब पाप नशावैं ॥
जबहिं होय उरको अघ नाशा । निर्म्मलमनमहँ ज्ञानप्रकाशा ॥
सभामाहिं क्रकचहि समुझावा । नहिं मान्यो दुर्वचन सुनावा ॥
ममशिष्यन तेहि ताड़न कीन्हा । तब ते तुम को यह श्रमदीन्हा ॥
पूजनीय शंकर जग माहीं । हमसन भिन्न कबहुँ तुम नाहीं ॥

जो तुम कीन्हो जनु हम कीन्हा। तिनको यथायोग फल दीन्हा॥
मन्त्रबद्ध आयो मुनिराई। नाहिं कछु धर्म प्रीति दर्शाई॥
दो० शेष रहे ते होहिं अब तव प्रसाद द्विज रूप।
भैरव अन्तर्द्धान भे करि संवाद अनूप॥
कापालिक सुनि भैरव बानी। करि प्रणाम बोले भय मानी॥
क्षमहु नाथ अपराध हमारा। बनिआयो जो बिनहि विचारा॥
अब प्रभु हमपर रिस परिहरहू। मूढ़ जानि परिपालन करहू॥
तब शिष्यन को आयसु दीन्हा। विधिवत संस्कार तिन कीन्हा॥
वटुकादिक द्विजभावहि पाई। वैदिक धर्म्म करैं मन लाई॥
यहि प्रकार खलकुल जब नासा। विप्रन के मन परम हुलासा॥
मुदित शंभु पद पूजा करहीं। पुनि पुनि पादरेणु शिर धरहीं॥
बहुरि एक कापालिक आवा। सभामाहिंअसवचनसुनावा॥
बहुकादिकनिजमतशुभत्यागी। जाति लोभसबभये अभागी॥
जाति प्रयोजन मोहिं कछु नाहीं। जातिकीर्त्तिकल्पितजगमाहीं॥
नर नारी दुइ जाति सुहाई। उत्तम नारि जाति मनभाई॥
जासु भोग आनँद उर होई। जग में तेहि समान नहिं कोई॥
यह मम तिय यह नारि पराई। यह हठ नहिं कबहूं सुखदाई॥
गम्यागम्य विभाग न नीको। वृथा विकल्प उठो सबहीको॥
चर्म चर्म को योग सुहावा। मोद हेतु सबही को भावा॥
तिय संयोग जो आनँद होई। परम मुक्ति जानो तुम सोई॥
आनँदाहित प्रकटहि यह जीवा। देह तजे पुनि आनँद सीवा॥
यहि प्रकार निज मत दर्शायो। तबगुरुवर यह वचनसुनायो॥
भली कही कापालिक बाता। तनया कासु रही तव माता॥
दो० सांची हमसों कहहु तुम जनि कछु करो दुराव।
दीक्षित पुत्री सो रही कहौं नाथ सतभाव॥
दीक्षित अर्थ मोहिंसन कहहू। सत्यवचन तुम बोलत अहहू॥
यतिवर दीक्षा केर प्रकारा। मातामह कर कहहुँ उदारा॥

ताल वृक्ष रस नितसों काढ़ा। जासु पान आनँद उर बाढ़ा॥
यदपि रहा मादकरस झाला। तदपि आपु करै नहिं पाना॥
सो आनँद औरन को दीन्हा। मधुविक्रयतेहिनितप्रतिकीन्हा॥
रहा शील यहि विधि बहु जाही। कहैं सुजनसब दीक्षित ताही॥
कन्या तासु भई मम माता। रही जो सबकी आनँददाता॥
आनँद हेतु लोग तहँ आवैं। तासु प्रकाश परम सुख पावैं॥

छं० उन्मत्तभैरव नाम हमरे पिता कर बड़ यश रहा।
जोमधुर मधुरस बांटि लोगन देत नितआनँदमहा॥
जेहि तीर जात डरात सुरगण मद्यगन्ध भयातुरा।
भागहिंलहहिंतिथिनाहिं ऐसो भयोहैममपितुपुरा॥

दो० तेहिते सत्कुल जन्म मम प्रवर भयो यतिराज।
पूजनीय जगजानि मोहिं पूजहु सहित समाज॥

सुनि शंकर तेहिसों असभाषा। जाहु जहां तुम्हरी अभिलाषा॥
जे द्विजवर कुत्सित मत धारी। तिनहिं दण्डदै करहु सुखारी॥
ऐसन के भाषण अघ भूरी। करहु आशु मम ढिगते दूरी॥
जब शंकर यह आयसु दीन्हा। शिष्यनताहि दूरिकरिदीन्हा॥
दूरि जाइ अस कीन विचारा। सुनहुं कछू गुरु वचन उदारा॥
कापालिक पुनि गुरुढिगआवा। तर्कसहित यहवचन सुनावा॥
जीव मुक्ति लय दूसरि नाहीं। बनै न पुनि आवन जगमाहीं॥
सरिता जिमि समुद्रमहँ जाहीं। सागर सों पुनि आवत नाहीं॥
तैसेहि देह तजै यह जबहीं। होय मुक्त यतिनायक तबहीं॥
पिण्ड दिये मृत तृप्ति बखानहिं। यमपुरस्वर्गनरकपुनिमानहिं॥
पुण्यपापवश गमन बतावहिं। क्षीणभये नरलोकहि आवहिं॥
तिनके मत की कछु न प्रमाना। गुरुवर देखहु तुमकरि ध्याना॥
उभय भोग महि में ह्वैजाई। सो प्रकार मैं देहुँ सुनाई॥
ते स्वर्गी पावहिं जे भोगा। ते नरकी जे बहु दुख रोगा॥
स्वर्ग नरक प्रत्यक्ष विहाई। है परोक्ष कल्पित यतिराई॥

भूत रचित यह देह बिलाई। जीवदेह बिन केहि विधि जाई॥
ममम त सबप्रकार सुखदायक। सुनि बोले शंकर मुनिनायक॥
तव पथ वेद बहिर्मुख है शठ। समीचीननहिंजनिकहबहुहठ॥
वेदविहित प्रभु करहु प्रकाशा। जासु लाभते भव दुखनाशा॥
देहादिक जग चेतनकारी। जासुज्ञान लहि होहिं सुखारी॥
दो० ज्ञान विनानहिंमुक्तिकोउ लहै कह्यो श्रुतिमाहिं।
तुम जो मानहु मुक्तिसो मनभ्रमतजि कछुनाहिं॥
यद्यपि थूल देह जरि जाई। लिंग देह युत जात सदाई॥
यथा जलौका तृणतजि आना। तृणगहिचलैसकलजगजाना॥
तथा जीवगति श्रुति नित गावै। एक देह तजि दूसरि पावै॥
जीव सदा यह लोक विहाई। और लोकमहँ पुनिचलिजाई॥
अवशिकरियपिण्डादिविधाना। तेहिसों जीव लहै कल्याना॥
प्रेतभाव तजि उत्तम लोका। गयापिण्ड सों होय विशोका॥
अब शठ चारवाक मत धारी। जाहि इहां सों मौन सँभारी॥
यह सुनि भाषा वेष विहाई। श्रीगुरु पदरज शीश चढ़ाई॥
पुस्त भार वाही सो भयऊ। पुनि सौगत मत धर तहँगयऊ॥
करि प्रणाम गुरुवर सों कहई। नाथ लोक सब मूरख अहई॥
कर्मकरै नितप्रति केहि लागी। स्नानादिक केहि हेतु अभागी॥
भौतिक देह पवित्र न होई। जीव सदा निर्म्मल है सोई॥
तजे देह पुनि जन्म न पावा। मूरख जल्पत हैं मनभावा॥
देह गये पुनि हाथ न आवै। दैवयोग धन सबकोउ पावै॥
बरु ऋण करै पियै घृत पीनी। देह पुष्ट अरु बुद्धि नवीनी॥
सर्वभक्षि ह्वै नित सुख लहई। आनँदलाभ मुक्तिपद अहई॥
दो० वृथाजल्प जनि करसि शठ आगम निगम पुरान।
परलोकादिक जीव को कहैं सो मानु प्रमान॥
जो शठ ऋण करिकै घृत खैहै। ऋण सम्बन्ध जन्म पुनि पैहै॥
तेहि कारण अज्ञान विहाई। उत्तम पन्थ चलौ मनलाई॥

सुगत मुनी विचरे जग माहीं। जीव हीन देखी महि नाहीं॥
जगतसत्त्वपुनिपुनि अवलोकी। किये अभय दै जीव विशोकी॥
करुणाकरि तिनबहुसमझायो। प्राणिदयाव्रतसबहिसिखायो॥
यह सम और धर्म नहिं जायो। मम मत धर्म स्थान कहायो॥
सबहि उचित यह धर्म गोसांई। तब बोले शङ्कर सुखदाई॥
पुनि जल्पसि सौगत मतधारी। वेदविहित हिंसा सुखकारी॥
दो० अग्निष्टोम यज्ञ मुख पशु हिंसा नहिं पाप।
स्वर्ग लहै पशु देह तजि जहां न कछु संताप॥
वेदविहित हिंसा युत कर्मू। करहिं न तेहिसमान कोउ धर्मू॥
वेद विनिन्दकश्रुतिपथ त्यागी। ते सब घोर नरक के भागी॥
ते तहँ करहिं प्रलय लौं वासा। श्रीमनु ने यह वचन प्रकासा॥
भूसुरादि के धर्म्म सुहाये। जे सब वेद पुराणन गाये॥
तिन्हहिछांड़िजेऔरहिगहहीं। तिनसमअधमनकोउजगअहहीं॥
सुनि सौगत त्यागोअभिमाना। साधु प्रसाद लगी तब खाना॥
श्रीगुरु पद्म पाद भगवाना। औरशिष्यगुणज्ञान निधाना॥
चरण पादुका तिन सब केरी। सँगलै चलै सनेह घनेरी॥
पुनिक्षपणक संज्ञक तहँ आवा। गोल यन्त्र यक हाथ सुहावा॥
तुरी यन्त्र दूजे कर माहीं। तन कौपीन छांड़ि कछु नाहीं॥
पूरण समय नाम मम शङ्कर। मत विचित्र ममसुनिये सुन्दर॥
उभय यन्त्र धरि रविगतिदेखी। सकलशुभाशुभ कहौं विशेखी॥
परम देव हमरे मत काला। नहिं चलाय कोउसकै कृपाला॥
बने रहौ तुम हमरे पासा। कालशुभाशुभ करहुप्रकासा॥
आज्ञा शिरधरि सो सँग रहेऊ। जैन शिष्य सह आवत भयऊ॥
धरे एक कौपीन मलीना। तनमलीन सब चिह्नविहीना॥
अर्हन्नमः सदा सो भाखै। और वस्तु कछु तीर न राखै॥
भयप्रद प्रेत सरिस तहँ आई। निजमत यह विधिदीन सुनाई॥
श्री*जिन देव सदा उर वासी। जीवरूप सो प्रभु अविनासी॥

* बुद्धावतार॥

तजे देह सो मुक्त स्वरूपा। देह सदा जानौ मल रूपा॥

दो० जीव सदा परि शुद्ध है मल स्वरूप यह देह।
मज्जनादि सों शुद्धि नहिं जानै बिन सन्देह॥

वृथा करहिं मज्जन केहि हेतू। उत्तर दियो ताहि वृषकेतू॥
स्थूल सूक्ष्म कारण त्रय देहा। विलय होहिं जब बिन संदेहा॥
ब्रह्म भाव पावै तब जीवा। सत चितरूप होय सुखसीवा॥
मो सन ईश भिन्न यह ज्ञाना। दुखप्रद बन्धन हेतु बखाना॥
जो अभेद अनुभव दृढ़ होई। मुक्ति हेतु सुखदायक सोई॥
दुर्लभ मुक्ति सकल जग जानी। देह नाश महँ सो तुम मानी॥
श्रीशंकर की यह वर बानी। शिष्यसहितसुनिअतिहितजानी॥
भाषा वेष सकल निज त्यागी। भयो नाथ सेवा अनुरागी॥
वणिक भयो लावै सब नाजा। निजगणसहितकरतयहकाजा॥
बौद्ध सबल नामा तब आवा। यहिप्रकार को वचन सुनावा॥
बोध निरर्थक तव संसारा। तव अभेद मत में नहिं सारा॥
नरविषाणसमकेहि हित धरहू। क्योंप्रत्यक्षफलहि परिहरहू॥
चहहु अदृष्ट दृष्ट रुचि नाहीं। मुनिवर का समुझे मनमाहीं॥
करिअभेद जीवहि नहिं मानहु। अतिअनर्थयतिवरयहठानहु॥

दो० मम मत चेतन एक जो सो अनेक धरि रूप।
तन मन प्रेरक मुक्त नित आतम मोदस्वरूप॥
कर्ता भोक्ता आपु कहँ परानन्द प्रभु मानि।
इच्छावश क्रीड़ा करै धरै देह सुख खानि॥

तजत देह सो मुक्त स्वरूपा। ऐसो मम मत परम अनूपा॥
सुनि यह वचन शम्भु विज्ञानी। स्वर गँभीर बोले यह बानी॥
देह त्याग तुम मुक्त बखानी। को जग तुम समान अज्ञानी॥
सत्य शौच देवातिथि पूजन। कीन्हे ब्रह्मलोक पावै जन॥
अग्निष्टोम याग करु जोई। होय स्वर्ग्गवासी नर सोई॥
जेहि जेहि देवचरण में प्रीती। तेहि तेहि लोकजाय यह रीती॥

इत्यादिक बहुवचन प्रमाना। जीव गमागम करहिं बखाना॥
दो० सब भूतन में आतमा आतम में सब लोक।
ब्रह्मभावलखि परमपद लहि पुनि होय विशोक॥
सो० निजस्वरूप को ज्ञान जीव न यह जबलौं लहै।
यदपि योग मख दान करै मुक्ति पावै नहीं॥
कल्पित जीव भाव जब त्यागा। सब अनर्थ जनु तबहीं भागा॥
सत चित आनँद रूप निवासा। सो जानहु तुम मुक्तिप्रकासा॥
तेहिते मूढ़ भाव निज तजहू। स्वस्थचित्त सन्मारग भजहू॥
सुनि गुरुवचन परमहित माना। करिप्रणाम अतिशयहर्षाना॥
मागध बन्दी वेष सँभारी। गुरुयशगायक भयो सुखारी॥
करनाटकसन कीन्ह पयाना। अनु मल्लपुर गे भगवाना॥
शिष्यसाथ रविसरिस प्रकासा। एकविंशदिन कीन्ह निवासा॥
द्विजन देखि बोले श्रीशकर। मोहिं सुनावो निज मत सुन्दर॥
मल्लासुर नाशक सुखकारी। तिनसों कहत लोग मल्लारी॥
वाहन तासु श्वानश्रुति गावहिं। वाहनसहितभजहिंसुखपावहिं॥
दो० पहिरैं कण्ठ वराटका भाषा वेष बनाय।
नाचहिंगावहिंकालतिहु बाजेरुचिरबजाय॥
यह प्रकार प्रभु सेवा करहीं। सुख मे मगन सदा हमरहहीं॥
यह वर मतहै श्रुति अनुकूला। सुखदायक नाशक सबशूला॥
सुनत वचन बोले श्रीशंकर। एक अनादि ब्रह्म सुखसागर॥
जासु अंश विधि रुद्र कहावैं। तेहि के ज्ञान मुक्ति नर पावैं॥
रुद्रहि भजि विमुक्त ह्वै जाहीं। तासु अंश*पुनि जे जगमाहीं॥
भैरवादि शिव गन समुदाई। नहिं तिनकीमहिमाअसिगाई॥
तेहिपर श्वान उपासन करहू। द्विज ह्वै अस अनर्थ आचरहू॥
जाहि छुये ते करिये स्नाना। पूजन वेष तासु शुभ माना॥
नित्यकर्म तन मन तुम त्यागा। करहुत्रिकाल नृत्य अनुरागा॥
तब संसर्ग पाप भागी जन। तुम नहिं दर्शन भाषणभाजन॥

* भैरवादयः॥

दो० यह सुनि गुरु चरणन गिरे यथा वृक्ष निर्मूल।
नृपसन्मुखजिमिपापिजनभयोहृदयअतिशूल॥
प्रायश्चित्त होन हित गुरुवर आज्ञा दीन्हि।
तिनकी पद्मपदादिने निष्कृति यहिविधिकीन्हि॥
शिरमुण्डन पहिले करवाये। अयुतबारपुनिसरिअन्हवाये॥
पुनि मृदलेपन पुनि सुस्नाना। ऐसो करि शतबार विधाना॥
औरहु प्रायश्चित्त करावा। द्विज संस्कारबहुरितिनपावा॥
गुरुवरकहँ पुनि शीश नवावा। शिष्यभावलहिअतिसुखपावा॥
शौचस्नान परायण भयऊ। पञ्च देव पूजा मन धरेऊ॥
विद्याऽभ्यास करन सबलागे। मुक्ति योग सब भये सुभागे॥
तेहिपुरते पश्चिम मग गामी। मरुध नाम पुर पहुँचे स्वामी॥
बन्दीलोग विमल यश गावैं। ढक्कादिक बहुवाद्य बजावैं॥
तहां रहा अतिसुन्दर गोपुर। विष्वक्सेन केर सो मन्दिर॥
दो० तेहिके पूरब दिशि विपुल प्रयागार बनवाय।
करि गृहादि की कल्पना बैठे दर्भ बिछाय॥
उन्मनि दशामगनमन करि स्वरूप को ध्यान।
सुखसों तहां बहुत दिन वास कीन्ह भगवान॥
विष्वक्सेन भक्त तहँ आये। करि प्रणाम ये वचन सुनाये॥
समीचीन हमरो मत गुरुवर। विष्वक्सेनभजहिंनिशिवासर॥
सेनापति हरि के सब लायक। अतिदयालभक्तनसुखदायक॥
निज प्रभुको भरोस मन धरहीं। हम यमराज भीतिनहिंकरहीं॥
तासु भक्त हम बिन संदेहा। विष्णुलोक जैहैं तजि देहा॥
वृथा वचन ऐसे जनि कहहू। हरिकी भक्ति विमल उरगहहू॥
विष्वक्सेन एक हरि दासा। ऐसे तहँ बहु करहिं निवासा॥
हरिहि भजैं भक्तनसन प्रीती। है यह रुचिर सनातन रीती॥
शाखा सींचहु मूल विहाई। तुम्हरो मत असमंजस दाई॥
श्रीनारायण को तुम भजहू। निन्दितचिह्नसकलतुम तजहू॥

तासु प्रीति हित करहु स्वकर्मू। पञ्चदेव पूजा शुभ धर्मू॥
भेदभाव तजि करिहौ ध्याना। ह्वैहौ मुक्त पाय शुभ ज्ञाना॥
सुनिप्रभुवचन चिह्न सबत्यागा। श्रीगुरुचरण बढ़ो अनुरागा॥
तब मन्मथ सेवक तहँ आये। गुरुचरणन महँ शीश नवाये॥
दो० मन्मथ सबके उर बसैं रचैं हरैं संसार।
सबजगसेवतजिन्हहिंनित महिमाअगमअपार॥
युगल वर्तुलाकार मनोहर। मदन विभूषणते अतिसुन्दर॥
तिनसों सब जग वशकरिलेहीं। सकललोककहँअतिसुखदेहीं॥
वामावृन्द सङ्ग नित कीजै। दरशपरश सम्भवसुखलीजै॥
जो मनोजकर सुख अवगाहा। सो निर्वाण परमसुखलाहा॥
पञ्च बाण के धरितन अंका। जियतमुक्त हमरहहिं अशंका॥
अप्रमाण वाणी जनि कहहू। मम उपदेश मनोहर गहहू॥
चतुरानन सर्जन नित करहीं। हरि पालैं श्रीशङ्कर हरहीं॥
हरिसुतमदनसकलजगजाना। सोकिमिहोहि यथा भगवाना॥
सवितानन्दनशनि*सबजाना। तासुप्रभाकिमि तरणिसमाना॥
नारि संग विषयिनकर संगा। कीन्हे होत ज्ञान गुणभंगा॥
वर्जित कर जहँ अंगीकारा। महा अपावन पन्थ तुम्हारा॥
बन्ध रूप सबको जग कामा। सो किमिहोहिमुक्ति को धामा॥
दो० तजे चिह्न गुरु वचन सुनि शुभमारग मन दीन्ह।
तेहि पुर उत्तर ओर प्रभु मुदित गमन तब कीन्ह॥
अद्भुत मागध पुर प्रभु आये। तहँ कुबेर सेवक सुनि पाये॥
नवनिधि हेमपाद अतिसुन्दर। चिह्न धरे पहुँचे जहँ गुरुवर॥
करिप्रणाम तिन वचनसुनावा। यहि प्रकार निजमत दर्शावा॥
नवनिधि के प्रभु धनद कहावैं। तासु भक्त नितप्रति सुखपावैं॥
बिनधन धर्म न कोउ करिपावैं। नहिंलौकिकसुखपुनिबनिआवैं॥
हम कुबेर पद के अनुरागी। कबहुँ न दुख दरिद्रके भागी॥
ब्रह्मादिक सुरनाथ कहावैं। ते सब धनद दियो धन पावैं॥

* शनैश्चर॥

पालक जानि करहिं सुर सेवा। हैं कुबेर देवन के देवा॥
दो० दासी तिनकी यक्षिणी सुर सुन्दरि अभिराम।
ताहू के प्रभु भजन सों लोग लहैं मन काम॥
मुक्त होनकी कामना धनद भजन को त्याग।
लहहिं मन्दते सुख न कछु तिनकर परम अभाग॥
तेहि कारण जो तुम सुख चहहू। धनद अनन्य भक्ति उर गहहू॥
तव मत की प्रमाण कछु नाहीं। निश्चय सुनो मन्द मोहिं पाहीं॥
धन स्वामी कुबेर किन होई। धन ते तृप्ति लहै नहिं कोई॥
जिमिजिमिलाभलोभअधिकाई। विना तृप्ति नहिं धर्म दृढ़ाई॥
मुक्ति विचार दूरि नित रहई। तेहिते सदा त्याग श्रुति कहई॥
अर्थहि अनरथ भावहु नित्यं। जेहिते सुख लव नहिं सुनु सत्यं॥
पुत्रहु ते धनिकन को भीती। भयप्रद धनकी है नित रीती॥
धन ते धर्म होय तुम गावा। बिन प्रारब्ध कौन धन पावा॥
हेमगर्भ चतुरानन नामा। लक्ष्मीपति श्रीहरि सुखधामा॥
तिन कुबेर दीन्हो धन पावा। कहत तुमहिं असलाज न आवा॥
ईश्वरनिंदन पुनि जानि कहहू। चिह्नत्यागि वैदिकपथ गहहू॥
ब्रह्मनिष्ठ संध्यादिक करहू। भेद त्यागि भवसागर तरहू॥
यहिविधिसुनिश्रीगुरुमुखबानी। चिह्नत्यागि गुरुपदरति मानी॥
दो० इन्द्र भक्त जन आय कै कीन्हो गुरुहि प्रणाम।
सब सुर रूप सुरेश प्रभु पुरवै जन मन काम॥
नाथ अनुज वामन जिनकेरा। गावहिं बहुश्रुतिसुयश घनेरा॥
सुधा रत्न जिनके गृह माहीं। इन्द्र समान देव कोउ नाहीं॥
सर्वरूप यतिगण सिखदाता। ज्ञानहीन यति दण्ड विधाता॥
एक बार ऐसे यति पाई। सबहिं मारि वृकदिये खवाई॥
तुमहुं तासु सेवा नित करहू। जानि दण्डधर तेहि को डरहू॥
इन्द्र उपासन जब अस कहेऊ। श्रीगुरुवर यह उत्तर दयऊ॥
इन्द्रशब्द जहँ जहँ श्रुतिमाहीं। तासु अर्थ कछु सुरपति नाहीं॥

जिमिप्रभुमहिमा को नाहिंअंता। तेहिविधि तिनके नामअनंता॥
दो० जगकर्ता जो इन्द्र को मानहु सुर गण नाहिं।
लोकपालवरुणादि सब जगकर्ता क्यों नाहिं॥
सहस चतुर्युग बीतहिं जबहीं। होयएकदिनविधि को तबहीं॥
इन्द्र चतुर्दश तेहि दिनमाहीं। बुद्बुदसम पुनिहोहिंबिलाहीं॥
ताहि सृष्टि कर्तार बतावहु। वृथा कौन हित गाल बजावहु॥
सुधा पाय सो ईश न होई। औरहु देव लहैं पुनि सोई॥
सबके प्रलय रहैं प्रभु जोई। जग कारण तारण हैं सोई॥
तासु ज्ञान बिन मुक्ति न होई। भजहु ताहि सब संशय खोई॥
सुनि गुरुवचनशिष्यसबभयऊ। सो कीन्हा जो आयसुदयऊ॥
यमप्रस्थ पुर महं प्रभु आये। यम के भक्त तहां गुरु पाये॥
महिषचिह्न भुज माहिं सवांरे। माथ नाय ये वचन उचारे॥
जेहि कारण यम जग संहर्त्ता। तेहिते हैं पालक पुनि कर्त्ता॥
यम को भक्ति सहित जे भजहीं। लहहिंमुक्ति भवबन्धन तजहीं॥
मखभोगी यम सब श्रुति गावैं। परब्रह्म यमराज कहावैं॥
दुइ मूरति यमकी श्रुति गाई। एक शुक्ल पुनि कृष्ण सुहाई॥
श्वेतरूप निर्गुण तुम जानहु। कृष्णरूप यमराजहिमानहु॥
जग कारण प्रभु निर्गुण रूपा। जेहि ते भे सब देव अनूपा॥
निर्गुण रूप मुक्ति को दायक। सगुणरूप जग क्षेमविधायक॥
सगुण उपासन हम सब करहीं। मूरतिश्याम हृदयनिजधरहीं॥
तुम जो अवशिमुक्ति निजचहहू। यमआराधन मनकरि लहहू॥
श्रुति विरुद्ध यह वचन तुम्हारा। कठवल्ली श्रुति करहु विचारा॥
नचिकेता पितु आज्ञा पाई। यमपुर गमने भूमि विहाई॥
गये रहे यम विधि के धामा। नचिकेतासुनिकियो विश्रामा॥
तीनिदिवसबिनजलबिनभोजन। रहो तहां नचिकेता सज्जन॥
आय धर्म * तेहि शीश नवावा। धर्म मूल यह वचन सुनावा॥
सो० किये तीन उपवास मम गृह में तुम अतिथि प्रिय।

* धर्मराज॥

अब तजि सकल प्रयास मांगौ हमसों तीनि वर॥
यह वरदान प्रथम मोहिं देहू। पिता करै जनि मम संदेहू॥
अग्नि उपासन मोहिं सिखावो। तीजे आतमज्ञान बतावो॥
दुइ वरदान तुरत तेहि पाये। तीजे में यम लोभ दिखाये॥
पशु सुत धन पृथ्वी को राजा। सुरपुर के बहु भोग समाजा॥
किये न जब तेहि अंगीकारा। तब दीन्हो सो ज्ञान उदारा॥
सर्व वेद जेहि वर्णन करहीं। जेहिके हित सब तप आचरहीं॥
ब्रह्मचर्य्य व्रत जेहि के कारन। सो संक्षेप सुनावहु सज्जन॥
बिन शरीर जो सब तनवासी। व्यापकचेतनघन अविनासी॥
आतमरूप विगत सब शोका। जेहिजाने जग होय अशोका॥

दो० मृत्यु *लगावन रूप है सब जग ओदन तासु।
जानिसकैकोताहिजग बड़ि महिमा असि जासु॥

सुनि सो ज्ञान कृतारथ भयऊ। नचिकेता निजगृह तब गयऊ॥
जब यम प्रभु को भोजन भयऊ। निजमुखधर्मराज यह कहेऊ॥
सो यम जग कारण क्यों होई। ब्रह्म छांड़ि जानौ नहिं कोई॥
सोइ धारै विधि हरि हर रूपा। सेवन योग सुस्वामि अनूपा॥
चिरंजीवि मुनि रक्षण कीन्हा। तबशिवयमहिंदण्डतहँदीन्हा॥
महापापरत सुन्दर नामा। तेहिजागरणकीन शिवधामा॥
व्रतशिवरात्रि लोभवश कीन्हा। मरताहि यमदूतनगहिलीन्हा॥
शिव के दूत तहां चलिआये। यमकिंकर तिन मारि भगाये॥
सुन्दर शंभु लोक तब गयऊ। शिव को भक्त मुख्य सो भयऊ॥
विप्र अजामिल धर्म विहाई। दासी विवश मृत्यु जब पाई॥
यमकिंकरन बांधिलियो जाई। महाभयानक रूप दिखाई॥
रहा एक बालक तिहि बारा। नारायण करि ताहि पुकारा॥
विष्णुदूत तेहि अवसर आई। करिताड़न तेहि लियो छुड़ाई॥
तेहि कारण तुम चिह्न विहाई। वैदिक कर्म करौ मनलाई॥
तब तुम सब पावन ह्वैजैहौ। ज्ञान पाय निर्भय पद पैहौ॥

---

* यम॥

करि प्रणाम गुरुपद अनुरागी । भये तथा ते सब बड़ भागी ॥
दो॰ तीरथराज प्रयाग महँ पुनि आये यतिराज ।
तेहि थल वासी विप्र गण गवने नाथ समाज ॥
पाश चिह्न धर वरुण के आये तहँ बहु भक्त ।
ध्वजा चिह्न धारी तथा गये पवन अनुरक्त ॥
पूरण अंक धरे महिदेवा । करहिं सदा पृथ्वी की सेवा ॥
तीरथ पूजक पुनि तहँ आये । बिन्दु चिह्न धर परम सुहाये ॥
तिन आपन मत आय सुनावा । प्रथमहिं वरुणभक्तअसगावा॥
जलस्वामी जग जीवन दायक । सेवायोग वरुण सब लायक ॥
नाथ पवन है सब कर प्राना । सब देवन महँ परम प्रधाना ॥
भूमि सकल धारक जगमाहीं । तेहि सम कोइ देवता नाहीं ॥
सब तीरथ जग में सुखदायक । त्रयवेणी निर्वाण विधायक ॥
नारद मुनि महिमा बहु गाई । दर्शनही सों मुक्ति बताई ॥
मज्जनफल तिनहूं नहिं जाना । वेदहु तासु करें गुण गाना ॥
शंकर कह्यो सुनौ तुम चारी । सत्य सत्य यह गिरा हमारी ॥
तुम अनित्य सेवक जगमाहीं । यहिते कबहुँ मुक्ति तव नाहीं ॥
जल तीरथ महिमा श्रुतिगाई । तन मन पावकता दर्शाई ॥
तुम सब अपन मोह परिहरहू । ज्ञान हेतु उद्यम नित करहू ॥
ज्ञान लाभ आतमगति पैहौ । जीवनमुक्त तबहिं ह्वैजैहौ ॥
शिष्य भये ते तजि निज अङ्का । गुरुअनुराग तजी सब शङ्का॥
शून्य वाद मत धर शिर नाई । तर्क युक्त यह गिरा सुनाई ॥
दो॰ मारग में आवत रह्यो देखि परो जो मोहिं ।
अतिअचरज हम को भयो नाथ सुनावहुँ तोहिं ॥
मृगतृष्णाजल मज्जन कीन्हा । व्योमपुष्प शेखर धरि लीन्हा॥
शश विषाण कर चाप सुहावा । असबन्ध्यासुत सन्मुखआवा॥
देव बुद्धि करि ताहि प्रणामा । तव ढिग मैं आयों सुखधामा॥
तब बोले शंकर सुर साईं । नाम आपनो देहु सुनाई ॥

निरालम्ब संज्ञा हम पाई। क्लृप्त नाम पितु कर सुखदाई ॥
सो ममभत वक्ता प्रभु रहेऊ। सुनि अस वचन शंभु तब कहेऊ॥
शून्य वाद निंदित जग माहीं। तेहि ते ताहि ब्रह्मता नाहीं ॥
तासु प्रकाशित सब जग भासै। श्रुति यह विधि सद्भाव प्रकासै ॥
तेहि ते मूढ़ भाव परिहरहू। आतम तत्त्व सदा उर धरहू ॥
तेहि पुनि कह्यो सुनो मुनिरावा। व्योम ब्रह्म श्रुति प्रकट जनावा ॥
ताही ते सब भूत प्रकाशा। तेहि में पुनि पावहिं प्रभु नाशा ॥
खं कं ब्रह्म श्रुती जो गावा। उभय शब्द सो ब्रह्म दिखावा ॥
खं ते व्यापकता दर्शाई। कं पद अनंदता समुझाई ॥
सत चेतन आनन्द स्वरूपा। जानहु सो तुम ब्रह्म अनूपा ॥
आकाशादि केर सो कारण। तासु ज्ञान भव दुःख निवारण॥
शालावति शैवलि इतिहासा। छांदोगः श्रुति माहिं प्रकासा ॥

दो० निर्णय कीन्हो तहां बहु देखहु तजि अज्ञान।
बोलो हर्षित भयों मैं तव दर्शन भगवान ॥

मैं पावन ह्वै गयो गोसांई। अब उपदेश करौ मुनिराई ॥
व्योमसरिस व्यापक भगवाना। सब उरगत आनन्दनिधाना ॥
तासु उपासन भेद विहाई। किये मुक्ति पैहैं सुखदाई ॥
करि प्रणाम सेवक सो भयऊ। पुनि वराह अनुचर अस कहेऊ॥
जिन महि प्रलय पयोधि उधारी। तासु भजन सब विधि सुखकारी॥
मुक्ति हेतु तेहि सेवा करहू। दंष्ट्रा चिह्न भुजा महँ धरहू ॥
विप्र धर्म तप वेद बतायो। चिह्न विधान न कहुँ सुनि पायो॥
वैदिक धर्म त्याग नहिं करहू। सगुण उपासन जो मन धरहू ॥
हरि हर रूप भजो मन लाई। ज्ञान भयो तब मुक्ति सुहाई ॥
सुनि गुरुवचन शिष्य सो भयऊ। परम तपस्वी सो ह्वै गयऊ ॥

अथ लोकोपासकः ॥

काम कर्म नामा तब आयो। आपन मत यहि भांति सुनायो॥
लोक उपासन हम प्रभु करहीं। और देव नहिं निज उर धरहीं ॥

ऐसी करै उपासन जोई। सत्य लोक पावत है सोई॥
प्रलयकाल सब लोक विनाशा। अनितसेय भलज्ञानप्रकाशा॥
यह सुनि गुरुपद वन्दन कीन्हा। ब्रह्मनिष्ठ पदवी मन दीन्हा॥

अथ गुणोपासकः॥

गुण सेवक अस आय सुनावा। तीनगुणन यह जग उपजावा॥
ब्रह्मादिक सुरके गुण कारण। तासु भजन जानहु जगकारण॥
दो० अहंकारसों तीनि गुण उपजे सब जग जान।
नश्वर सेवा करहु तुम यह तुम्हार अज्ञान॥
शिष्य भये सुनि गुरुवर बानी। शुद्ध अद्वैत भाव उर आनी॥
सांख्यप्रधान वादि तब आयो। प्रथमहिंगुरुचरणनशिरनायो॥
जग कारण प्रभु जानु प्रधाना। स्मृति जानहु नाथ प्रमाना॥
त्रयगुण जो समभाव विराजा। ताहिप्रधानकहहिं यतिराजा॥
महदादिक कारण है सोई। सो अव्यक्त*व्यक्त जब होई॥
रचै जगत पर ते पर सोई। ताहि भजे बिन मुक्ति न होई॥
तुमहुं करहु प्रभु तेहि स्वीकारा। तब बोले गुरु गिरा उदारा॥
वेद विरोध वचन जनि कहहू। जो हम कहहिं सत्य सो गहहू॥
स्मृति होय जो श्रुति अनुकूला। सो प्रमाण है नतरु अमूला॥
जग कारण प्रधान श्रुति माहीं। वरणी कत कैसेहूं नाहीं॥
ईक्षण†युक्त सृष्टि श्रुति गाई। अह प्रधान जड़ वेद बताई॥
वेदव्यास शारीरिक माहीं। सृष्टि हेतु मानी सो नाहीं॥
दो० जड़ को ईक्षण नहिं बनै जगकारण सो नाहिं।
सत चित आनँदरूप जग हेतु कह्यो श्रुतिमाहिं॥
तेहिते मूढ़ भाव निज त्यागी। मत अद्वैत होहु अनुरागी॥
सुनि गुरुवचन बहुरि सो कहई। हमरेमत प्रमाण श्रुति अहई॥
जो अचिन्त्य अव्यक्त स्वरूपा। इत्यादिक वरणौं यतिभूपा॥
जो अव्यक्त शब्द श्रुति गावा। तेहिसों प्राज्ञ रूप दर्शावा॥
गुण समता सेवा सन ज्ञाना। नहिं उपजै देखो धरि ध्याना॥

---

* अप्रकट † विचार॥

यहिप्रकार जब गुरु समझावा। शिष्यभयो गुरुपदशिरनावा ॥
पुनि आयो कापिल मतधारी। गुरुसमीपआसिगिराउचारी ॥
परमप्रमाणिक ममहत सुन्दर। योग मुक्तिदायक है यतिवर ॥
षटचक्रन कर भेद प्रकारा। करि पावै निर्वाण उदारा ॥
जो तुम नाथ मुक्ति अनुरागी। गहौ मोरमत सब कुछ त्यागी ॥
शंभु कह्यो तव मत यह नाहीं। विद्यादहर कही श्रुतिमाहीं ॥
चित्तवृत्ति रोकन हित योगा। मुक्ति हेतु नहिं तासु प्रयोगा ॥

दो० अजपा मन्त्र जाप को भाव रहै जेहि माहिं।
भेद गन्ध छूटै नहीं योग मुक्ति प्रद नाहिं ॥
सबको देखै आपु महँ आपुहि सब जग माहिं।
ब्रह्मभाव लखि मुक्ति है और हेतु कछु नाहिं ॥

ज्ञान मुक्तिप्रद वरणै वेदा। आवश्यक न चक्र कर भेदा ॥
श्रवणादिक साधन नर गहहीं। हृदयविमलरूपहिनिजलहहीं॥
गायो श्रुति वेदान्त विचारा। सो संन्यास युक्त निर्द्धारा ॥
इत्यादिक श्रुति वचन विचारी। योगआदरहिंनहिंअधिकारी॥
विनाज्ञान यतिवर असभाखहु। हमरो वचनहृदयकरि राखहु ॥
जेहि खेचरि मुद्रा नहिं जानी। अहम्ब्रह्म बोले यह बानी ॥
तासु जीभ छेदन करि डारै। मन में नहिं कछु दोष विचारै ॥
सरितात्रय*संगम नहिं जानै। सोहमस्मि जो आपुहि मानै ॥
रसना छेद तासु करि लीजै। फिर ऐसो नहिं बोलन दीजै ॥
शृंगाटक जेहि द्विज नहिं जाना। अहम्ब्रह्म अपने को माना ॥

दो० पूरण मण्डन पन्थ सो मन उन्मनी स्वरूप।
तीनि अवस्थाठौरपुनि जेहिविधि कह्योअनूप ॥
तेहि बिन जानै कहै जो अहम्ब्रह्म यतिराज।
तासु गिरै शिर झूठ में कहौ न साधु समाज ॥

त्रयप्रकारजेहि सबविधि जाना। लहहि ब्रह्म आनन्द सुजाना ॥
जो हठ योगकरै मन लाई। सो पुनि ब्रह्मलोक महँ जाई ॥

---

* इड़ा पिंगला सुषुम्णा ॥

यहिविधिमुक्तिचाह जेहि होई। योग करै मनधरि पुनि सोई॥
आपहु ग्रहण करौ मन लाई। तब गुरुवर यह गिरा सुनाई॥
योग रीति निर्वाण न होई। मन एकाग्र हेतु है सोई॥
वेदहु सन विरुद्ध यह नाहीं। मूढ़ भाव तव इतने माहीं॥
जो तुम खेचर्य्यादि बखानी। तिन आधीन मुक्ति पहिंचानी॥
मुक्ति ज्ञानबिन कोउ नहिं पावै। जहँ तहँ श्रुति यह नेम दृढ़ावै॥
तेहिते वेद विहित निजकर्मू। करहु त्यागि सब मनकर भर्मू॥
चित्तशुद्ध पुनि उपजै ज्ञाना। गुरुमुखतत्त्वमसी विधिजाना॥
करि विचार आतमगति पाई। बिन संदेह मुक्त ह्वै जाई॥
गुरुचरणन प्रणाम तेहिकीन्हा। प्रभुउपदेश यथाविधि लीन्हा॥
अणुवादी ⊛ शंकर पहँ आये। यहिप्रकार तिन वचन सुनाये॥
जब परमेश सृष्टि मन धरई। तेहिक्षण यह उपाय अनुसरई॥

दो० पञ्चभूत अणुरूप नित तिन्हहिं मिलावै ईश।
प्रलय कियो चाहै जबहिं भिन्न करै जगदीश॥

तिनकर कबहूं नाश न जानहु। योग वियोगरीति उर आनहु॥
श्रुति विरोध ऐसो जनि भाखौ। यह संशय मन में नहिं राखौ॥
व्योमादिक सब प्रभु उपजाये। तब केहिविधि वै नित्यकहाये॥
एक नित्य दूसर नहिं कोई। जेहिसों सृष्टि प्रलय सब होई॥
जो परमाणु सनातन भयऊ। सबको कर्त्ता ईश न रहेऊ॥
बड़ो दोष तुम्हरे मत माहीं। सुनै योग तुम्हरो मत नाहीं॥
जो गौतम विद्या मन लावै। मरे शृगालयोनि सो पावै॥
इत्यादिक वाणी उर धरहू। वेगि तर्क मन ते परिहरहू॥
जो आतम विद्या मन लैहौ। अनुभव पाय मुक्त ह्वै जैहौ॥
धीर शिवादिक सुनि गुरुबानी। प्रभु उपदेश गहो हितजानी॥
शिष्यन सहित प्रयाग नहाई। पुनि काशी गवने सुखदाई॥
शिष्य यूथ करताल बजावैं। मधुर स्वरन प्रभु कीरति गावैं॥
करहिं एक शङ्खध्वनि भारी। देखिदेखि विस्मित नरनारी॥

⊛ नैयायिक॥

तीन मास तहँ कीन निवासा ।गुरुआगमसुनिसहितहुलासा॥
दर्शन को आवहिं द्विजराजा । जुरै तहां बहु विप्र समाजा ॥
कर्म परायण गुरु पहँ आई । करि प्रणाम यह गिरा सुनाई ॥
जग थिति लय पालन संधाता । यशअपयशसुखदुखकरदाता॥
कर्म सकल प्रद श्रुतिगन गावैं । सुभगयोनि शुभकर्महि पावैं ॥
नीच कर्म सन पांवर देहा । लहै सदा नर बिनु सन्देहा ॥
कर्मसिद्धि जनकादिक पाई । गीता में अस कह्यो कन्हाई ॥
दो० कर्मकिये जो स्वर्ग सुख सोई पद निर्वान ।
तेहि कारण सो कीजिये सुनि बोले भगवान ॥
कर्म जासु यह जग श्रुतिगावा । ब्रह्म विश्व कारण समुझावा ॥
सो सत चित आनन्द स्वरूपा । जगकारण न कर्म जड़रूपा ॥
भेद बुद्धि कर्महि मन लावैं । अनुभव बिन न मुक्ति ते पावैं ॥
शिष्य भये सुनि गुरुवर बानी । परविद्या सबविधि मनआनी॥
तब वा भरण नाम तहँ आई । शिष्य सहित बोला शिरनाई ॥
देवपाल उड़पति सब लायक । पूनौ * महँ पूजे सुखदायक ॥
चन्द्रलोक परलोक प्रकाशै । ताहि भजै भवश्रम सबनाशै ॥
चन्द्रभक्त की सुनि यह बानी । उतरु दियो शङ्कर विज्ञानी ॥
वापी कूपाराम बनावहिं । इष्टकर्म नितप्रति मनलावहिं ॥
ते नर चन्द्रबिम्ब मग जाई । पुनि नरलोक गिरहिं ते आई ॥
देवअन्न विधु श्रुति पुनि गावै । ताहि भजै विधुलोक सिधावै ॥
मत अद्वैत गहो मन लाई । मुक्त होहु नहिं आन उपाई ॥
शिष्य भये गुरुपद शिरनाये । ग्रह सेवक मुनिवर पहँ आये ॥
भौमादिक सेवा श्रुति गाई । मुक्ति होय नहिं और उपाई ॥
ग्रह पीड़ा परिहार बताये । मुक्तिहेतु नहिं ग्रह श्रुति गाये॥
दो० बिन चेतन के बोधते लहै न पद निर्वान ।
ज्ञान रूप आनन्दघन जाहि करैं श्रुति गान ॥
करि प्रणाम शिरराखि दिवेशा । सबन सुनो प्रभुकर उपदेशा ॥

* पूर्णमासी ॥

तबक्षपणाक गुरुसनअसकहेऊ । मैं षटमास नाथ सँग रहेऊ ॥
काल ब्रह्म गुरुवर मैं जाना । सोइ मुक्तिप्रद है भगवाना ॥
काल जन्म श्रुति महँ दर्शावा । नश्वरसेवा केहि सुख पावा ॥
जब अद्वैत भाव मन ह्वैहै । क्षपणाक तबहिं मुक्तिपद पैहै ॥
सुनि पुनीत श्रीगुरु मुख बानी । ब्रह्मनिरति मानी सुखखानी ॥
पितृ उपासक सम्मुख आई । निजमतयहविधिदीन्हसुनाई ॥
चन्द्रबिम्ब ऊपर के वासी । नित्य मुक्त निज भक्त सुपासी ॥
सात भेद जानहु तिन माहीं । तीन वृन्द की मूरति नाहीं ॥
चारिवृन्द मूरति धर शङ्कर । अग्निष्वात्तादिकसबसुखकर ॥
तिनकर भजन चारिफलदायक । सेवनीय सबविधि मुनिनायक ॥
गृही जो सत्यबयन नित भाषा । श्राद्धकरै संयुत अभिलाषा ॥
दो० चन्द्रमास की रीति सों मास सहै मध्यान ।
पितृन को तत्प्रीति सों तेहि दिन पिण्डप्रदान ॥
अवशिकरै सुनिशङ्करकहेऊ । यहश्रुतिश्रुतिगोचरनहिंभयऊ ॥
कर्म सुअन सो मुक्ति न होई । एक त्याग लहिये पुनि सोई ॥
तेहि कारण सब कर्म विहाई । गुरुमुख अनुभवरीति सुहाई ॥
सुनि विचारि पावै निर्वाना । तिनगुरुकहँ तबकीन प्रमाना ॥
पुनि पायो उपदेश सुहावन । भये कृतारथ पावन पावन ॥
शेष उपासक पुनि तहँ आवा । गरुड़भक्त दो वचन सुनावा ॥
हरि के शयन शेष सबलायक । हरिवाहन निर्भयपददायक ॥
उभय लही जिन पाय बड़ाई । क्यों न भजहु तेहिको मनलाई ॥
मन निर्मल पुनि ह्वैहै ज्ञाना । गुरुमुख सुनि पैहो निर्वाना ॥
महि शिर लाय सुना उपदेशा । शिष्यभये शुभजानि निदेशा ॥
दो० सिद्धोपासक आयकै निज मत दीन सुनाय ।
गुरुउपदेश कृतार्थ हम भये मन्त्र वर पाय ॥
सत्य नाथ आदिक सिद्धेश्वर । श्री शैलादि बसैं श्रीशङ्कर ॥
अञ्जनादि विद्या हम पाई । सकल पदारथ देहि जनाई ॥

अतिउत्तम यहमत सुखदायक। आपहु के प्रभु गहिबेलायक॥
लोभि रहे थोरी अभिलाषन। तिनकेसाथउचितनहिंभाषन॥
लाभ न वेष विचित्र बनाये। दोष होय परधन के पाये॥
बहुत जिये स्वारथ नहिं होई। दुखमय देह जान सब कोई॥
देहादिक फल तुच्छ विहाई। मुक्ति उपाय करहु मनलाई॥
सुनि गुरुगिरा शिष्य ते भयऊ। पुनि गन्धर्व भक्त तहँ गयऊ॥
विश्वावसु सेवा मन लाई। नाद‡ विवेक होय सुखदाई॥

दो० बिन्दु कला के बोधते भये कृतारथ रूप।
मुक्ति हेतु आपहु सिखौ विद्या परम अनूप॥

वेद विरोध कहौ पुनि नाहीं। शब्दातीत कह्यो श्रुतिमाहीं॥
जो अशब्द निस्पर्श स्वरूपा। निरस अगन्ध अनादि अनूपा॥
तासु ज्ञान जब यह नर पावै। तब पुनिकालवदननहिं आवै॥
स्मृतिहूं पुनि ऐसोई गावा। नाद अगोचर कहि समुझावा॥
बिन्दुकला निर्गत जेहि माना। वेद अर्थ तेहि नर भल जाना॥
नाद अगोचर ब्रह्म विचारी। ह्वैहौ तुम लहि मुक्ति सुखारी॥
शिष्य भये तजि नाद विवादा। ब्रह्मलीन भे विगत विषादा॥
तब वेताल भक्त तहँ आये। चिता भस्म सब अंग रमाये॥
भूत उपासन हम मन धरहीं। तेहिबलसकललोकवशकरहीं॥
हैं अयुक्त तव मत दुखदायक। श्रुतिवर्जितनहिंसुनिबेलायक॥
दूरि जाहिं सब भूत घनेरे। जिन धरती महँ किये बसेरे॥
भूत विघ्नकारक दुखदाई। नाश होहिं शिव आज्ञा पाई॥
इत्यादिक हैं वचन प्रमाना। भये भ्रष्ट तजि कर्म विधाना॥
अब निजकर्म रुचिर मनलावो। अरु अभेद मत बुद्धि दृढ़ावो॥
जो स्वकर्म हठवश शठ त्यागा। लहहि न शुभगतिपरम अभागा॥
गुरुवर वचन शीश तिन नावा। शिष्य भये श्रीगुरुमत भावा॥

दो० तिन तिन देशन जाय प्रभु पाखण्डी द्विज जीति।
यह विधि थापी धरणिमहँ वैदिकपथ शुभनीति॥

‡ नाकारं प्राणनामानं दकारमनलं विदुः। जातः प्राणाग्निसंयोगात्तेन नादोऽभिधीयते॥ १॥

प्रतिवादिन के दर्प मिटाये। पश्चिम सिन्धुतीर प्रभु आये॥
लहरिनसों जनु हाथ चलावै। दुन्दुभि निन्दक शब्द सुनावै॥
जनु निगूढ़ कछु अर्थ सुनावा। प्रतिवादी सागर जनु आवा॥
बहु भ्रम यह सागर मन माहीं। जड़स्वरूप यह चेतन नाहीं॥
पहिले विबुधन यह मथिडारा। हृदयसाम जनु शम्भु विचारा॥
निदरि सिन्धु शंकर भगवाना। कीन्ह गोकरण ओर पयाना॥
पहुँचि सिन्धुमहँ करि अस्नाना। गोकर्णेश्वर पूजि सुजाना॥
रची बहुरि अस्तुति श्रीशंकर। छन्द भुजंगप्रयात मनोहर॥
पुनि मन्दिर महँ कीन निवासा। श्रुतिशिर को तहँ भयो प्रकासा॥
नीलकण्ठ शिव मत विज्ञानी। तासु शिष्य हरदत्त सुबानी॥
निजगुरु को ये वचन सुनाये। शंकर विजय हेतु तब आये॥
मण्डनादि जीते द्विज राजा। शिवमन्दिर यतिराज विराजा॥
नीलकण्ठअतिशय अभिमानी। शिवकर भक्तमुख्य गुणखानी॥
सकल अर्थ शिवपक्ष लगाई। ब्रह्मसूत्र की भाष्य बनाई॥
रत्न समान अनेक प्रबन्धा। रचोहारइव अधिक सुबन्धा॥
शिष्यगिरासुनितेहि असकहेऊ। आये शंकर तब कह भयऊ॥
बरु सागर निज तेज सुखावैं। अन्तरिक्ष सों तरणि गिरावैं॥

दो० वसन समान लपेटि कै गज वीथी बरु लेहिं।
है परंतु सामर्थ्य नहिं मोहिं पराजय देहिं॥

वादि परम तस टारनहारे। दिनकर कर सम तर्क हमारे॥
तिनसन करहु तासु मतखण्डन। अबहिं जायमैंनहिं कछुमण्डन॥
चला कोपि जल्पत द्विजनाथा। बहुत शिष्यवर जेहि के साथा॥
कण्ठ रुचिर रुद्राक्ष सुहाये। श्वेत विभूति सकल तनछाये॥
शैव शास्त्रमहँ परम प्रवीना। आवत दीख यतीश धुरीना॥
निकटजायतेहि आसन लीन्हा। अपनपक्ष थापन सो कीन्हा॥
कपिला*गमजिमिप्रथमप्रकाशा। शुकपितुजेहि विधिताहिप्रकाशा॥
तब सुरेश यह विनय सुनाई। प्रथम लखहु प्रभु ममचतुराई॥

* सांख्य॥

असकहि गुरुहि सुरेश सुजाना। तेहि सँग महावादतिनठाना॥
मैं जानौं तुम्हारि चतुराई। देखहुँगो यतिवर निपुणाई॥
असकहि ताहि निवारण करेऊ। यतीसिंह सम्मुख सो भयऊ॥
परमत मनहु कमलकर नाला। भक्षक यतिवरवचनमराला॥
जो जो पक्ष प्रबलमति कीन्हे। यतिवर सबखण्डन करिदीन्हे॥
नीलकण्ठ निज पक्ष विहाई। गुरुमतखण्डन रुचि उपजाई॥
तुम्हहिं इष्ट पर जीव अभेदा। सो तुम कहौ न वरनहिं वेदा॥
है अल्पज्ञ जीव मुनिनायक। पर सर्वज्ञ सकल सुखदायक॥
है विरुद्ध धर्माश्रय दोऊ। यथा तेज तम एक न होऊ॥
रविप्रतिबिम्ब एककरि मानहु। सो न घटै नीके करि जानहु॥
दर्पनबिम्ब सांच नहिं होई। घटै तहां नहिं उपमा सोई॥
मुख समीप दर्पन जब आवै। तेहि में जो प्रतिबिम्ब दिखावै॥

दो० दर्पन गत आनन मृषा मानैं तव मत माहिं।
मायिकत्यागि विरोध दोउ जो अभेद सो नाहिं॥

शत प्रमाण वरणौ किन कोई। विदित भेद कहु दूरि न होई॥
जो प्रत्यक्ष भेद नहिं मानौ। अश्वधेनु एकहि करिजानौ॥
अस प्रत्यक्ष मान की हानी। इष्ट होय नहिं मुनि विज्ञानी॥
मैं हौं ईश कहे असि बानी। होय न उभय भेद की हानी॥
यह प्रकार शतयुक्ति दृढ़ाई। मत अद्वैत मथा द्विजराई॥
जिमिप्रफुल्लवन कमलमनोहर। मथै बालगज ताहि चपलतर॥
दोषजाल वर्णित सुनि मुनिवर। कहनलगे तेहि सबकर उत्तर॥
तत्त्वमसी जेहि भाँति अभेदा। कहैसोसुनु आशय तजिखेदा॥
वाच्य अर्थकर मेटि विरोधा। लक्ष्य अर्थ श्रुतिकरै प्रबोधा॥

दो० अश्वधेनु उपमा कही तहँ नहिं कछू प्रमान।
जेहिवश युगल अभेद को होय लक्षणाज्ञान॥

सो० परिच्छिन्न विभुरूप जीवेश्वर यतिनाथ द्वौ।
यहते भिन्न स्वरूप नहिं दूसरि तहँ लक्षणा॥

सुनि अस वचन कहा भगवाना । इहां करौ ऐसो अनुमाना ॥
परिच्छिन्न अरु व्यापक भावा । दृश्य होनते कल्पित गावा ॥
रज्जूगत भुजङ्ग जिमि भासा । सांच होय नहिं सो अवभासा ॥
सत्य एक परमाऽधिष्ठाना । भासै तहँ जीवेश्वर नाना ॥
एकरज्जुगत जिमि भ्रम नाना । सर्पमाल महिविवरसमाना ॥
देहादिक जस हम जड़ माना । दृश्य सकल जड़ तुमहू जाना ॥
रहा शेष चेतन सत रूपा । गहहु सोई चैतन्य स्वरूपा ॥
तथा ईश गत जग व्यवहारा । सबकल्पितअसकरहुविचारा ॥
रजतसीपमहँ जेहिविधि नाहीं । तथा जगत यह ईश्वरमाहीं ॥
अधिष्ठान चेतन अविकारी । ईश रूप करु अंगीकारी ॥

दो० मूढ़ भाव सर्वज्ञ पुनि गत उपाधि तहँ नाहिं ।
चेतन चेतन एक हैं यह आशय श्रुतिमाहिं ॥
यथा पुष्पढिग फटिकमणि भासै लोहित रूप ।
पुष्प उपाधी दूरिकरि पुनि सो विमल स्वरूप ॥

सो० सांच होत जो भेद भेददर्शि भय प्राप्ति तौ ।
निजमुखकहत न वेद सो वरणीबहुभांतिश्रुति ॥

मृत्युसो अधिक मृत्यु सो पावैं । नाना रूप भेद मन लावैं ॥
थोरहु अन्तर जो निज देखा । ताहिहोहिं भयवृन्द विशेखा ॥
भेद बुद्धि विपरीत कहावैं । जाहि किये नाना दुख पावैं ॥
श्रुति वर्णित अभेद परमारथ । जो न होतद्विजराजयथारथ ॥
कहतिनश्रुतितेहिकरफलभारी । सो श्रुतिपुनिपुनिकह्योपुकारी ॥
एक भाव जब होय प्रकाशा । शोक मोह दुख होय विनाशा ॥
मैं न ईश यह भ्रम तुम गावा । सबप्रकारश्रुति ताहि मिटावा ॥
विधु प्रादेशमात्र तुम देखा । तासु रूप विस्तार विशेखा ॥
यहिविधि प्रकट भेद जो साधा । श्रुति प्रमाण पावै सो बाधा ॥
एक भाव जो श्रुति बहुसाधा । कबहुँहोय नहिं तेहिकी बाधा ॥

दो० क्यों* न होय जो कहो तुम तौ देखौ धरि ध्यान ।

* बाध ॥

और न कोई लोक महँ श्रुतिते प्रबल प्रमान ॥
जेहि बलते अभेद की बाधा। चाहौ केहिप्रकार तुमसाधा ॥
कपिलादिक परमेश स्वरूपा। तासु भजन तत्फल बहुरूपा ॥
बहुऋषिवर्णितमत प्रभुनाशहु। एक भाव यतिराज प्रकाशहु ॥
बहुत कहैं सो होय प्रमाना। एक वचन सम्मत केहि माना॥
शंकर कह्यो सुनो द्विजराई। यह न रीति जो तुम दर्शाई ॥
बलवति श्रुतिविरोधजहँ होई। सो स्मृति मानै नहिं कोई ॥
ऐसी नीति सदा बलवाना। श्रुतिविरुद्धनहिंऋषयप्रमाना॥
नीलकण्ठ कह सुनु यतिराजा। युक्तिसहितऋषिवचनविराजा॥
ते सब भांति मानिबे लायक। कहहुं सुनौ शंकर मुनिनायक ॥
प्रति शरीर आतम है भिन्ना। कहूंसुखी कहुँअतिशयखिन्ना ॥
आतम एक जो सब तन माहीं। दुखिहिराजसुखक्योंप्रभुनाहीं॥
एक सुखी बहु दुखमय कोई। सति अभेद यह ज्ञान न होई ॥
अन्तःकरणहि जो तुम कर्त्ता। मानहु जीवहि सदा अकर्त्ता ॥
उचित तुम्हारो यह मत नाहीं। घटितहोय*सोनहिंजड़माहीं ॥
ज्ञान युक्त सोइ कर्त्ता होई। तासु भोग पावै पुनि सोई ॥
करै कोऊ फल भोगै कोई। लोकवेद अघटित मत सोई ॥
दुखकर नाश परमसुख होई। ऐसी मुक्ति गिनौ तुम जोई ॥
ज्ञान युक्त सुनिये यतिराई। दुःखनाश सोइ मुक्ति गोसांई ॥
जेते सुख मुनिवर जगमाहीं। ऐसो कौन जहां दुख नाहीं ॥
ऐसो करहु यहां अनुमाना। जेतो सुख सब दुख सों साना ॥
विशदयुक्ति बल त्यागन योगा। मिष्टअन्न जिमि विष संयोगा ॥
दो० नीलकण्ठ अस कहौजनि सुख दुख मनगत जानि।
सब प्रपञ्च मन मूल है नहिं अभेद मत हानि ॥
सो० जड़ कर्त्ता नहिं होइ इत्यादिक जो तुम कह्यो।
चित संयोग लहि सोइ कर्तृत्वादिक तहँ घटै ॥
अग्नियोग जिमि आयसु दहई। कर्तृत्वादिकतिमि सो लहई ॥

* अन्तःकरणस्यकर्तृत्व ॥

चित संयोग नहिं तृणमें देखा। तेहि कर्त्ता हम कबहुं न लेखा॥
श्रुतिकल्पन उत्तम करिजानहुँ। सुखदमुक्तितुमजोनहिंमानहुँ॥
तहां सुनहु उत्तर द्विजराई। दुखयुत जोसुखसकल बुझाई॥
विषय जन्य ऐसो सुख होई। दुख युत ब्रह्मानन्द न सोई॥
ताहि परम पुरुषारथ जानहु। दुखविनाशकोमुक्ति न मानहु॥
यह प्रकार शत युक्ति दृढ़ाई। श्रुतिअनुकूल गिरा यतिराई॥
आपन मत भलथापन कीन्हा। तन्मत खण्डि पराजय दीन्हा॥
दो० नीलकण्ठ तव गर्वतजि अरु निजभाष्यविहाय।
हरदत्तादिक शिष्य युत शरण गही शिरनाय॥
नीलकण्ठ जीतो यतिराई। सब विदुषनजबयहसुधिपाई॥
उदयनादि जे द्वैत विबोधी। कांपि उठे अद्वैत विरोधी॥
सौराष्ट्रादिक देश सुहाये। तहँ तहँ भाष्य ग्रन्थप्रकटाये॥
सुर भूसुर पावन यश गाये। द्वारवती श्री शङ्कर आये॥
पंचरात्र मत धर तहँ आये। शंख चक्र भुज चिह्न बनाये॥
ऊर्द्ध पुण्ड्र शर दण्ड समाना। तुलसी पत्र धरे निज काना॥
छं० तेजीवपरको १ भेदजीवन को परस्पर २ मानहीं।
पुनिजीवजड़ ३ करभेदतैसेहिईश ४ जड़करजानहीं॥
तथा चेतन को परस्पर पञ्च भेद बखानहीं।
यहि रीतिसों ते मोहवश ह्वै कलपना बहु ठानहीं॥
सो० शङ्कर शिष्य सुजान अति प्रगल्भ मृगराज सम।
मस्तक हस्ति समान रँगे देखि झपटे तुरत॥
तिन गयन्द सम आय पछारे। भये मान खण्डित सब हारे॥
वैष्णव शैव शाक्त अरु शौरा। गणपभक्त तैसे पुनि औरा॥
निजवशकरि ते सकलसनाथा। पुनि उज्जैनिगये यतिनाथा॥
पहुँचि पुरी पावनि सो देखी। कहि न जाय रमणीय विशेखी॥
महाकाल पूजन तहँ होई। ध्वनि मृदङ्ग पणवानक जोई॥
ताहि जलदमण्डल ध्वनि जानी।प्रतिध्वनिमोरकरहिंसुखसानी॥

पूरिरहीध्वनि सब दिशि माहीं। निजपराव सुनियतकछुनाहीं॥
महाकाल महिमा गुरु जाना। दर्शन हेतु गये भगवाना॥
शीतल श्रमहर पवन सुहाई। पुष्प सुगन्ध मनोहरताई॥
अगुरु धूप धूपित सब आशा। शंकरमन अतिभयोहुलाशा॥
मुनिवन्दित पदपद्म सुहावा। जिनकोयश त्रिभुवन में छावा॥
चन्द्रमौलि पद कीन्ह प्रणामा। कियो मनोहर मठ विश्रामा॥
निजविद्यामद अतिशय जाही। मम आगमन सुनावो ताही॥
पद्मपाद कहँ प्रभु समुझावा। भट्ट भास्कर तीर पठावा॥
ताहि सनन्दन देख्यो जाई। बुध अवतंस न वरणि सिराई॥
विवरण वेदराशि जेहि कीन्ही। दुर्मद रिपुन पराजय दीन्ही॥
दो० वावदूक अति पद्मपद ताहि कह्यो समुझाय।
श्रीशंकराचार्य्य गुरु तव पुर पहुँचे आय॥
योगि चक्रवर्ती भगवाना। होहिं दिगन्त जासु यशगाना॥
मत अद्वैत प्रकट ते करहीं। परपन्थिनकर सबमद हरहीं॥
तिन सब ठौर विजयकरिपायो। गुरुवरतुम्हहिं सँदेश पठायो॥
दुर्मत कल्पित करि हम नाशा। श्रुति शेखर को अर्थप्रकाशा॥
जीव ब्रह्म कर विशद अभेदा। दर्शायो गावहिं जेहि वेदा॥
सो तुमहूं अपने मन धरहू। तेहि विचारि दुर्मत परिहरहू॥
नतरु उग्र पविपात समाना। मम जे तर्क परम बलवाना॥
तिनसों आपन पक्ष बचावहु। अरुविवादहितसम्मुखआवहु॥
तिरस्कारयुत सुनि यह बानी। यशनिधिकछुकरोषउरआनी॥
पद्मपाद कहँ वचन सुनावा। तवगुरुममयशनहिंसुनिपावा॥
जो सबकी कीरति अपहरई। विदुषशिरन पर नर्तन करई॥
मोरि वचन धारा जब बहई। कणभुग्जल्प अल्पता लहई॥
सो० भागे कपिल प्रलाप आधुनिकनकी कह कथा।
यह सुनिवचनकलाप कुशलसनन्दन पुनिकह्यो॥
यद्यपि बहुत शक्ति तुम धरहू। तदपिअवज्ञाअसिजनिकरहू॥

टंक विदारन गिरि को करई । पविमाणिसोतेहिकी नहिंसरई ॥
अस कहि शंकर तीर सिधावा । गुरुवरकहँसबचरित सुनावा ॥
भट्ट भास्कर तहँ चलि आवा । भयो परस्पर दर्श सुहावा ॥
यतिवर द्विजवर करि संवादा । करनलगे द्वौ प्रबल विवादा ॥
छन्द मनोहर गुम्फित बानी । उभय कहैं कवितारस सानी ॥
खण्डन मण्डन उभय प्रवीना । करहिंवाद जयआशधुरीना ॥
उभयविचित्र शब्द अनुसरहीं । दुष्ट युक्ति भेदन बल धरहीं ॥
दो० वादसमरगत वीर द्वौ कहैं जो तेहि छिन बयन ।
यदपि तीर बैठे सुनैं नहिं समुझैं गुन अयन ॥
देखि तासु अतिशय निपुणाई । खण्डयोबहुत विकल्प उठाई ॥
शंभु पक्ष विधु शरद समाना । तासु पक्ष पंकज कुँभिलाना ॥
निजमत रक्षा हित गुणवाना । वचनचतुर बहुयुक्तिनिधाना ॥
श्रुति सम्मत गुरुपक्ष निराशा । ⊛करनहेतु बुधवचन प्रकाशा ॥
ईश्वर जीव भेद को हेतू । प्रकृतिकहौ जो तुम यतिकेतू ॥
कहहु सो प्रकृतिजीवगतमानी । किमु ईश्वरगत मुनिविज्ञानी ॥
दो० उभयभांति सों भेद नहिं प्रकृति करै यतिराज ।
जीवेश्वर के भाव सों प्रकृती प्रथम विराज ॥
यह विधि पूर्वपक्ष जब भयऊ । तासु उतरु शंकर अस कहेऊ ॥
भेद बिम्ब प्रतिबिम्ब जो होई । भेदक दर्पण कह सब कोई ॥
कहौबिम्बगत † सोतुम मानहु ।किमुप्रति‡बिम्बगताहिबखानहु ॥
जो ऐसो मानहु द्विजराया । दर्पण मुखकर भेद जनाया ॥
प्रकृतिहु चेतन आश्रित गाई । जीवेश्वर भेदक ठहराई ॥
चेतन क्यों नहिं सुख दुखलहई । कैसे जीव सदा सो सहई ॥
यह शङ्का मन में जनि धरहू । जो हम कहैं सो निश्चयकरहू ॥
ईश्वर प्रकृति उपाधिहि तजई । जीव उपाधि धर्म पुनि भजई ॥
चलनादिक जिमि मुखमेंनाहीं । दर्पणगत प्रतिबिम्बदिखाहीं ॥
जो तुम कहौ प्रकृति साविकारी । जो अज्ञान रूप निर्द्धारी ॥

⊛ अज्ञान † अभेद ‡ गामी ॥

ज्ञान रूप चेतन अविकारा। एक असंग रूप उजियारा॥
चेतन आश्रित प्रकृति न होई। उर*विशिष्ट जीवाश्रित सोई॥
करौ न यह शङ्का मन माहीं। यह में है प्रमाण कछु नाहीं॥
दो० मैंहों अज्ञ प्रतीत यह करहु जो तुम अनुमान।
यह प्रतीत यह अर्थ में लहै न कबहुँ प्रमान॥
जेहि ते यह प्रतीत पुनि आवै। अनुभविता मैं हौं ठहरावै॥
उर विशिष्ट गत तुम अज्ञाना। मानतहौ आवत पुनि ज्ञाना॥
जो तुम इष्टापत्ति बखानहु। तौ विरोध यह निजउरआनहु॥
चित स्वरूप अनुभव जो होई। जड़ उरनिष्ट होय नहिं सोई॥
तर्कयुक्त मुनि शंकर बानी। प्रतिवादी यह युक्ति बखानी॥
पावक योग लोह जिमि दहई। चेतन योग † तथा उरलहई॥
दाहक लोहे सों ज्यों कहहीं। अनुभविता उरका त्यों गहहीं॥
सुनहु भास्कर अस नहिं कहहू। तद्यपि जो वैसो हठ गहहू॥
मायाश्रित चितियुत उर जाना। तहँ उपचार प्रकृतिकर माना॥
प्रकृति योग केवल उर माहीं। जो मानहु तुम बनै सो नाहीं॥
दो० यतिवर तौ ऐसो गहौ अनुभव युतिचितिपाय।
प्रकृति केर उपचार तहँ यह गति शुभबनिजाय॥
द्विजवर जनि ऐसो तुम कहहू। प्रकृतिजनितउरजानतअहहू॥
उर जौलौं द्विजवर नहिं जाया। कहां प्रकृति तौलौं द्विजराया॥
रही मोहिं तुम देहु बताई। तहां न यह उपचार समाई॥
जो अज्ञान हृदाश्रित होई। मनगत सुप्तिमाहिं रह सोई॥
हृदय विशिष्ट निष्ट अज्ञाना। उक्तरीति कोउ नाहिं प्रमाना॥
यह कारण चितिगत अज्ञाना। मानहु यह मम वचन प्रमाना॥
यतिवर चेतन गत अज्ञाना। बहुधा सो तुम कीन्ह प्रधाना॥
जीव ब्रह्म एकातम भावा। प्रतिबन्धक अज्ञान कहावा॥
सुप्तिकाल मुनि रहत सो नाहीं। यहते प्रकृति न चेतन माहीं॥
सुप्तिसमय सतसों मिलिजाई। जीव सदा श्रुति दीन्ह सुनाई॥

* अन्तःकरण विशिष्ट । † चित्स्वरूपानुभव॥

जो वरन्यो पुनि यह श्रुति माहीं। जीवसुषुप्ति सतसों मिलि जाहीं॥
कछु नहिं जानहिं जो यह गावा। यहिते नहिं अज्ञान जनावा॥
ज्ञान निषेध तहां श्रुति करई। जेहि ते नहिं जाने उच्चरई॥
अज्ञानहिं तुम नित्य बखानहु। अथवा तेहि अनित्य उर आनहु॥
प्रथमपक्ष नहिं बनहिं यतीशा। युक्त्यभाव तहँ हेतु मुनीशा॥
करहु इहां ऐसो अनुमाना। नित्य होय नहिं यह अज्ञाना॥
सकल होहिं अज्ञान समाना। जाग्रत्स्वप्न यथा सब जाना॥
दूसर पक्ष सिद्ध नहिं सोई। नहिं कोउ तासु निवर्तक होई॥
जो प्रकाशक कहँ तुम अनुमानहु। तेहिको तासु निवर्तक जानहु॥
सो प्रकाश किमु चेतन होई। अथवा जड़ मानहु तुम सोई॥

दो० जो चेतन*अविरोधि सो जो जड़ करहु बखान।
जड़ जड़ कहँ नहिं नाशही यह जगमें सब जान॥

प्रतिबन्धक नाहिं तहँ अज्ञाना। तेहिको हम औरहि कछु माना॥
प्रथमहिं भ्रम दूसर संस्कारा। तीसर अग्रह† पद निर्द्धारा॥
तब शंकर कीन्हों अनुमाना। प्रतिवादी ऐसो नित जाना॥
सब प्रत्यय परमारथ मानहिं। भिन्नाभिन्न एक करि जानहिं॥
द्रव्यदृष्टि जिमि घट पट एका। व्यक्तिदृष्टि पुनि गिनहिं अनेका॥
सब प्रकार भ्रम सिद्ध न होई। यह निश्चय करि पूछा सोई॥
भलीकही द्विजवर तुम बानी। भ्रमस्वरूप मोहिं कहौ बखानी॥
हौं मैं मनुज बुद्धि जो होई। यतिवर भ्रम जानहु तुम सोई॥
तब शंकर बोले यह बानी। तुम विस्मरण भये द्विजज्ञानी॥
शंकर सकल ‡ पदारथ भाखहु। पुनि तेहि×को तुम ध्यान न राखहु॥
भेदाभेद विषय सब रहई। तवमत को यह निश्चय अहई॥
है तव शास्त्र सिद्ध विज्ञानी। खण्डाधेनु यथा तुम मानी॥
प्रत्यय भेदाभेद प्रमाना। तिन सबको परमारथ जाना॥
तब मैं नर यह भ्रम क्यों मानहु। वैसो न्याय इहां उर आनहु॥
भयो सिद्ध ऐसो अनुमाना। नहिं भ्रम मानुष बुद्धि प्रमाना॥

* यथा चन्द्रो राहुरथप्रकाशकः † ग्रहण न होना ‡ पदार्थ × शङ्करवाद॥

*भिन्नाऽभिन्न विषय महँ हेतू। खण्ड धेनु उपमा द्विजकेतू॥
यतिवर देह बुद्धि जो होई। श्रुतिअनुसारप्रमाण न सोई॥
जेहिते है निषेध यह माहीं। श्रुति कह जगनानाकछुनाहीं॥
रजत बुद्धि सीपी दर्शाई। पुनि विचारते जाय बिलाई॥
अहंब्रह्म यह बुद्धि प्रकाशी। मैं नर तबहिं बुद्धि यह नाशी॥
इहां करौ ऐसो अनुमाना। देहातम धी नाहिं प्रमाना॥
श्रुती निषेध हेतु तुम जानौ। रजत बुद्धि उपमा उर आनौ॥
†सत्प्रतिपक्ष दोष ठहराना। प्रबललखौनिजहृदयसुजाना॥
द्विजवर तुम ऐसो नहिं भाखौ। खण्डाधेनु हृदय महँ राखौ॥
भट्ट भास्कर यह व्यभिचारा। आवत है सो करहु विचारा॥
खण्डाधेनु प्रथम जेहि माना। पुनि मुण्डा कीन्हींअनुमाना॥
नहिं खण्डा मुण्डा है गाई। धेनुमाहिं यह बुधि उपजाई॥

दो० ‡खण्डधेनु व्यवसायमहँ आयो यह व्यभिचार।
यहखण्डा नहिं+मुण्डहै जेहिविधि कोउ निर्द्धार॥

यद्यपि यह निषेध बनि जाई। दोनहु को न भेद दर्शाई॥
तैसेहि देह ब्रह्म अरु जीवा। हैं अभेद प्रत्यय के सींवा॥
यतिवरभ्रम प्रतीत जहँ होई। अधिष्ठान बरनो है सोई॥
तहां निषेध होय यह रीती। मानहु तुम यहवचनप्रतीती॥
यथा प्रथम सीपी जब देखी। मानीहू है रजत विशेखी॥
पुनि तेहि को जब कीन्हविचारा। नहिं यह रजतभयो निर्द्धारा॥
आत्मनि मनुजभाव जो माना। तहहिंनिषेध÷तासुगुणवाना॥
ऐसो जो द्विजवर उर धारा। पुनि आवै सोई व्यभिचारा॥
नहिं खण्डा मुण्डा यह गाई। जब ऐसो मानैं यतिराई॥
अधिष्ठान जो धेनु सुहाई। वादस्थान खण्ड भयो आई॥
खण्डभाव प्रतिषेध न जानैं। मुण्डमाहिं खण्डा नहिंमानैं॥
यतिवर निजमनकरहु विचारा। नहिंउपमाकरभाव्यभिचारा॥
जनि द्विजवर ऐसो नहिं होई। ममाविकल्प सहिहै नहिंसोई॥

*भिन्नाभिन्नविपर्ययत्वात्। †दूसरेहेतुसेजोअनुमानबाधितहोजाय। ‡अंगहीन+शृङ्गहीन÷मानुषबद्ध

दो० खण्ड भावकर मुण्डमहँ करहु निषेध सुजान।
जाति*सहित कै मुण्डमहँ तुम वरणौ गुणवान ॥
प्रथम पक्ष तव नहिं बनि आवा। प्राप्त्य †भावतहँ हेतुसुहावा ॥
प्रथमहिं कहुं घट देखो होई। नहिं घट पृथिवी पर है सोई ॥
न्यायविदित सुन्दर जगमाहीं। प्राप्तीबिन निषेध कहुं नाहीं ॥
खण्ड मुण्ड महँ प्राप्त न होई। पहिलो पक्ष बनो नहिं सोई ॥
दूसरहू नहिं बनै बनाया। तहँ यहदोष प्रबल द्विजराया ॥
जाति युक्ति कहुं मुण्डा माहीं। खण्ड निषेधहोय द्विजनाहीं ॥
दो० खण्ड विशेषण धेनुकर जानत हौ द्विजराय।
जाति निषेध करे नहीं वाही को बनिजाय ॥
यथा दण्डधर पुरुष को कोई करै प्रहार।
दण्डोपरि सो लेत है निज मन करौ विचार ॥
खण्डा है नहिं धेनु यह जब निषेध ह्वै जाय।
तेहिके पीछे हू तहां धेनु भाव दर्शाय ॥
ब्रह्म‡बोध ऐसो नहीं जब स्वरूप को ज्ञान।
तेहि पीछे नर बुद्धि को सुनि आवै नहिं ध्यान ॥
द्विज प्रारब्ध कर्म अनुसारा। ज्ञान भयेहुपर अस व्यवहारा ॥
मनुष्य कै कछु दुर्घट नाहीं। फुरि आवै बहुधा मनमाहीं ॥
यतिवर जिमअतहोहु व्यवहारा। मुक्त भये नहिं तासु प्रचारा ॥
तहँ केहिकरि केहिको पुनिदेखै। आतमरूप सबहि जब लेखै ॥
सब व्यवहार नाश ह्वै जाई। व्यवहर्ताहू नहिं दर्शाई ॥
ऐसी नीति प्रबल श्रुति गाई। यहसुनि वचन कह्यो यतिराई ॥
मम मत में ऐसो बनिजाई। नहिंतवमतमहँसुनि द्विजराई ॥
जग अज्ञान मूल उल्लाशा। तासु नाशमहँ जगकर नाशा ॥
तव मत जग उच्छेद न होई। सत्य रूप मानौ तुम सोई ॥
दो० यतिवर भिन्नाभिन्न जो हेतु कह्यो दर्शाय।
तासुसिद्धि नहिं जेहिविधि कहौं तुम्हैं समुझाय ॥

---

* खंडकर प्राप्त्यभावात् ‡ भास्करः ॥

भेदाभेद पांच थल माहीं। और ठौर हम मानत नाहीं॥
जातिव्यक्ति १ अरुगुण २ गुणवाना॥ कारजकारण ३ तीसरजाना॥
चौथो तथा प्रविष्ट स्वरूपा ४। अंशांशी ५ ये पांच अनूपा॥
अस सम्बन्ध जहां कहुं होई। भेदाभेद बनहिं तहँ सोई॥
देही देह द्रव्य हम मानी। प्रथमयुगलतहँ बनैन ज्ञानी॥
कारज कारण नहिं बनिआवै। जेहिते भौतिक देह कहावै॥
दण्ड विशेषण जेहि विधि होई। है अधीन दण्डी के सोई॥
तैसेहि देह जीव आधीना। नहिंमानहिंहमसुनहुप्रवीना॥
अंशांशी सम्बन्ध न यतिवर। निरावयव आतम है सुन्दर॥
पञ्चस्थल सों इतर तुम्हारा। हेतु बनै नहिं यद्यपि सँवारा॥
ऐसो जनि मानौ द्विजराई। नहिंविकल्पमहँ यहठहराई॥
दो॰ सब मिलि भेदाभेद के कर्त्ता हैं द्विजराय।
कै मानै हैं भिन्न तुम कहिये मोहिं सुनाय॥
प्रथम पक्ष तुम्हरो नहिं होई। मिलैं पांच कबहूं नहिं सोई॥
दूसर पक्ष जो तुम उर आनहु। देही देह भाव पुनि मानहु॥
तथा अंग अंगी बनि जाई। गौरव दोष न पुनि दर्शाई॥
भाव अंग अंगी तुम मानहु। गौरवदोषन निज उरआनहु॥
देही देह भाव महँ द्विज वर। भेदाभेद तजहु सो हठ धर॥
सब शंकर वादी मत हानी। ह्वैजैहै द्विजवर विज्ञानी॥
जाति जाति युत प्रमुख जो होई। भेदाभेद प्रयोजक सोई॥
ऐसो जो हठ होय तुम्हारा। तहँ सुनिये यहवचन हमारा॥
सोऊ तहँ*दुर्लभ नहिंजानहु। कारज कारणभावहि मानहु॥
परमातम कारज जग मानी। जनि संशय आनहु विज्ञानी॥
उभय अभेद रीति बनिजाई। जीवकार्य यह तनु द्विजराई॥
दो॰ हेतु प्रमुख जे दोष तुम बहुविधि कहे बनाय।
कटे सकल अनुमान मम निर्मल भा द्विजराय॥
भ्रम धी जो प्रमान तुममानी। सो असिद्ध जानहु विज्ञानी॥

* देहिदेहभाव बुद्धि॥

डरपरिणामभ्रमाहि तुम जानहु। कै आतम परिणाम बखानहु ॥
आदि पक्ष नहिं बनहि बनावा । प्रबलदोष द्विजवर यहु आवा॥
उरपरिणाम जो यह भ्रमहोई । आत्माश्रय दर्शै नहिं सोई ॥
मृन्मय घट है सब जग जाना । तंत्वाश्रय न करै गुणवाना ॥
फटिक अहन पुष्पहि जबपावै । अहन धर्म तेहि महँ दर्शावै ॥
भ्रमयुत चित्त योग बनिजाई । करौ न यह संशय द्विजराई ॥
तद्यपि जो शंका उर आनहु । मम विकल्पकरउतरुबखानहु॥

दो० सत कि असङ्गम मानहु द्विजवर देहु बताय ।
नहिं विकल्प पहिलैं बनै सुनु मोसन द्विजराय ॥

तुम अन्यथा ख्यातिमतधरहू । तेहि बल यह निश्चयउरकरहू॥
रजत सीप महँ देहि दिखाई । ताहि तुच्छ मानहु द्विजराई ॥
दूसर पक्ष न पुनि ठहराई । कारण तुम्हहिं देहुँ समुझाई ॥
बन्ध्यासुत अरु मनुज बिखाना । व्योमपुष्प यह असत बखाना॥
कहैं यथा भ्रम महँ मन गयऊ । तस न कहैं बन्ध्यासुत भयऊ ॥
जो परोक्ष नहिं होय प्रसिद्धा । असतपक्ष तव भयो असिद्धा ॥
जो आतम परिणाम स्वरूपा । दूसर भ्रम विकल्प द्विजभूपा ॥
सो न उचित है कारण येहा । है असंग आतम बिन देहा ॥
नहिं निरवयव वस्तु परिणामा । भयो आजु लौं द्विज गुणधामा॥
आतमकहँ परिणामहि मानौ । भ्रम आश्रय तबहूं नहिं जानौ॥
ज्ञानाकार सदा जो होई । भ्रमस्वरूप परिणाम न होई ॥

दो० एक जाति के युगल गुण एक साथ यकतौर ।
शुक्ल† उभय यकठौर नहिं तसजानहु मतिधीर ॥

कहहु जो तुमगुणहोय न ज्ञाना। गुणीद्रव्य तेहिको हम माना ॥
यह संशय त्यागहु द्विजराया । यहअनुसार दोष नहिं आया ॥
कटक रूप सुवरन जो होई । कटक अक्षत कण्ठा नहिंसोई॥
तथा नित्यज्ञानाश्रय द्विजवर । होय न भ्रमाधार पुनि हठधर ॥
भ्रम न बनो यद्यपि यतिराई ।‡संस्कृति आग्रहनहिं मिटिजाई॥

† गुण ‡ संस्कार॥

द्विजवर भै जब तव भ्रम हानी। संस्कृतितेहिकेसाथ बिलानी॥
आग्रह कहँ कैसो तुम मानहु। प्रथमहि तेहिकोरूपबखानहु॥
निजस्वरूपकर ग्रहण अभावा। आग्रह सो तुम्हरे मन भावा॥
वृत्त्यऽभाव के अग्रह माना। प्रथम पक्ष नहिं बनै सुजाना॥
चेतन नित्य ग्रहण नित होई। चिति अभाव जानै नहिं कोई॥
वृत्त्यभाव अग्रह द्विजराया। सोउ न बनै पुनि कोटि उपाया॥
वृत्त्यभाव चेतन नित फुरई। वृत्ति तासु प्रतिबन्धन करई॥
जो हम चेतन में अज्ञाना। मानि लेहिं तववचन प्रमाना॥
भंजक तासु न कोउ दर्शाई। जनि आनौ शंका द्विजराई॥
खण्ड जड़ाऽनृत है अज्ञाना। जानत हो नीके गुणवाना॥
वृत्ति अखण्डारूप सुजाना। ब्रह्मबोध नाशक अज्ञाना॥
मत शंकर असमंजस रूपा। सुनु मोसन कारण द्विजभूपा॥
इष्ट अनिष्ट केर सब साधन। ज्ञानजनितमानहुअपने मन॥
जगत प्रवृत्ति निवृत्ति न बनहीं। महादोष तव मत बुधगनहीं॥
संकीरण तव तव व्यवहारा। दुर्लभ तव जीवन संसारा॥

दो० यह प्रकार शत युक्ति सों तेहिजीत्यो यतिराय।
श्रुति विरोधि मत ग्रन्थ तब मथे तुरत हर्षाय॥

भास्कर जबहि पराजय पावा। शंकर विमलसुयशजगछावा॥
जब प्राविट जलधर बिलगाई। शरद चन्द्र सुखमा रहै छाई॥
अति प्रसिद्ध जे बाण मयूरा। दण्ड्यादिक विद्या युधि शूरा॥
शिथिलमान सबके करिदीन्हे। भाष्यश्रवणउत्कण्ठितकीन्हे॥
वाह्लादिक देशन प्रभु गयऊ। कछुदिनतहँनिवासजबभयऊ॥
शिष्यन को निजभाष्य पढ़ावैं। अर्हं तमीचर तहँ बहु आवैं॥
सुनोजबहिं निजमतकरखण्डन। सहि न सके बोलेश्रीगुरुसन॥
सुन्दरमत हमार उर धरहू। ताहि वृथा क्यों खण्डन करहू॥
पंच अस्ति काया हम मानी। प्रथम जीव काया सुनु ज्ञानी॥
बद्ध १ मुक्त २ अरु सिद्ध ३ उद्धारा। जीव काय के तीनि प्रकारा॥

नित्य सिद्ध अर्हन भगवाना । मुक्त रूप साधन जिन जाना ॥
और बद्ध जानौ यतिराई । दूसरि पुद्गल काय सुहाई ॥
षट् प्रकार तेहिंते तुम जानौ । चारिभूतबिननभ पहिचानौ ॥
स्थावरचर मिलि भे षट सोई । तीसरि धर्म काय पुनि होई ॥
अधरम काय चतुर्थि बखानी । व्योम काय पंचम विज्ञानी ॥
सो० तेहिं के पुनि दुइ भेद पहिले में ये लोक सब ।
तिनपर जौन अखेद मुक्तिधाम सो दूसरो ॥
आस्रव इन्द्रिय द्वार कहावै । जीवहि विषयन ओर बहावै ॥
गो प्रवाह कहँ रोकहि जोई । शम दमादि संवर है सोई ॥
पुण्य पाप सदकलुष नशावा । तेहिकारण जरनाम कहावा ॥
तप्त शिला रोहण है जोई । तेहिसमान मुनि धर्म न कोई ॥
जीव अजीव प्रथम कहि आये । सुनहु बन्ध के भेद सुहाये ॥
कर्म अष्ट विध बन्धमतारी । घातकचारि अघातकचारी ॥
ज्ञान मुक्ति साधन नहिं होई । १ ज्ञानाऽऽवरण कहावै सोई ॥
अर्हत दर्श मुक्ति नहिं पावा । सो दर्शन २ आवरण कहावा ॥
मुक्तिपन्थ कर बोध न जासों । ३ मोहनीय भाषैं हम तासों ॥
ज्ञान विघ्न कारक सो होई । ४ अन्तराय कहि गायो सोई ॥
घातक चारि कर्म कहि दीन्हे । सुनौ अघातकतुमरुचिकीन्हे ॥
जो आतम कर बोध जनावा । १ वेदनीय सो कर्म कहावा ॥
यह मम नाम होय अभिमाना । २नासिककर्मताहिबुधजाना ॥
जो गुरु वंश लाभ अभिमाना । ३ गोत्रिकसंज्ञातासु बखाना ॥
जो शरीर निर्वाहक होई । आयुष्कर जानौ तुम सोई ॥
अष्ट कर्म नर बन्धन हेतू । बन्ध नाम तेहिते यति केतू ॥
मुक्ति रूप अब कहौं बुझाई । यतिवर ताहि सुनौ मनलाई ॥
दो० निरावरन विज्ञानयुत क्लेश रहित जब होय ।
सकल लोक ऊपर बसै मुक्ति कहावै सोय ॥
दूती मुक्ति सुनौ यतिराया । जीव उपरिगामी नित गाया ॥

धर्म्माधर्म बन्ध छुटिजाई। ऊपर जाय तबहि सुखपाई॥
सप्त * पदारथ हम ये मानैं। भंगी सप्त तथा हम जानैं॥
अस्तिभाव जब हम ठहरावैं। अस्ति१भंगतेहिसोंकहिगावैं॥
नास्तिभाव इच्छा जब करहीं। नास्ति२भंगतेहितमअनुसरहीं॥
उभयभाव३क्रमसों जब कहहीं। अस्तिनास्तिभंगीतेहिगहहीं॥
युग†पदउभयभावजब मानहिं। अवक्तव्य४तेहिभंगबखानहिं॥
पहिलो चौथो जब हम गहहीं। अस्ती५अवक्तव्यतेहिकहहीं॥

दो० दुसरे चौथे भाव को जब हम करैं प्रमान।
नास्ती अवक्तव्य६ तेहि भङ्ग कहैं गुणवान॥
तीसर चौथो जबहि हम गहहिं सुनो यतिराय।
अस्तिनास्ति७अरुअकथसोमुनिवरभङ्गकहाय॥

सप्त भंगि युत सप्त पदारथ। क्यों न गहोयतिवरपरमारथ॥
तब शंकर यह वचन सुनावा। जीव काय जो तुम दर्शावा॥
ताहि विशदकरिकहौ बुझाई। अर्हत बोले सुनु यतिराई॥
देह समान जीव हम जाना। अष्टकर्म लपिटो तेहि माना॥
विभुअणुरूपजोतुमनहिंमानहु। तनुप्रमाण पुनिजीव बखानहु॥
मध्यम गही जो तुम परिमाना। भाअनित्यसोकलश‡समाना॥
नरतन जबहिं जीव यह तजई। गजशरीर केहिविधिसोभजई॥
नहिं पूरो प्रवेश तहँ होई। मशक देह जब पावै सोई॥
कैसे तेहि तनुमाहिं समाई। कहहु सो रीति प्रकट दर्शाई॥
बड़ी देह महँ जब चलिजाई। अवयव वृद्धि होय यतिराई॥
जबहिं जीव लघुतन को पावा। अवयवअपचतेहिक्षणगावा॥
अवयव हानि वृद्धि जेहि होई। आतम रूप भयो नहिं सोई॥
हानि वृद्धि युत नश्वर होई। यह सुरीति जानै सब कोई॥
जन्म नाश द्वै भाव विहीना। जानहु जीवाऽवयव प्रवीना॥
तिनकर उपचय अपचय होई। बड़ लघुतनतिनसों लहुसोई॥
जीवाऽवयव स्वरूप बतावहु। जड़ मानहु कै चेतन गावहु॥

* १ जीव २ अजीव ३ आस्रव ४ संवर ५ निर्जर ६ बन्धु ७ मोक्ष † एकसाथ ‡ जीव॥

जो जड़ तौ तन चेतन नाहीं। बहु चेतन जो यक तनमाहीं॥
बहुकी एक बुद्धि नहिं होई। नेम विदित जानै सब कोई॥
बहु विरुद्ध मतियुत यह देहा। नाश होय नहिं कछु सन्देहा॥
दो० यतिवर जैसे वाजि बहु जुते एक रथ माहिं।
एक बुद्धि रथ लै चलैं हैं विरोध कछु नाहिं॥
तैसे चेतन जीव अवयवा। तनचालहिं नहिं कछुअवरेवा॥
वाजि नियामक सारथि पाई। एक बुद्धि तिनकी बनिजाई॥
एक बुद्धि कारक तिन माहीं। बिन नेता सम्भव सो नाहीं॥
जैन युक्ति जब नहिं ठहरानी। पुनियहविधिबोलाअनुमानी॥
अवयव हानि वृद्धि नहिं होई। बड़लघुतन प्रविशै जबसोई॥
जीवाऽवयव सुनो यतिराई। विकसित होहिं बड़ो तनुपाई॥
जीवगहै लघुतन पुनि जबहीं। अपने अंग सकोचै तबहीं॥
जोंक यथा बड़ि लघु है जाई। उपमा यह मानौ यतिराई॥
जो मानहु संकोच विकाशा। तौ विकारयुत जीव प्रकाशा॥
जो विकारयुत नित्य न होई। प्रबल नीति मानै सब कोई॥
जीव अनित्य भाव मन लाये। युगल दोष नहिं मिटै मिटाये॥
कृतविनाशबिन कृतकर लाहा। औरहु बहु विरोध अवगाहा॥
तौंबासब जीवहिं तुम माना। ऊर्द्ध्वगमनकहँमुक्तिसुजाना॥
अष्टकर्म्म बन्धन गलमाहीं। ऊपर गमन बनै पुनि नाहीं॥
जीव अनित्य भये सब नाशा। जो अपनोमत कियाप्रकाशा॥
सप्त भङ्गि जो तुम समुझाई। अस्त्यादिक संज्ञा दर्शाई॥
तिनको हम आदर नहिं करहीं।निन्द्यजानिखण्डनअनुसरहीं॥
दो० एक धर्म महँ धर्मबहु एक साथ घटि जाहिं।
अस्त्यादिक जो तुम कहे बहुविरोध यहिमाहिं॥
दर्पभग्न करि माध्यमिक सकलपराजय कीन्ह।
नीमषारके देश महँ तब शंकर पग दीन्ह॥
तहँ निज भाष्य वृन्द फैलाये। सबकहँ श्रुति मारग दर्शाये॥

शूरसेन दर दर कुरुदेशा । भरत देश पुनि कीन प्रवेशा ॥
पाञ्चालादिक देशन जीती । सकल ठौर थापी श्रुति नीती ॥
पुनि श्रीहर्ष नाम बुध भारी । सकलशास्त्रकर खण्डनकारी ॥
जीतो भट्टपाद जेहि नाहीं । भास्करगुरु* केहि लेखे माहीं ॥
अजितउदयनादिकसन रहेऊ । तेहिसनबहुविवादप्रभुकरेऊ ॥
वाद जीति गुरुवर वश कीन्हा । कामरूप देशन पद दीन्हा ॥
अभिनव गुप्त शक्ति मतधारी । रचीभाष्यनिजमतअनुसारी ॥
जीतो ताहि शम्भु तहँ जाई । तेहिनिजमनअतिशयदुखपाई ॥
निज उर लागो करन विचारा । इन समान नहिं कोउ संसारा ॥
मम वश और उपाय न ऐहैं । पुरश्चरण करिहौं मरिजैहैं ॥

दो० गूढ़भाव यह राखिउर शिष्य सहित शठराय ।
त्यागिभाष्यनिजलोकभय सेवकभाव दिखाय ॥

राखी निज मन महँ कुटिलाई । सो कहिहौं आगे दर्शाई ॥
निज सेवक कर उत्तर वासी । मैथिल कोशल गे सुखरासी ॥
इनमें प्रभु पूजन बहु भयऊ । तब यतिवर आगे पुनिगयऊ ॥
अङ्गबङ्ग महँ यश विस्तारा । गौड़ देशमहँ पुनि पगुधारा ॥
तहँ मुरारिमिश्रहि जय कीन्हा । उदयनबुधहि पराजय दीन्हा ॥
धर्मगुप्त मिश्रहि पुनि जीता । विस्तारा निजसुयश पुनीता ॥
वेद विनिन्दक अरु द्विजद्वेषी । विप्र विमोहे बुद्ध † विशेषी ॥
तासु प्रबल मुख मोरन हारे । भास्करादि जे जग उजियारे ॥
यद्यपि बुधमत भेदन कीन्हा । मिथ्या ‡ भूतपक्ष गहि लीन्हा ॥
तिनहिं पराभव शंकर दीन्हा । मृषावादहठ लखिवश कीन्हा ॥

अथ विजयोत्कर्ष वर्णन ॥

छं० चक्रांकचिह्नित पाशुपत कापालिक्षपणकमत घने ।
पुनि जैन और अनन्त दुर्मत जाहिं ते कापै गिने ॥
श्रुतिपन्थरक्षाहेतुयहिविधि विजयसबही करकियो ।
नहिंमान कीरति हेतु श्रीशंकर विजय में मनदियो ॥

---

* प्रभा † जैन ‡ भेदाभेद ॥

सो० चहै न कछु सन्मान शिव सर्वज्ञ कृपायतन ।
जिनहिंदेहअभिमान तिनहिंहोयँनानादिरुचि ॥
प्रथम कियो उपदेश कमलासन निजसुतनको ।
पितुकर मानि निदेश सनकादिक बोधनकियो ॥
बाल्मीकि मुनि प्रमुख उदारा । तेहि संचित करिसो संसारा ॥
सो श्रुतिपथकण्टकयुत भयऊ । दुर्वादिन जहँतहँ विषभयऊ ॥
तेहि पुनिशोधनकरि श्रीशंकर । अधिकारिन दर्शायो सुन्दर ॥
शांति१दांति२उपरति३सुखदाई । श्रद्धा ४एकाग्रता५सुहाई ॥
क्षमा६मनहु षट् जननि समाना। षण्मुख सम शंकरभगवाना ॥
षट् जननी षण्मुखहि बढ़ावा । वधि तारकसुर दुःख मिटावा ॥
बुद्धादिक थूलोदर नाना । रसिक तासुखण्डनभगवाना ॥
विजय करत विचरे जगमाहीं । अब विबुधनकहँ बाधानाहीं ॥
युद्धारम्भ बजै करनाला । तासु शब्द अतिहोय कराला ॥
दो० चार्वाक सुनतहि भजो सेजा को बहु देखि ।
भे कणाद काणे बहुरि सूझि न परै विशेखि ॥
सांख्यअसांख्य बुद्धि उरधारी । लरि हारे भागे सब झारी ॥
पातञ्जल तिन साथ पराने । कोउ सुभट ऐसे न दिखाने ॥
जो श्रीशंकर सम्मुख आवैं । कछु बलअपनो प्रकट दिखावैं॥
प्रथमहि मण्डनखण्डनभयऊ । जेहि विवाद सुन्दरप्रणठयऊ ॥
यतिनृपजयडिंडिमिध्वनिभारी। वादि श्रवणि वनदाहनहारी ॥
दावानल सम कीन प्रकाशा । भयो सकल पाखण्डविनाशा ॥
बुद्ध युद्ध उद्यत कछु भयऊ । छिनुलरिबहुरि पलायनकरेऊ॥
रहो कोण काणाद चुराई । गौतम मत गत नहिं दर्शाई ॥
भग्न भये कापिल गे भाजी । तथा पतंजलि अंजलि साजी ॥
श्रीशंकर की असि चतुराई । त्रिभुवन उपमा नहिं दर्शाई ॥
दो० वैदिकवादी समर महँ हाथ गहे यतिराय ।
चार्वाकादिकश्रुतिविमुख बलकरि हने अघाय॥

काणादिक वादी गृह कीन्हे। पुनि स्वराज सिंहासन दीन्हे ॥
करी शूरता यतिनृप जैसी। बहुरि दया प्रकटी पुनि तैसी ॥
दया रूप चन्दनि सुखदाई। निशा अमावस सम जो गाई ॥
क्षमा कमलिनी पूरणमासी। विधुकरसरस कुतर्कप्रकासी ॥
शांति सिन्धु बड़वानल जैसी। सत्य पयोद प्रभंजन कैसी ॥
आस्तिक्य तरुवर क्षयकारी। दावानल ज्वाला जनु भारी ॥
हंसिरूप सत्कथा सुहाई। प्राविट सम तेहिकी दुखदाई ॥
सो० जेहि सबको दुख दीन्ह पाखण्डिन की सो गिरा।
सबहिं सुखारीकीन्ह दण्डिशिरोमणि खण्डितेहि ॥
छं० गुरुसूक्तप्रसरणशीलजलधरअतिरुचिरसबदिशिछये।
अद्वैत धाराऽमृत बरसि त्रयताप सबके हरिलये ॥
जो जीव परकी एकता दुर्भिक्ष तेहिको जगरह्यो।
सो शान्तह्वै पाखण्डलक्षण॰ताप सबखण्डितभयो ॥
ये सुभट पातंजलि तथा कापालि अनुयायी रहे।
ते गिरत ग्रहके ग्रहणके व्यापारको हठ करि गहे ॥
काणाद जे प्रतिहार सम क्षपणक तथा नरपालसे ॥
वैतालिका सामंतवर जनु भे दिगम्बर वंश ये ॥
दो० चार्वाक के वंश के अंकुर रहे नवीन।
कथा शेष तिनकी रही मुनि बानी भे क्षीन ॥
सो० यह विधि सब दिशिद्वैत कथा हानि जब ह्वैगई।
विस्तारो अद्वैत गुरुवर सब संदेह ताजि ॥
दो० जेहिप्रकारदिननाथसब प्रथमहितमहिनिवारि।
पुनि अपने वर तेज को देहि जगत विस्तारि ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री ७ स्वामिरामकृष्ण भारतीशिष्यमाधवानन्दभारतीविरचितेश्रीशङ्करदिग्विजयेदिशाजयकौतुकवर्णनपरःपञ्चदशस्सर्गः १५ ॥

॰ स्वरूप ॥

विज्ञापन ॥

इस सर्गमें और इससे पहिले मतांतरके खंडन और विचित्र उपदेश में यह समुझना चाहिये कि जिस मत में जितना अंश वेदविरुद्ध रहा उसका खंडन हुआ—और विचित्र उपदेश अधिकारियों के विचित्रता से हुआ—अर्थात् जो अतिप्राकृति रहे उनको कर्मोपदेश—जो केवल कर्मी उनको उपासना—जो कर्मउपासनायुक्त रहे उनको ज्ञान का—जो तीनों के भी अनधिकारी रहे उनको महापुरुषसेवा—और अद्वैत निष्ठा साधारण सबको—इत्यादि व्यवस्था विचारि भ्रम नहीं करना चाहिये—

द० माधवानन्द भारती ॥

अथ षोडशः ॥

श्लो० ॥ शारदेशादिभिर्वन्द्यं वादिभेदविशारदम् । नमामि शंकरं नित्यं शारदापीठवासिनम् ॥ १ ॥

दो० जीतो अभिनव गुप्त को यति शेखर जेहि काल ।
गुरु विनाश मन में धरे उर अति क्रोध कराल ॥

मन्त्र परम विधि जाननिहारा । मारनहित कीन्होंअभिचारा ॥
रोग भगन्दर गुरु कहँ भयऊ । बहु उपाय कीन्हे नहिं गयऊ ॥
स्रवैरुधिर दिनप्रति बहुभांती । वसन मलीन होहि दिनराती ॥
रह तोटक मुनि भक्त सुजाना । गुरु सेवा महँ परम सयाना ॥
सकलवसन निर्मलनित करई । सब प्रकार सेवा अनुसरई ॥
रोग भगन्दर पीड़ित देखी । शिष्यन उर संताप विशेखी ॥
श्रीगुरु के चरणन शिर धरहीं । प्रभुसनयहबिनती सबकरहीं ॥

सो० बड़ोभयो प्रभु रोग करहु उपेक्षा नाथ नहिं।
दायक दुखसंयोग वृद्धि पाय रिपु प्रबल जिमि॥
तुमहिं देह ममता कछु नाहीं। तेहिते नहिं लावहुमनमाहीं॥
तव पदसेवक हम सब कोई। देखि व्यथा सहिजाय न सोई॥
अबहमसबअतिआतुरअहहीं। तेहिकारणप्रभुसोंअसकहहीं॥
व्याधिनिदान चतुर बहुतेरे। अहहिं धरणि वर वेद घनेरे॥
जानहिं जे औषध कर वेदा। हरहिं व्याधिसंभव सबखेदा॥
तिनहिं पूछिये रोग निदाना। करैं चिकित्सा ते विधि नाना॥
देहादिक नश्वर तुम जानहु।तेहितेकछुनिजमननहिंआनहु॥
निजमुखयदपि दृष्टि तव नाहीं। देखि दशा हमलोग सुखाहीं॥
हम समर्थ तव देखि विषादा। पाप होय जो करहिं प्रमादा॥
स्वस्थ रहे तव पदजलजाता। हमसब स्वस्थ भक्तजनत्राता॥
पदपंकज मधुकर सब कोई। तवविग्रह जेहिविधिसुखहोई॥
चहहिं सदा निजहितउरआनी। सुनि बोले मुनिवर विज्ञानी॥
दो० जन्मान्तर के पापवश प्रकटैं व्याधि सुजान।
विना भोग क्षय होय नहिं वरणै वेद पुरान॥
भोग न योग न कछु संदेहा। शोच न जाय रहे पुनि देहा॥
द्वन्द्वज कर्मज युग विध रोगा। मिटै न कर्मज बिनकृत भोगा॥
द्वन्द्वज औषधसन मिटिजाई। यह न जाय बहु भयो उपाई॥
तेहिते कर्मज है यह रोगा। जैहै जब ह्वै जैहै भोगा॥
रोग विवश जो यह तननाशा। होहु एकदिनअवशिविनाशा॥
यह निश्चय मेरे मन माहीं। तेहिते कछु हमको भय नाहीं॥
सांच कही प्रभु तुम यह बानी। यद्यपि राउर कछु नहिं हानी॥
देह लोभ नहिं निज उर धरहू। चिरजीवन उपाय नहिं करहू॥
दो० हमरो जीवन तदपि प्रभु तव जीवन आधीन।
और भांतिसों नहिं जियें जैसे जलबिन मीन॥
आपु कृतारथ कछु रुचि नाहीं। मुनिवर देह धरे जगमाहीं॥

विचरहिं जेहिविधिपरहितहेतू । राखहिं देह यथा वृषकेतू ॥
तैसे निज तन रक्षा करहू । हमरी विनय नाथ उर धरहू ॥
यहिविधिशिष्यनबहुहठकीन्हा। तब शंकर अनुशासन दीन्हा ॥
चले शिष्य गुरु आज्ञा पाई । वैद्य खोजहित मन हर्षाई ॥
जे विदेशविधि परम सयाने । हरिगुरुभक्ति हृदय सरसाने ॥
निजमनकीन्होबहुरि विचारा । कविजन भिषक जितेसंसारा ॥
धनहितसकलनृपतिढिगरहहीं। नितप्रतिसेवहिंबहुधनलहहीं॥
राज नगर मिलि हैं गुणवाना । असमनधरि तिनकीनपयाना ॥
बहुत देश निजकारज लागी । फिरि पहुंचे नृपपुर बड़भागी ॥
वैद्यनमिलिबहुविधिसमुझाई । गुरु समीप लाये हर्षाई ॥
गुरु सेवक जे द्विज धनवाना । तिन वैद्यन को बहु सन्माना ॥
जबभिषजनअभिमतधनपावा। विनयसहितयहवचनसुनावा ॥
गुरुवर आज्ञा देहु उदारा । करहिं उपाय शक्ति अनुसारा ॥
तब गुरुवरतिनसों यहकह्यऊ। पायुसमीप रोग तन भयऊ ॥
सो शरीर कहँ अधिक सतावै । करहु चिकित्सा जो बनिआवै ॥
औषध उत्तम लेहु विचारी । प्रबलरोग तम आपु तमारी ॥
पापजनित हमकरिअनुमाना। बहुदिननहिंनिजमनतरआना ॥
बहुहठवश शिष्यनदुखदीन्हा। तब तुम्हार आवाहन कीन्हा ॥
ऐसे सुनि मुनिवर के बयना । बहुत उपाय करैं गुणअयना ॥
सो० नहींगयो सो रोग यद्यपि ते सब भिषजवर ।
करनलगेमनशोग भे उदासलखि गुण वृथा ॥
तिनहिंउदास देखिगुरुकह्यऊ। बहुतकाल तुम को ह्वै गयऊ ॥
तुम सब लोगन के दुखहारी । ह्वैहैं तुम बिन परम दुखारी ॥
अबसुखेननिजानिजगृहजाहू। ममहितजनि मनमहँपछिताहू ॥
गृहजन सकलकरतअवसेरी । पथ निरखत ह्वैहैं लखि देरी ॥
विरहातुर प्रियजन परिवारा । सबकर मेटहु जाय खँभारा ॥
राजसेवि तुम सब गुणवाना । जो विदेश आगम नृप जाना ॥

वृत्ति तुम्हारि हरै करि क्रोधा। तबहिं करै को नृपति प्रबोधा॥
नृप चञ्चलमन सब जग जाना। तासु हृदय गति वाजिसमाना॥
कहुँ न और वर वैद्य बुलावै। नृपमनकी कोउ जानि न पावै॥
तजे रोग नाशक तुम देशा। पावत ह्वैहैं रोगि कलेशा॥
ढूंढ़न तव गृह आवत ह्वैहैं। तव मिलाप बिन ते दुख पैहैं॥
मात पिता सों जन तन धरहीं। वैद सदा तव पालन करहीं॥
जन्म वैद्य बिन निष्फल होई। तेहिते हरि मूरति है सोई॥
यद्यपि नाथ वचन फुर भाषा। तदपि होय नहिं गृह अभिलाषा॥
को बुध जो सुरपुर कहँ पाई। भूमि वास चहै ताहि विहाई॥
गये भिषज आसिविनय सुनाई। निजगृह गुरुअनुशासन पाई॥
तब गुरुवर ममता तन त्यागी। सहो अधिक दुख परमविरागी॥
सहसवैद्यसन रोग न गयऊ। तब शिवकहँ गुरु सुमिरत भयऊ॥
मनसिजनाशन प्रेरि पठाये। दैववैद्य गुरु पहँ चलि आये॥
उभय नाम अश्विनीकुमारा। कर पुस्तक द्विजवेष उदारा॥

सो० बैठे गुरुपहँ आय सुभुज सुलोचन देव द्वौ।
कह्यो गुरुहि समुझाय भयो रोग अभिचारवश॥

दो० औषध योग न रोग यह कहि गवने द्वौ भाय।
पद्मपाद उर कोप अति सुनि उमड़ो अधिकाय॥

रिपुगनहूँ पर कोप न करई। सब पर दया सदा मन धरई॥
निज गुरु रोग निवारण हेतू। यतन कियो तब यह यतिकेतू॥
परममन्त्र जामें मन दीन्हा। यद्यपि गुरुवर बार न कीन्हा॥
गुप्तहि वही रोग तब भयऊ। महानीच तुरतहि मरिगयऊ॥
गुरुजनसन विरोध जेहि ठाना। भयो जगत केहि को कल्याना॥
स्वस्थ भये गुरु कछु दुख नाहीं। एक समय गङ्गा तट माहीं॥
सन्ध्यासमय ब्रह्म कर ध्याना। करत रहे शंकर भगवाना॥
गंग तरंग संग लहि पावनि। आवै शीतलपवन सुहावनि॥
सुरसरि सिकतापर भगवाना। गौड़पाद मुनि ज्ञाननिधाना॥

आवत देखे गुरु अभिरामा। हाथ कमण्डलु सुखमाधामा॥
दो० श्वेतकमलशोभा निदरि अरुणकिरणवशलाल।
भान होय करकमल महँ सुखमा तासु विशाल॥
श्री रुद्राक्ष माल कर राजै। यह वर उपमा तासु विराजै॥
अरुणकमलकी लखिरुचिराई। भ्रमरमण्डली जनु रहिछाई॥
तुरतहिं उठि आगे ह्वै लीन्हा। युगलकमलपदपूजन कीन्हा॥
श्रद्धा भक्ति हृदय अतिभारी। उरसंभ्रम गुरुचरण निहारी॥
सर्व कन्ध युग अञ्जुलि बांधे। गुरु सम्मुख ठाढ़े चुप साधे॥
क्षीरसिन्धुलहरीसम चितवनि। शङ्करकह देख्यो श्रीगुरुमुनि॥
मन्दहास वर दशन प्रकाशा। बोले धवली करि सबआशा॥
श्रीगोविन्द नाथ मुनि ज्ञानी। वत्स तासु विद्या तुम जानी॥
जो सबविधि तारक संसारा। प्रियपावन कमनीय उदारा॥
सतचितनिर्मल आनँद रूपा। जानहु जानन योग अनूपा॥
शान्त दान्त आतम अनुरक्ता। श्रद्धायुत अरु विषय विरक्ता॥
शिष्यवर्य्य तव सकल विनीता। भक्तिवान आचार पुनीता॥
तत्त्व ज्ञान चाहत मनमाहीं। तव सेवा रत हैं किमु नाहीं॥
कामादिक जे शत्रु भयङ्कर। जीते हैं तुमने अति दुस्तर॥
शान्त्यादिक सद्गुणमनभाये। कहहु तात मोसन तुम पाये॥
कियो योग अष्टांग सुहावा। भयो चित्त चेतन सुख छावा॥
दो० प्रेमसहित जब परमगुरु यहिविधि भाषे बयन।
भक्ति वेग तब शम्भु के भरिआये जल नयन॥
करिप्रणामअञ्जुलिशिररास्वी। बोले शंभु विनय बहु भाखी॥
जो जो पूज्य चरण प्रभुभाषा। पूजिहि सब हमरी अभिलाषा॥
दयादृष्टि देखहु जेहि पाहीं। तेहिको जग दुर्लभ कछुनाहीं॥
मूक होय पण्डित क्षणमाहीं। पापी के सब पाप नशाहीं॥
कामी शुभ कीरति बहुतेरी। जेहिदिशि देहु नाथ तुम हेरी॥
तवमहिमा अनन्त जगमाहीं। लव जाने अस नर कोउ नाहीं॥

व्यास सुवन शुकदेव मुनीशा। वन्दत जेहि सुर मुनि योगीशा॥
गृही त्यागि जब विपिन सिधाये। पिता नेहवश गे पछिआये॥
दो० सर्वातम के भाव को परिशीलन बहु कीन।
वृक्षरूप जिन पिताकहँ उचित सिखावन दीन॥
सो० जिनको नवहिं सुरेश सो प्रसन्न ह्वै आपु कहँ।
कियो तत्त्वउपदेश जिनकी गति कोउ जान नहिं॥
ऐसे श्रीगुरु ज्ञाननिधाना। पादयुगल तव कमल समाना॥
दैवयोग मोहिं दियो दिखाई। कहि न जाय मम भाग बड़ाई॥
सुनि शङ्कर बानी मुनिराया। गौड़पाद यह वचन सुनाया॥
तवगुणौघसुनिमोहिंअतिगाढ़ी। तव दर्शन उत्कण्ठा बाढ़ी॥
शान्तरूप देखन हित आयो। सुखी भयो दर्शन तव पायो॥
भाष्यादिक किये ग्रन्थ मनोहर। ममकारिका कमल रविसुन्दर॥
श्रीगोविन्दमुनिसन सुनिपायो। हर्षसहित तुमपहँ चलिआयो॥
कही परमगुरु जब यह बानी। विनय सहित शङ्कर विज्ञानी॥
निज कृत सकल भाष्य दर्शाई। निजमुख शङ्कर बांचि सुनाई॥
माण्डूक उपनिषद सुहावन। तासु कारिका जे अतिपावन॥
उभय भाष्य सुनि अतिहर्षाई। शङ्कर सों बोले मुनिराई॥
मम कारिका भाव दर्शावा। रुचिरभाष्यममतअतिभावा॥
दो० श्रवणजनित आनन्द मम उर बढ़ाव उत्साह।
मांगहु हम सन वर सुभग जो तुम्हरे मन चाह॥
तुम शुकदेव रूप भगवाना। हरिसूरति आनन्द निधाना॥
तव दर्शन दुर्लभ हम पावा। यह समान वरदान सुहावा॥
ह्वैहै और कहा मुनिराया। तदपि देहु यह मम मनभाया॥
ममचित चेतन गत नित होई। चहौं और वरदान न कोई॥
चिरंजीव मुनि ज्ञाननिधाना। कहि तथेति भे अन्तर्द्धाना॥
शिष्यन कहँ वृत्तान्त सुनाई। सुरसरितट सो रैनि बिताई॥
प्रातहि करि सब नित्य विधाना। शिष्यन युत शङ्कर भगवाना॥

ध्यान लालसा मुनिमन आई। तबहिं वार्त्ता यह सुनिपाई॥
जम्बूद्वीप सकल महि माहीं। और द्वीप तेहिसम कोउ नाहीं॥
तेहिमहँभरतखण्डअतिपावन। काश्मीर जहँ देश सुहावन॥
बसै जहाँ शारद सुखदाई। वागेश्वरि देवता सुहाई॥
चारिद्वार युत भवन मनोहर। जहँ सर्वज्ञ पीठ अतिसुन्दर॥
अस शारद वर भवन सुहावा। तहँ परन्तु कोउ जान न पावा॥
जो सर्वज्ञ होय तहँ जाई। तासु धाम यह रीति सुहाई॥
पूरब पश्चिम उत्तर द्वारा। तिहुं दिशि के सर्वज्ञ उदारा॥
खोले तीनिद्वार तिन जाई। निज सर्वज्ञ भाव दर्शाई॥
भा सर्वज्ञ न दक्षिण माहीं। तेहिते खुलो द्वार सो नाहीं॥
लोक बतकही सुनि मुनिराई। कहो देखिहैं हम तेहि जाई॥
ह्वैहै जो यह वचन प्रमाना। द्वार खोलिहौं करि अनुमाना॥
मन प्रसन्न प्रभु कीन्ह पयाना। काश्मीर पहुंचे भगवाना॥
दक्षिण में सर्वज्ञ न भयऊ। शेषद्वार खोलन नहिं गयऊ॥
यह प्रसिद्धि मेटन हित शङ्कर। हर्ष चले जहँ शारदमन्दिर॥
छं० जो वादिवृन्द गजेन्द्र दुर्मद गर्व संकर्षण महां।
श्रीमान शंकरसिंह अरु सर्वज्ञ आवत हैं इहां॥
वेदान्तकानन विहरु मित बहुवादि भय नहिं मन धरैं।
संन्यास दंष्ट्रायुध मनोहर द्वैतवन भक्षण करैं॥
गजकुम्भविगलितमदसुरभिवशभृङ्गमण्डलयुतलहै।
ऐसे गजनप्रतितासुबल मृगराजलघु पशु नहिं गहै॥
तैसे यतीश्वर सिंह मद रदयुक्त जन्तुन नहिं गनै।
अरुदृष्टिगोचर करत नहिं को तासु जगमहिमाभनै॥
दो० दूरि जाहु शठ वादिगज आवत यतिमृगराज।
असिध्वनिसबहिसुनावते सेवकयुतयतिराज॥
दक्षिण द्वारे जायके खोले तासु किवार।
गुरु प्रवेशकहँ कीन्ह मन जुरे वादिगणद्वार॥

रोकि दियो शंकर कहँ आई। सबवादिन यह गिरा सुनाई॥
जनिसंभ्रम अस मनमहँ धरहू। प्रथमहिं उचितहोयसोकरहू॥
सुनि बोले शंकर तिन पाहीं। हमहिं न कछुअविदितजगमाहीं॥
हम सब जानहिं लेहु परिच्छा। आवै सम्मुख जेहि की इच्छा॥
भले वचन मुनिराज बखाने। देय परीक्षा जाहु सयाने॥
तब कणाद मतधर तहँ आवा। जेहि के मतमें है बड़भावा॥
द्रव्य[1] कर्म[2] सामान्य[3] विशेखा[4]। गुण[5] समवाया[6] ऽभाव[7] सों लेखा॥
युग परमाणुयोग जब पायो। सूक्षमद्व्यणुकतबहिमुनिजायो॥
द्व्यणुकाश्रितअणुभाव जोहोई। सो उत्पत्ति काहिसन होई॥
तुम सर्वज्ञ जो बिन संदेहू। एक प्रश्न हमरी कहि देहू॥
नतरु सर्वविद्भाव न होई। वृथाशिष्यतवविरचहिंजोई॥
सुनि कणाद की प्रश्न सुहाई। बोले यहि प्रकार यतिराई॥

दो० दुइ परमाणुनिष्ठ जो युग संख्या तहँ होय।
द्व्यणुकमाहिं अणुभाव को कारण जानहु सोय॥

यह उत्तर जब शंकर दीन्हा। तासुवचन सबपूजन कीन्हा॥
जब कणाद लक्ष्मी क्षय पाई। और प्रश्न यह भई सुहाई॥
मुक्ति कणाद यथाविधि मानी। गौतममत विशेष विज्ञानी॥
जो जानहु तब कहौं विभागा। नतरु मान कछु कीजै त्यागा॥
गुण संबन्ध केर अति नाशा। व्योमसरिसतिथिकेरप्रकाशा॥
सो कणाद मुनि मुक्ति बताई। अक्षपाद मत कहहु सुनाई॥
जसिकणादतसि गौतम माना। ज्ञानानन्द विशेष तिन जाना॥
कणभुग सात पदारथ माने। अक्षपाद षोड़श उर आने॥

छं० गौतमप्रमाण[1] प्रमेय[2] संशय[3] अरु प्रयोजन[4] जानहीं।
दृष्टान्त[5] अरुसिद्धान्त[6] अवयव[7] तर्क[8] निर्णय[9] मानहीं॥
पुनिवाद[10] जल्प[11] वितण्ड[12] हेत्वा[13] भासछवि[14] पहिचानहीं।
अरु जाति[15] निग्रह[16] सहित षोड़श यहप्रकारब खानहीं॥

सो० ये षोड़श अस्थान तत्त्व यथावद् जानते।

---

* कणाद॥

पावै नर कल्यान यह गौतम को मत रुचिर ॥

दो० उपादान परमाणु कह ईशहि कहैं निमित्त।
यह दोनों सम जानहीं आनहु अपने चित्त ॥

यह प्रकार जब उत्तर दीन्हा। नैयायिक अभिनन्दन कीन्हा ॥
द्वारदेश तजि सो हठि गयऊ। तब कापिल यह पूछत भयऊ ॥
प्रकृती जो हम हेतु प्रवीना। सो स्वतन्त्र कै ईश अधीना ॥
कहो जो तुम सब मत के ज्ञानी। नाहिं तौ दुर्लभ दरशभवानी ॥
विश्वयोनि जो प्रकृति उदारा। है स्वतन्त्र सो सकल प्रकारा ॥
बहु स्वरूप भागिनि है जाई। त्रिगुणात्मक तुम्हरे मतगाई ॥
हमरे मत ईश्वर आधीना। तब आये बहुबोध प्रवीना ॥

दो० क्षणिक ज्ञानवादीप्रमुख जेहि मोहै बहु भेद।
है प्रसिद्ध यह भूमिपर ते सब खण्डहि वेद ॥

ऐ क्यों आय करत बहु नादा। प्रथमकरौ हम संग विवादा ॥
है बाह्य रथ उभय प्रकारा। तिनमें जो अन्तर निर्द्धारा ॥
पुनि विज्ञान वाद तव ज्ञाना। उभय भेद मुनिकरहु बखाना ॥
दुइ उत्तर हमरे दै देहू। देवि भवन तब गमन करेहू ॥
सौतान्त्रिक ऐसो उर आना। तेहि अनुमानगम्यसबजाना ॥
वैभासिक यह निजमत ठाना। तेहि प्रत्यक्षगम्य सब माना ॥
पहिलो लिङ्ग वेध सम जानै। अक्ष वेध दूसर मन आनै ॥
यही विशेष करौ तुम ध्याना। क्षणभंगुर दोनहुँ पहिंचाना ॥
ज्ञान भेद अब करहु बखाना। सुनु विज्ञानवादि जस माना ॥
प्रथमहि बहुत ज्ञान तेहिमाने। सकलज्ञानपुनिक्षणिकबखाने ॥

दो० एक ज्ञान वेदान्त महँ थिर मानो है सोय।
यह विशेष तुम धरहु मन पूछौ जो रुचि होय ॥

तबहिं दिगम्बर मत अनुसारी। गुरुवर सन यह गिरा उचारी ॥
जो सर्वज्ञ कहा बहु यतिवर। एक रहस्य हमारी सुन्दर ॥
जे हम जैन मती जग अहहीं। काय शब्द पहिलेक्याकहहीं ॥

थम जीव काया तिन मानी। दूसरि पुद्गल काय बखानी॥
र्म काय तीसरि पहिचानी। चौथी अधरम काया जानी॥
नि आकाश काय समुझाई। यह विधि पञ्चकाय दर्शाई॥
औरहु जो तुम्हरे मन होई। तुरतहिं पूछौ हमसन सोई॥
द बहिर्मुख वादि सयाने। यह विधि सुनि उत्तरबिलगाने॥
बोले जैमिनि मत अनुसारी। शब्द रूप तुम कहहु विचारी॥
द्रव्यरूप कै गुण करि माने। कहहु यथाविधिजैमिनिजाने॥
वर्णनित्य जैमिनि मुनि माने। ते सब व्यापक बहुरि बखाने॥
श्रवनन द्वार जाहिं सब जाने। तेहिते व्यापक मुनिअनुमाने॥
शब्दजाल सब जिनको रूपा। नित्य सो व्यापकद्रव्यअनूपा॥
असमानहिं जैमिनिअनुसारी। तेहिप्रतिगुरुवरगिरा उचारी॥

दो० सकलशास्त्रमहँ शंभु जब यह विधि उत्तर दीन।
मारग दीन्हों हर्षि उर तिन सब पूजन कीन॥

तब मन्दिर भीतर प्रभु गयऊ। भद्रासन तहँ देखत भयऊ॥
हाथ सनन्दन को गहि लीन्हा। तहँ चढ़िबे को प्रभुमनकीन्हा॥
तेहि छिन शारद मातु सयानी। व्योमगिरा बोली यह बानी॥
तुम सर्वज्ञ न कछु सन्देहा। प्रथमहि ते मोहिंनिश्चययेहा॥
नतरु चतुर्मुख रूप उदारा। महिमा जिनकीअकथअपारा॥
मण्डन अति प्रसिद्ध संसारा। सो किमि होतोशिष्यतुम्हारा॥
मम पीठाऽऽरोहण यति केतू। एक सर्वविद्रावन हेतू॥
जोपरि शुद्ध होय मुनिनायक। सो मम पीढ़ारोहण लायक॥
प्रथम विचार करौ मनमाहीं। है तव शुद्धभाव कै नाहीं॥
यतिवर अससाहस जनिकीजै। अपनचरितहमसनसुनिलीजै॥
यती धर्मरत ह्वै तुम नाना। कामिनिभोगसरससुखजाना॥
मदन कला चातुर्य्य सुहाई। सब प्रकार शंकर तुम पाई॥
ऐसे पद आरोहण योगा। रहे कवनविधि करिबहुभोगा॥
जो सर्वज्ञ विमल पुनि होई। यह सिंहासन बैठे सोई॥

दो० यह शरीर सो मातु मैं कबहुँ न किल्बिष कीन ।
उपालम्भ यह वृथा तुम बिनुसमुझे मोहिंदीन ॥
और देह से भयो जो देवि कर्म्म अन्याय ।
तेहिसन लिप्त न देह यह लोक वेद को न्याय ॥

शारद यह उत्तर जब पायो । पुनिकछुनाहिं विकल्पदर्शायो ॥
तब सर्वज्ञाऽऽसन यति राजा । बहु आनँदयुत जाय विराजा ॥
शारद कीन्हों बहु सतकारा । तथा तहां जे विबुध उदारा ॥
पूजे याज्ञवल्क्य जेहि भांती । गार्गिकहोलादिक द्विजपांती ॥

अथ शारदापीठ मासोत्कर्षः ॥

वाद बढे आनँद समुदाया । आये जहँ प्रतिवादिनिकाया ॥
मण्डनादि जिनकहँ जगजाना । तिनसन वाद कीन भगवाना ॥
अति दुर्वार तर्क जिनकेरी । अस्थापन जहँ भई घनेरी ॥
तिनकर तिरस्कार तुम कीन्हा । निजप्रागल्भ्य पराभवदीन्हा ॥
सबदिशि तव पुनीत यशछावा । अस सर्वज्ञ भाव तुम पावा ॥
तवगुणपावनजगसुखदायक । यतिवरतुमसबविधिसबलायक ॥
अतिशय तव प्रभाव संयोगा । यह सिंहासन बैठन योगा ॥

छं० यहिभांति अतिगंभीरध्वनिसन प्रकट जबशारदकह्यो ।
निर्मेघिशलाघामनोहरसुनिसकलजनसुखअतिलह्यो ॥
जगमातुध्वनिजनघोषयुतडिमडिमसारिसध्वनिराजही ।
यतिराज शारदपीठ सुन्दर वास अधिक विराजही ॥

दो० अतिउद्धत जे वादिगण तिनसों भयो जो वाद ।
विजय दुंदुभी करभयो मानहुँ धिमधिम नाद ॥

अक्षपाद मुनि कथा सुहाई । लीन भई अब कबहुँ न जाई ॥
कापिल गाथा भई प्रलीना । भास्करोक्ति भै भग्नमलीना ॥
भट्टपाद मुनि केर प्रवादा । प्रकट न कहँसुनिधिमधिमनादा ॥
पातञ्जल काणाद बनाये । द्वैमत असत गिरा कहवाये ॥
सबपाखण्डरूप अतिशयतम । तासुविनाशकगुरुसवितासम ॥

शारदपीठ वास सुनि नादा। अब कह है काणाद प्रवादा॥
कहुँ नहिं कपिलवचन संवादा। अक्षपाद कर कहुँ न प्रवादा॥
रहीं न कतहुं योग की कन्था। तथा भास्कर*गुरु की सन्था॥
भट्टप्रघट्टक कहुँ न दिखाहीं। द्वैताद्वैत कथा परिछाहीं॥
क्षपणकविवृती नहिं दर्शाई। गयो सकल पाखंड नशाई॥
जब भाषो शंकर मन भावा। शारदपीठ निवास सुहावा॥
सुरपति प्रेरित देवन आई। तुरतहिं बहु दुंदुभी बजाई॥
सुर वीथी घन मण्डल छाये। हर्षितगर्जहिं अतिसुखपाये॥
सिन्धु गँभीर महाध्वनि होई। सबदिशिव्यापिरहासुखसोई॥
†शची कंवरके लायक सुंदर। कल्प वृक्ष के पुष्प मनोहर॥
कछु दिन लौं देवन हर्षाई। गुरुशिरपरप्रतिदिनझरिलाई॥
अतिप्रसन्न तहँ कीन निवासा। निजमतकर उत्कर्ष प्रकासा॥
तीन काल शंकर मनमाहीं। मान बड़ाई की रुचि नाहीं॥
पुनि सुरेश कहँ शम्भु बुलावा। ऋष्यशृंगमठ माहिं पठावा॥
ऐसेहि बहुदिशि शिष्य पठाये। तिन तिन भवननमहँ बैठाये॥

सो॰ कछु सेवक लै साथ बदरी वन शंकर गये।
श्रीयतिवर मुनिनाथ मुदितरहेकछुकालतहँ॥

हारिगये त्यागे सब दर्शन। ऐसे जे केते योगीजन॥
तिन्हहिं कृपाकरि भाष्यपढ़ावैं। विगत भेद मारग दर्शावैं॥
उडुपतिप्रसरितकिरनसमाना। यशपावन जिनकोजगजाना॥
लोगन आतम ज्ञान सिखावत। सदय हृदयवर विबुधरमावत॥
ऐसे सुख सो काल बितावत। यतीराज शोभा अति पावत॥
कलिमलनाशन चरितउदारा। करतरुचिर शंकर अवतारा॥
निर्मल कीरति राशि बढ़ाई। यहिविधिबत्तिसवर्ष बिताई॥
जोकलिमलनाशकअतिपावन। मुक्तिकेर जनु मोल सुहावन॥
विबुध मनोहर भूषण रूपा। कीन्हे सुन्दर भाष्य अनूपा॥
कुमतिदण्डवतिअहमितिबाढ़ी। खण्डी बुध लोगनकी गाढ़ी॥

---

* प्रभाकर † इन्द्राणीकेशपाश॥